उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

मानविकी विद्याशाखा

तुलनात्मक एवं भारतीय साहित्य (भाग एक)

तृतीय सेमेस्टर 604

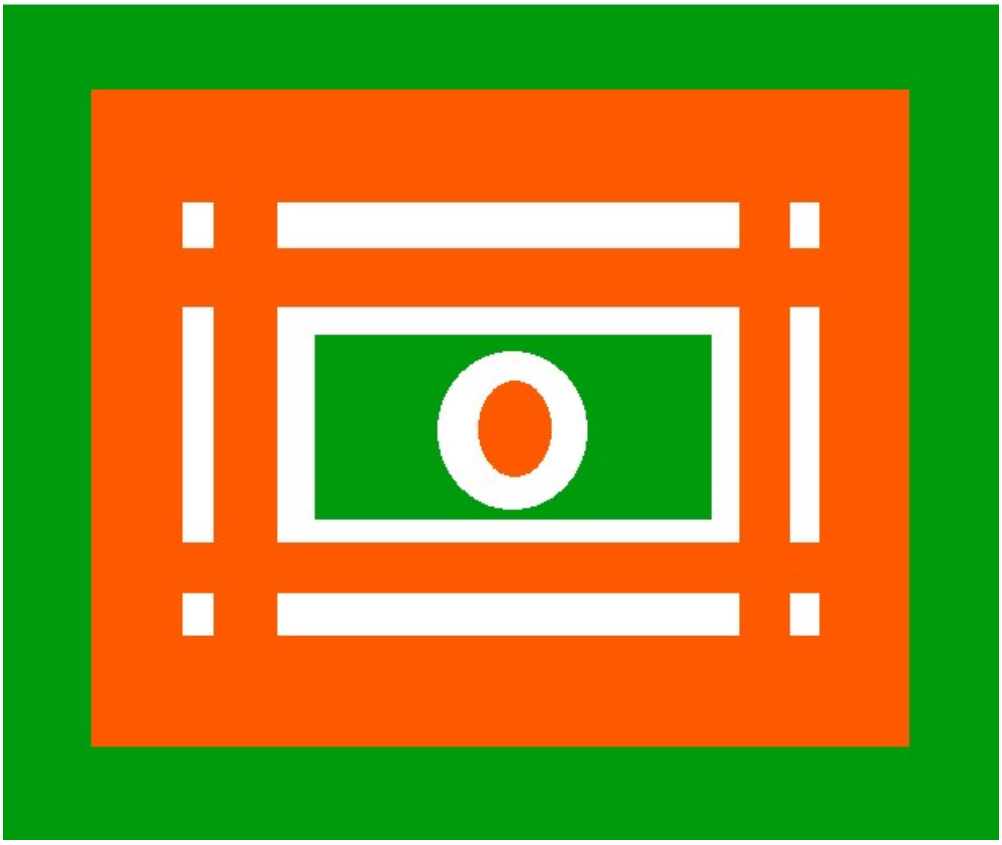

विशेषज्ञ समिति

प्रो. एच.पी. शुक्ल
निदेशक, मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो. सत्यकाम
हिन्दी विभाग
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो.आर.सी.शर्मा
हिन्दी विभाग
अलीगढ़ विश्वविद्यालय,अलीगढ़

डॉ. राजेन्द्र कैड़ा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ. शशांक शुक्ला
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम समन्वयक, संयोजन एवं संपादन

डॉ. राजेन्द्र कैड़ा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ. शशांक शुक्ला
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

तुलनात्मक एवं भारतीय साहित्य MAHL-**6**04

इकाई लेखक	**इकाई संख्या**
डॉ. शशांक शुक्ला असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल	1,2,3,4,5
डा. सुषमा देवी हिन्दी विभाग, विवेकवर्धिनी महाविद्यालय जामबाग हैदराबाद	6,7

कापीराइट@उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

संस्करण: 2022
सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशकः उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी ,नैनीताल -263139
मुद्रक : प्रीमियर प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी ,नैनीताल -263139

ISBN - 978-93-84632-74-8

तृतीय सेमेस्टर 604

खण्ड 1 – तुलनात्मक साहित्य	पृष्ठ संख्या
इकाई 1 तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा	1-9
इकाई 2 तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियाँ	10-18
खण्ड 2 – भारतीय साहित्य की अवधारणा	**पृष्ठ संख्या**
इकाई 3 भारतीय साहित्य की अवधारणा	19-26
इकाई 4 भारतीय साहित्य की व्यापकता	27-38
इकाई 5 भारतीय साहित्य का इतिहास	39-52
खण्ड 3 – भारतीय साहित्य : प्रायोगिक उपक्रम	**पृष्ठ संख्या**
इकाई 6 तेलुगु साहित्य का इतिहास एवं परिचय (1)	53-88
इकाई 7 तेलुगु साहित्य का इतिहास एवं परिचय (2)	89-115

इकाई 1 तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 पाठ का उद्देश्य
1.3 तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा
1.3.1 तुलनात्मक साहित्य: परिभाषा
1.3.2 तुलनात्मक साहित्य: स्वरूप
1.4 तुलनात्मक साहित्य का इतिहास
1.5 तुलनात्मक साहित्य की विशेषता / महत्त्व
1.6 तुलनात्मक साहित्य: सांस्कृतिक कार्य
1.7 सारांश
1.8 शब्दावली
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

तुलनात्मक पद्धति साहित्य और अकादमिक जगत की बहुप्रचलित पद्धति है। तुलनात्मक पद्धति के कारण साहित्य के अंतर्जगत और साहित्य जगत दोनों का विस्तार होता है। तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा पर लिखते हुए डॉ. इन्द्रनाथ चौधुरी ने लिखा है, तुलनात्मक साहित्य अंग्रेजी के 'कम्पैरेटिव लिटरेचर' का हिन्दी अनुवाद है। एक स्वतंत्र विद्याशाखा के रूप में विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में इसे अध्ययन- अध्यापन के कार्य को आजकल विशेष महत्त्व दिया जा रहा है। तुलनात्मक साहित्य का सर्वप्रथम प्रयोग मैथ्यम ऑर्नल्ड ने सन् 1848 में अपने एक पत्र में सबसे पहले किया था। वस्तुतः तुलनात्मक साहित्य में दो देश, दो भाषा या दो रचनाकारों की कृतियों को एक दूसरे के सापेक्ष रखकर देखाजाता है। तुलनात्मक पद्धति का मूल उद्देश्य सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में एक दूसरे को रखकर नई अर्थवत्ता की तलाश करना होता है। इस ढंग से तुलनात्मक पद्धति साधन है, साध्य नहीं। हैनरी एच.एच. रेमार्क ने भी तुलनात्मक साहित्य की विशेष ताओं के स्पष्ट किया है। उनके अनुसार साहित्य की विशेष तत्त्वों को स्पष्ट किया है। उनके अनुसार एकक राष्ट्रों की परिधि से परे दूसरे राष्ट्रों के साहित्य के साथ तुलनात्मक अध्ययन है तथा यह अध्ययन कला, इतिहास, समाज विज्ञान, धर्मशास्त्र आदि ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के आपसी संबंधों का ज्ञान है। रेमार्क ने दो राष्ट्र के संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य की उपयोगिता निर्धारित की है। किन्तु यह एक राष्ट्र, दो भाषा या एक ही भाषा के दो कवियों/लेखकों पर भी लागू हो सकती है। व्यापक रूप से दो विधाओं की कृतियों के वर्गीकरण को भी इसमें समेट लिया जाता है।

तुलनात्मक साहित्य के इतिहास के संदर्भ में यदि हम बात करें तो एक अनुशासन के रूप में इसका विकास पश्चिम में, आधुनिक काल में हुआ। हाँलाकि यह साहित्यिक प्रवृत्ति प्राचीन काल से ही मिलनी शुरू हो जाती है।

1.2 पाठ का उद्देश्य

'तुलनात्मक एवं भारतीय साहित्य' संबंधी पाठ्य पुस्तक की यह प्रथम इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप जानेंगे कि-

- तुलनात्मक शब्द के मूल अर्थ से परिचित हो सकेंगे।
- तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
- तुलनात्मक साहित्य पर विभिन्न विद्वानों के मतों को जान सकेंगे।
- तुलनात्मक साहित्य के इतिहास का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- तुलनात्मक साहित्य की विशेष ता से परिचित हो सकेंगे।
- तुलनात्मक साहित्य और संस्कृति के अंतर्सम्बन्ध को समझ सकेंगे।

1.3 तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा

1.3.1 तुलनात्मक साहित्यः परिभाषा

ज्ञान के अन्य अनुशासनों के समान तुलनात्मक साहित्य की भी क्या कोई मुकम्मल परिभाषा दी जा सकती है? हर व्यक्ति, अध्येता अपनी दृष्टि को परिभाषा में जोड़ देता है, इसलिए हर परिभाषाएँ भिन्न-भिन्न स्वरूप को प्राप्त हो जाती है। यहाँ हम भारतीय और पाश्चात्य कुछ प्रमुख विद्वानों की परिभाषाओं के संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य को समझने का प्रयास करेंगें। क्लाइव स्कॉट के अनुसार- '' तुलनात्मक साहित्य में विभिन्न भाषाओं में लिखित साहित्यों अथवा उनके संक्षिप्त घटकों की साहित्यिक तुलना होती है और यही उसकी आधार तत्व है। इस परिभाषा के अनुसार साहित्यिक प्रतिमानों के आधार पर साहित्य की तुलना की जाती है। रेमाक ने तुलनात्मकता को वह सांश्लेषिक दृष्टि बताया है जिसके द्वारा भौगोलिक एवं जातीय स्तर पर साहित्य का अनुसंधानात्मक विश्लेषण संभव हो पाता है। इस परिभाषा में दो विभिन्न संस्कृतियों के स्तर पर एक संस्कृति दूसरे से किस प्रकार भिन्न है और उसके कारण क्या हैं। इसी प्रकार एक परिभाषा प्रो. लेन कपूर की है। उनके अनुसार तुलनात्मक साहित्य, साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन की पंक्ति अभिव्यक्ति है। यह परिभाषा भी अपर्याप्त व अधूरी है, क्योंकि इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि तुलना किस रूप में और किनके बीच ? साहित्य की तुलना के मापदण्ड क्या होंगे? यह भी स्पष्ट नहीं है। हाँलाकि एक परिभाषा में यह संभव भी नहीं है। सैद्धान्तिक रूप से तुलनात्मक साहित्य के कुछ मापदण्ड है। जैसे एक ही भाषा में लिखित दो कवियों/लेखकों की तुलना , एक ही संस्कृति की दो भाषाओं के साहित्य की तुलना या दो संस्कृतियों की दो भाषाओं या साहित्य की तुलना ..... इसमें दूसरी व तीसरी स्थिति ही तुलनात्मक साहित्य के लिए उपयोगी है। डॉ. इन्द्रनाथ चौधुरी ने अपनी पुस्तक 'तुलनात्मक साहित्य' भारतीय परिप्रेक्ष' में उलरिच वाइनस्टाइन की पुस्तक का संदर्भ किया है, जिसमें तुलनात्मक साहित्य की परिभाषाओं को दो वर्गों में बाँटा गया है। (क) वर्ग में पॉल वा टिगहैम, ज्याँ-मारि कारे तथा मारिओस फ्रांस्वास गुईयार्द जैसे विद्वान हैं। इस वर्ग की परिभाषाओं के अनुसार तुलनात्मक साहित्य को सौन्दर्यमूलक प्रतिमानों के आधार पर नहीं बल्कि ऐतिहासिक अनुशासन के रूप में देखने का प्रयास किया गया है। (ख) वर्ग में रेने वेलेक, रेमाक, ऑस्टिन वारेन तथा प्रावर जैसे विद्वान हैं । जिन्होंने तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन को ऐतिहासिक अनुशासनों से इतर काव्यशास्त्रीय या सौन्दर्यशास्त्रीय प्रतिमानों के आधार पर देखने की पहल की है।

1.3.2 तुलनात्मक साहित्य: स्वरूप

तुलनात्मक साहित्य से संबंधि परिभाषाओं का आपे अध्ययन किया। परिभाषाओं की परम्परा के क्रम में आपने देखा कि तुलनात्मक साहित्य में विभिन्न भाषा एंव संस्कृति को ऐतिहासिक एवं साहित्यिक प्रतिमानों के आधार पर जाँचा जाता है और उस बहाने दो भाषा - संस्कृति का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलनात्मक साहित्य की निम्न स्थितियाँ प्रकट होती है।-

तुलनात्मक साहित्य

1. एक ही भाषा के अंतर्गत तुलनात्मक अध्ययन
2. दो भाषा के अंतर्गत तुलनात्मक अध्ययन(एक संस्कृति)
3. दो भाषा के अंतर्गत तुलनात्मक अध्ययन (दो संस्कृति एक भाषा परिवार)
4. दो भाषा के अंतर्गत तुलनात्मक अध्ययन (दो संस्कृति दो भाषा परिवार)

इसी प्रकार तुलनात्मक साहित्य की परिभाषाओं को दो वर्गो में रिक्त विभक्त किया गया है-

तुलनात्मक साहित्य

(क)	(ख)
ऐतिहासिक अनुशासन	सौन्दर्यशास्त्रीय अनुशासन
(पॉल वां टिगहैम, ज्याँ-मारि कारे,	(रेने वेलेक, रेमाक,
मारिओस फ्रांस्वास गुइयार्द)	ऑस्टिन वारेन, प्रावर)

तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा और स्वरूप पर भ्रम इस कारण भी है क्योंकि एक अनुशासन के रूप में यह अपेक्षाकृत नया है, और स्पष्ट रूप से इस पर कोई स्पष्ट राय नहीं बन पाई है। मोटे रूप में साहित्यिक बिन्दु, समस्या को वैज्ञानिक और विश्लेषणत्मक ढंग से विश्लेषित किया जाता है। रेविनाख ने तुलनात्मक साहित्य पर टिप्पणी करते हुए लिखा है- विभिन्न साहित्यों के अन्यान्य प्रभाव से युक्त शोध ही तुलनात्मक साहित्य है। यह क्षेत्रीय भाषाओं से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय भाषा तक अपना स्वरूप ग्रहण कर चुका है। डॉ. इन्द्रनाथ चौथुरी ने तुलनात्मक साहित्य के स्वरूप पर विचार करते हुए इसके प्रमुख क्षेत्र निर्धारित किए हैं-

1. काव्यशास्त्र या साहित्य में काव्यशास्त्रीय सौन्दर्यमूलक मूल्यों का प्रयोग और उनका कलापरक विश्लेषण।
2. इसमें साहित्यिक आन्दोलनों का अध्ययचन एवं उनकी मनोवैज्ञानिक, बौद्धिक एवं शैली-वैज्ञानिक प्रवृत्ति यों का अध्ययन .....।
3. साहित्य में अभिव्यक्त व्यक्तित्व या अर्मूत विचारो के विभिन्न रूपान्तरों की विभिन्न दृष्टियों से प्रयोग एवं विश्लेषण.....।
4. काव्य रूपों का अध्ययन
5. साहित्यिक सम्बन्धों का अध्ययन।

अभ्यास प्रश्न 1

क- सही / गलत में उत्तर दीजिए।

1. तुलनात्मक साहित्य अंग्रेजी के 'कम्पैरटिव लिटरेचर' का हिन्दी अनुवाद है।
2. तुलनात्मक साहित्य का सर्वप्रथम प्रयोग मैथ्यू ऑर्नल्ड ने किया।
3. तुलनात्मक साहित्य का मूल उद्देश्य दो रचनाकारों की तुलना करना है।
4. क्लाइव स्कॉट के अनुसार तुलनात्मक साहित्य में विभिन्न भाषाओं में लिखित साहित्यों अथवा उनके संक्षिप्त घटकों की तुलना होती है।

5. तुलनात्मक साहित्य भारतीय परिप्रेक्ष्य' पुस्तक के लेखक इन्द्रनाथ चौधुरी है।

ख - टिप्पणी लिखिए।

1. तुलनात्मक साहित्य की परिभाषा
2. तुलनात्मक साहित्य के क्षेत्र।

1.4 तुलनात्मक साहित्य का इतिहास

तुलनात्मक साहित्य के इतिहास के प्रश्न पर यह समझना उचित होगा कि सभी देशों में इसका विकास अलग-अलग समय तथा भिन्न-भिन्न परिस्थिति में हुआ है। यहाँ हम प्रमुख रूप से भारतीय साहित्य के संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य के इतिहास की रूपरेखा प्रस्तुत करने का प्रयास करेंगे।

तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा और विश्व साहित्य की अपधारणा का निकट का सम्बन्ध है। इसे इस प्रकार भी समझ सकते हैं कि गेटे के 'वर्ल्ड लिटरेचर' की परिकल्पना के बाद ही तुलनात्मक साहित्य और विश्व साहित्य में भेद है। रेमाक ने दोनों अनुशासनों का भेद स्पष्ट करते हुए लिखा है- तुलनात्मक साहित्य के लिए किसी भी साहित्यिक कृति, लेखक, प्रवृत्ति या थीम अथवा ज्ञान के दूसरे क्षेत्रों के साथ वास्तविक तुलना आवश्यक है मगर इसके विपरीत विश्व साहित्य के अंतर्गत शेक्सपीयर, बाल्जॉक, रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे लेखकों की कृतियों को शामिल कर लेते है। कहने का अर्थ यह है कि विश्व साहित्य और तुलनात्मक साहित्य में साम्यता होते हुए भी दोनो में पर्याप्त अन्तर है। हांलाकि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 1907 में तुलनात्मक साहित्य के लिए 'विश्व साहित्य' शब्द का ही प्रयोग किया था। उनके तर्क के अनुसार - प्रत्येक कृति को उसकी संपूर्ण इकाई में देखना चाहिए क्योंकि संपूर्ण इकाई या मनुष्य की शाश्वत सृजनशीलता की पहचान विश्व साहित्य के द्वारा ही हो सकती है।

जहाँ तक भारतीय तुलनात्मक साहित्य का प्रश्न है, उसक विकास 17वी-18वीं सदी में विशेष तौर पर हुआ। मैक्स मूलर व विलियम जोन्स जैसे विद्वानों ने भारतीय साहित्य का अनुवाद योरोपीय भाषाओं में किया, जिससे तुलनात्मक साहित्य की प्रवृत्ति को बल मिला। सन् 1753 में राबर्ट लाउथ ने 'ऑक्सफोर्ड लेक्चर्स ऑफ पोयट्री' में हिब्रू कविता के साथ यूनानी साहित्य की प्रवृत्ति को बल मिला। 19 वीं शताब्दी तक तुलनात्मक साहित्य की प्रवृत्ति को बल मिलने लगा था। माइकल मधुसूदन दत्त ने वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, होमर, वर्जिल, दांते, टेसो, मिल्टन.... जैसे साहित्यकारों को एक -दूसरे के समानान्तर रख कर देखा है। अपने एक पत्र में उन्होंने लिखा था कि यूरोपीय नाटक यथार्थ , उदात्त आवेग तथा वीरता को लेकर चलते हैं तो भारतीय नाटक प्रेम और कोमलता लिए हुए हैं.....। यह अपने ढंग का पहला भारतीय प्रयास था। हांलाकि माइकेल ने इसे कोई सैद्धान्तिक स्वरूप नहीं प्रदान किया, लेकिन परम्परा की दृष्टि से उन्होंने एक प्रवर्तन अवश्य किया है। इसी क्रम में 1773 ई. में बंकिम चन्द्र चटर्जी ने 'शकुंतला , मिरांडा तथा डेसडोमना' शीर्षक एक निबंध लिखा। बंकिम ने एक ओर जहाँ

शेक्सपियर व कालिदास की तुलना की वहीं दूसरी ओर वायरन, शैली की कविताओं की तुलना वैदिक गीतों से.....। बंकिमचन्द्र चटर्जी ने इसी क्रम में भवभूति और शेक्सपियर की तथा कुमारसंभव तथा पैराडाइज लॉस्ट की तुलना की। इसी क्रम में आगे चलकर वारेन हैस्टिंग्स ने गीता व ईसाई मुक्ति भावना की तुलना की। उसने गीता व इलियड , ओडेसी तथा पैराडाइज लॉस्ट की भी तुलना की..... इसी संदर्भ में राबर्ट काल्डवेल तथा जे.बीम्स ने पुस्तक लिखकर इस संदर्भ को व्यवस्थित करने का कार्य किया। 19वीं शताब्दी के प्रमुख कार्यों को हम इस प्रकार देख सकते हैं-

- चार्ल्स ई. ग्रोवर - 'द फोक सौंग्स ऑफ सदर्न इंडिया (1871) तमिल साहित्य के साथ कन्नड़, तेलगु, मलयालम तथा कूर्ग भाषाओं के गीतों का तुलनात्मक अध्ययन।
- जी0 यू0 पोप कुरल के अनुवाद - तमिल कविता व यूनानी कविता का अंतर
- प्रियरंजन सेन - 'इन्फ्लूएंस आफ वेस्टर्न लिटरेचर इन द डेवलपमेंट ऑफ बेंगाली नॉवेल (1932)

- आलब्रेस बेवर - 'द हिस्ट्री ऑफ इंडियन लिटरेचर (1852) - संस्कृत नाटक /यूनानी नाटक की तुलना
- मैक्समूलर - 'ए हिस्ट्री ऑफ एन्शेंट संस्कृत लिटरेचर' (1859) - संस्कृत/युनानी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन
- आलबर्ट स्वाइट्सर - 'इंडियन थॉट एंड इट्स डेवलपमेंट'- भारतीय आर्य/ईरानी-यूरोपीय संस्कृति का तुलनात्मक अध्ययन
- ए0बी.कीथ -'द संस्कृत ड्रामा' (1924) - कालिदास व संस्कृत नाटकारों की तुलना यूरोपीय नाटक एवं नाटककारों से

1.5 तुलनात्मक साहित्य की विशेषता/महत्त्व

तुलनात्मक साहित्य के महत्त्व को आधुनिक युग में सभी देशों में स्वीकार कर लिया गया है। क्योंकि तुलनात्मक साहित्य आधुनिक सभ्यता का प्रमुख विमर्श बन गया है। तुलनात्मक साहित्य या तुलनात्मक पद्धति आज की एक प्रमुख साहित्यिक 'पद्धति है, जिसके माध्यम से दो भाषा- संस्कृति की अंतर्तिहित विशेषाताओं को एक-दूसरे की सापेक्षता में रखकर विश्लेषित किया जाता है। इस प्रकार इस पद्धति के माध्यम से साहित्यिक कृतियों को परखने के सूत्र तलाशे जाते हैं। तुलनात्मक साहित्य की विशेषाता से पूर्व हमें यह समझना भी आवश्यक है कि तुलनात्मक साहित्य के लेखक के लिए अनिवार्य धर्म क्या है? आजकल व्यावसायीकरण के दबाब में प्रायः लेखक तुलनात्मक आलोचना में प्रवृत्त हो जाते हैं.....इस प्रकार से यह तुलनात्मक साहित्य की गंभीरता को देखते हुए बहुत हल्का प्रयास ही का जा सकता है। तुलना

करने के लिए लेखक को केवल दो भाषा ही आनी अनिवार्य नहीं है, वरन् उन भाषाओं के व्याकरण, अर्थ संस्कार व उस क्षेत्र की संस्कृति को जानना भी आवश्यक है।

तुलनात्मक साहित्य का महत्त्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। राजनीतिक विस्तार के लिये अनुवाद कार्य को छोड़ दिया जाये तो भी तुनात्मक साहित्य का महत्त्व कई दृष्टियों से महत्त्व पूर्ण है। तुलनात्मक साहित्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य, साहित्य के विस्तार की दृष्टि से है। एक साहित्य एक विशेष प्रकार की ऊर्जा व लोकरंग से निर्मित होता है। दूसरे देश के साहित्य का परिवेश उस पर विचारात्मक एवं संवेदनागत प्रभाव डालता है..... इस ढंग से तुलनात्मक साहित्य का प्राथमिक कार्य साहित्यिक विस्तार का परिवेश निर्मित करना है। तुलनात्मक साहित्य के माध्यम से साहित्यिक प्रतिमानों के विस्तार को गति मिलती है। आज हम यूनानी साहित्य व अरस्तु के नाट्य विवेचन के बाद नाटक की विशेषताओं के नये प्रतिमान आ चुके हैं। साहित्य का एक महत्त्व पूर्ण कार्य चूँकि सम्यता का प्रसार करना है, तो तुलनात्मक साहित्य उसमें हमारी सहायता करता है। सभ्यता विस्तार के बाद तुलनात्मक साहित्य का सर्वाधिक महत्पूर्ण कार्य सांस्कृतिक विस्तार करना है। दो भाषा, दो परिवेश, दो प्रकार का साहित्य अपने संस्कृति में वैविध्य लिये हुए होते हैं, अतः दोनों को उनकी सापेक्षता में ग्रहण कर एक दूसरे को समझने की दृष्टि का विस्तार किया जाता है।

1.6 तुलनात्मक कार्य : सांस्कृतिक कर्म

तुलनात्मक साहित्य के महत्त्व व लोकप्रियता का सर्वाधिक महत्त्व पूर्ण कारण मनुष्य के सांस्कृतिक विस्तार की आकांक्षा है। दिन-प्रतिदिन हमारा भौतिक विस्तार होता जा रहा है..... मनुष्य -मनुष्य के निकट आता जा रहा है.... लेकिन क्रमश: सांस्कृतिक अवमूल्यन का प्रश्न भी तीव्र होता जा रहा है। सभ्यता के प्रसार ने सांस्कृतिक संकट को नये सिरे से खडा कर दिया है, फलतः सांस्कृतिक समृद्धि व विस्तार के लिए सांस्कृतिक कर्म के रूप में तुलनात्मक साहित्य की महत्ता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

अभ्यास प्रश्न 2

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. तुलनात्मक व विश्वसाहित्य में .....ने भेद किया है। (रेमाक/गेटे/मैक्समूलर)
2. रवीन्द्रनाथ टैगौर ने .....ई. में विश्व साहित्य शब्द का प्रयोग किया। (1910/1907/1905)।
3. 'ऑक्फोर्ड लेक्चर्स ऑफ पोयट्री' लेखक .....हैं। (राबर्ट लाउथ/गेटे मैक्षमूलर)
4. भारतीय साहित्य में सर्वप्रथम ..... ने तलुनात्मक साहित्य से संबंधित (बंकिमचन्द्र/रवीन्द्रनाथ/ प्रेमचन्द)।
5. 'द फोक सौंग्स ऑफ सदर्न ईडिया' के लेखक .....है। (प्रियरंजन सेन/चार्ल्स ई. ग्रोवर/गेटे)।

1.7 सारांश

यह प्रथम इकाई - तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा पर केन्द्रित है। इस इकाई के अध्ययन से अपने जाना कि -

- तुलनात्मक साहित्य अंग्रेजी के कम्पेरेटिव लिटरेचर' का हिन्दी अनुवाद है।
- तुलनात्मक साहित्य पद का सबसे पहला प्रयोग मैथ्यू ऑर्नल्ड ने सन् 1848 में लिखे एक पत्र में किया था।
- तुलनात्मक पद्धति का मूल उद्देश्य सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में दो भिन्न भाषाओं की कृतियों को रखकर नई अर्थवत्ता की तलाश करना होता है।
- तुलनात्मक साहित्य के कई क्षेत्र हैं, जैसे एक भाषा के अंतर्गत, दो भाषा परिवार के अंतर्गत दो भाषा एवं दो भाषा परिवार के अंतर्गत दो भाषाओं का अध्ययन।
- तुलनात्मक साहित्य एवं विश्व साहित्य का निकट का सम्बन्ध है। विश्व साहित्य पद का सर्वप्रथम प्रयोग गेटे ने किया था।

1.8 शब्दावली

- कम्पैरेटिव लिटरेचर - तुलनात्मक साहित्य का अंग्रजी पर्याय।
- अनुशासन - व्यवस्थित तरीका, विशेष प्रकार की व्यवस्था।
- मुक़म्मल - पूरी, पूर्ण
- घटक - अवयव, तत्व
- प्रतिमान - पैमान, आदर्श
- सांश्लेषिक दृष्टि - विश्लेश णात्मक दृष्टि, जो परस्पर तुलनात्मक हो।
- भाषा परिवरि - भाषा वैज्ञानिक तत्वों के आधार पर कई भाषाओं का एक समूह ।
- भाषा परिवरि - कला एवं साहित्य क सौन्दर्य की वृद्धि के कारणों की खोज करने वाला शास्त्र।
- काव्यशास्त्र - साहित्य का व्याकरण, अनुशासन
- वर्ल्ड लिटरेचर - विश्व साहित्य।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

(क) 1. सत्य

3. सत्य

4. असत्य
5. सत्य
6. सत्य

अभ्यास प्रश्न 2

1. रेमाक
2. 1907
3. राबर्ट लाउथ
4. बंकिमचन्द्र
5. चार्ल्स ई. ग्रोवर

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. तुलनात्मक साहित्य भारतीय परिपेक्ष्य-चौधुरी, इन्द्रनाथ, वाणी प्रकाशन,द्वितीय संस्करण 2010
2. तुलनात्मक अध्ययन (भारतीय भाषाएँ और साहित्य) - (सं) राजूरकर, भ.ह, बोरा, राजमल

1.11 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएँ - (सं) राजूरकर, भ.ह. एवं बोरा, राजमल, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2013

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा पर निबंध लिखिए।
2. तुलनात्मक साहित्य के इतिहास की रूपरेखा का वर्णन कीजिए।

इकाई 2 तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियां

इकाई की रूप रेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियाँ
2.3.1 तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया
2.3.2 सामग्री विश्लेषण प्रक्रिया
2.4 तुलनात्मक अध्ययन एवं भारतीय साहित्य
2.5 तुलनात्मक अध्ययन और अनुवाद का प्रश्न
2.6 सारांश
2.7 शब्दावली
2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 सहायक / उपयोग पाठ्य सामग्री
2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई 'तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा' का आपने अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के माध्यम से आपने तुलनात्मक साहित्य की पृष्ठभूमि एवं अवधारणा को समझ लिया है। इस इकाई में हम तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियाँ एवं सामग्री विश्लेषण की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करेंगे।

तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियों में तुलना करने की पद्धति व प्रक्रिया का विशेष रूप से अध्ययन किया जाता है। तुलनात्मक अध्ययन पद्धति को आज गंभीरता से लिया जाने लगा है, इसे अनुसंधान के समकक्ष रखकर देखने की भी परिपाटी प्रचलित होती जा रही है। एक स्वतंत्र आलोचना प्रविधि के रूप में भी इसका विस्तार हुआ है। फलतः तुलनात्मक पद्धति के कई 'स्कूल' प्रचलित हो गये हैं। जर्मन, फ्रांसीसी, अमेरिकी..... इत्यादि। अतः तुलनात्मक पद्धति ने वैश्विक स्वरूप ग्रहण कर लिया है। वैश्विक स्वरूप के ग्रहण के प्रश्न के संदर्भ में ही तुलनात्मक साहित्य व अनुवाद का प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण है। भारत जैसे बहुभाषी देश में जहाँ अलग-अलग भाषा परिवार की भाषाओं का अस्तित्व है, वहाँ भी अनुवाद कार्य का महत्त्व है, और वैश्विक परिदृश्य में इसकी उपयोगिता से तो हम परिचित ही है।

2.2 पाठ का उद्देश्य

एम0ए0एच0एल0-204 पाठ्य पुस्तक की यह दूसरी इकाई है। इस इकाई में आप तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियाँ के बारे में अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जानेंगे कि-

- प्रमुख तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियाँ कौन सी है, इसको जान सकेंगें।
- तुलनात्मक आलोचना प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
- तुलनात्मक अध्ययन प्रक्रिया के माध्यम से सामग्री विश्लेषण को समझ सकेंगे।
- तुलनात्मक साहित्य के सम्प्रदाय के बारे में जानेंगे।
- तुलनात्मक अध्ययन में अनुवाद की भूमिका को समझ सकेंगे।

2.3 तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियाँ

2.3.1 तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया

तुलनात्मक अध्ययन के संदर्भ में भारी भ्रम यह है कि इसकी कोई पद्धति नहीं है। किसी भाषा दूसरी भाषा की कृतियों की तुलना कर देने मात्र से ही तुलनात्मक साहित्य का कार्य पूरा हो जाता है। लेकिन क्या वाकई ऐसा है? जिस प्रकार लेविस ने आलोचना के लिए प्रविधि -भरी (सिस्टेमिक) सुविचारित श्रृंखला व क्रम अनिवार्य बताया था। क्योंकि प्रविधि के अभाव में साहित्य अराजकता का केन्द्र बन जाता है, क्योंकि प्रविधि जहाँ एक ओर विचार व रचना को अनुशासित करती है, वहीं दूसरी आरे उसे दिशा भी देती है। क्या पद्धति व साहित्य का इतना अनिवार्य सम्बन्ध होता है? साहित्य लिखने के पश्चात् हम उसे विशेष क्रम में व्यवस्थित कर देते

हैं, ऐसा आमतौर पर समझा जाता है, लेकिन साहित्य लेखन से पूर्व क्या लेखक के मस्तिष्क में विचार क्रम सुव्यवस्थित नहीं होते ? निश्चित तौर पर व्यवस्था पहले आती है और लेखन बाद में होता है। यह तो हुई लेखन की प्रक्रिया से ज्यादा व्यवस्था की माँग करती है। यहाँ हम तुलनात्मक अध्ययन पद्धति के अंतर्गत तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया को समझने का प्रयास करेंगे।

तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया का प्रथम चरण रचना विषयक चयन/ आलोच्य विषय (या कृति) है। किसी कृति को तुलनात्मक स्वरूप के चयन में भी आलोचक की दृष्टि ही काम करती है। आलोच्य कृति क्यों महत्त्व पूर्ण है? इसे लेखक को स्पष्ट करना ही पड़ता है। और उससे भी महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि लेखक ने उसका चयन क्यों किया है? किसी भी कृति का चयन लेखक की प्रतिभा पर प्रश्न चिह्न लगा देता है। लेखक को सर्वप्रथम चयनित रचना के महत्त्व और उसके चुने जाने के कारणों का औचित्य सिद्ध करना पड़ता है। फिर इस प्रक्रिया में एक नहीं दो रचनाएँ होती है। प्रथम रचना का दूसरी रचना से सम्बन्ध किस प्रकार स्थापित हो रहा है या नहीं हो पा रहा है ? यह प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण है। विषय चयन के नियम के अंतर्गत यह तथ्य भी है कि ध्यान रखने योग्य है कि गद्य और पद्य की रचनाओं का तुलना करना उचित नहीं है, क्योंकि दोनों विधाओं की रचनर प्रक्रिया में बहुत अन्तर है, दोनों दो अनुशासन हैं। तुलनात्मक अध्ययन प्रक्रिया का दूसरा चरण होता है आलोच्य कृति का पाठ। पूर्ण के सयम में लेखक केंद्र में हुआ करना था, आज उसका स्थान पाठक ने ग्रहण कर लिया है। पूर्व की अपेक्षा आज पाठ लेखक से स्वतंत्र हो चुका है..... इसलिए पाठ की अनन्त संभावनाएँ होती है। किसी कृति का पाठ कैसे किया जाये, यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण है। पाठक भी कई प्रकार के होते हैं। तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएँ (संपादक भ0ह0 राजूरकर एवं राजमल बोरा) में पाठकों का वर्गीकरण इस प्रकार किया गया है-

1. असाहित्यिक
2. गैर-साहित्यिक
3. साहित्यिक

1- असाहित्यिक पाठक वे होते हैं जो रचना का पाठ करते समय साहित्यिक मर्म की चिन्ता नहीं करते। ऐसे पाठक रचना में छिपे घटना क्रम में ही ज्यादा दिलचस्पी रखते हैं।

2- गैर-साहित्यिक पाठक से तात्पर्य ऐसे पाठक से है, जो रचना/ पाठ में अपनी रुचि के अनुसार तथ्यों की खोज करता हैं । ऐसे पाठकों में भी उच्च साहित्यिक बोध का अभाव होता है।

3- साहित्यिक पाठक का तात्पर्य ऐसे पाठकों से है जो पूरी रचना के आधार पर सम्पूर्णता में किसी पाठ का मूल्य निर्धारित करते हैं। ऐसे पाठकों का ध्यान पाठ के हर अंश पर होता है।

तुलनात्मक आलोचना प्रविधि का तीसरा चरण-तथ्य चयन होता है। किसी रचना में ढेरों तथ्य होते हैं, जो रचना को व्यवस्थित रूप प्रदान करने में अपनी भूमिका निभाते हैं । इस

प्रक्रिया में एक खास एप्रोच/ दृष्टि से आलोचक उस रचना को देखता है। वह एप्रोच विचारधारा का भी हो सकता है और किसी खास तथ्य का चुनाव व उसका विस्तार भी। तथ्य चयन का भी वस्तुतिष्ठ आधार होता है, लेकिन प्रायः लेखक आत्मनिष्ठ ढंग से ही विश्लेषण करते हैं। साहित्य की आलोचना प्रक्रिया में अक्सर ही लेखकों की तुलना के संदर्भ में आलोचक एकनिष्ठ दृष्टि के शिकार हो ही जाते हैं। कबीर-तुलसी, तुलसी-सूर, तुलसी-जायसी कालिदास-भवभूति, वाल्मीकि-व्यास, प्रसाद-निराला, पंत-निराला, मीरा-महादेवी, अज्ञेय-मुक्तिबोध, वडर्सवर्थ-कॉलरिज- जैसे ढेरों उदाहरण हैं , जब दो रचनाकरों की तुलना के बहाने एक को श्रेष्ठ सिद्ध करना ही आलोचक का उद्देश्य रहा है।

तुलनात्मक आलोचना प्रविधि का चतुर्थ चरण तथ्यों के विश्लेषण से जुड़ा हुआ है। तथ्य का स्वरूप कैसा है? तथ्य के घटक-इतिहास और दर्शन की दृष्टि से विश्लेषण किया जाता है। इतिहास और दर्शन में रचना के सारे संदर्भ को समेट लिया जाता है। इतिहास ने अतर्गत सारे तथ्य (चाहै वह राजनीति, चाहै व समाजशास्त्र या पत्रकारिता या अन्य किसी विधा हो) आ जाते हैं व दर्शन के अंतर्गत सारे विचर व वाद (मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषण, उत्तर-आुधुनिकता, आधुनिकता, संरचनावाद या प्राचीन दर्शन सभी आ जाते हैं)। तुलनात्मक आलोचना प्रविधि का पंचम चरण/प्रक्रिया है- विषय वस्तु एवं शिल्प के स्तर पर आलोच्य रचनाओं की संगति की विचारणा एवं उनका मूल्यांकन करना। विषयवस्तु का सम्बन्ध उस देशकाल-परिस्थिति से अनिवार्य सूक्ष्म रूप से जुड़ा हुआ होता है। साहित्यिक रचना जितना कहती है, उतना ही अनकहा रह जाता है.....। इस दृष्टि से रचना के रूप के माध्यम से भी आलोचक युग-समाज के परिवर्तन को पकड़ने का प्रयास करता है। भारतीय काव्यशास्त्र की सैद्धान्तिक व शिल्पगत बारीकियों को लेकर ही लम्बी चर्चा देखने को मिलती है।

2.3.2 सामग्री विश्लेषण प्रक्रिया

पीछे हमने तुलनात्मक अध्ययन प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का अध्ययन किया। हमने अध्ययन किया कि तुलनात्मक अध्ययन प्रक्रिया में पाठ चयन, तथ्य चयन एवं विशिष्ट एप्रोच इत्यादि तुलनात्मक अध्ययन के विभिन्न चरण हैं। अभी हम तुलनात्मक अध्ययन प्रक्रिया या उसकी प्रविधि का अध्ययन करेंगे। तुलनात्मक साहित्य की कोई सुनिश्चित पद्धति है या नहीं, इस बात को लेकर भी अध्येताओं में मतैक्य नहीं है। रेने वेलेक जैसे अध्येता जब यह कहते हैं कि तुलनात्मक साहित्य की कोई निश्चित कार्यपद्धति नहीं है । उनका तर्क है कि साहित्य के अन्दर तुलनात्मक तत्व सक्रिय रहता ही है, उसकी अलग प्रविधि का प्रश्न उचित नहीं है। क्रमशः तुलनात्मक साहित्य की तीन दृष्टि या परिप्रेक्ष्य माने गये हैं-

1. फ्रांसीसी-जर्मन स्कूल का अंतर्राष्ट्रीयता के आश्रय से साहित्य का कालक्रमिक अध्ययन- साहित्यिक विकासवाद, ऐतिहासिक सापेक्षतावाद तथा ऐतिहासिक परिस्थिति।
2. अमरीकी स्कूल की रूपवादी दृष्टि- काव्यशास्त्रीय सौन्दर्यात्मक, कलापरक तथा विश्लेशणात्मक अंतदृष्टि

3. समाजशास्त्रीय - संस्कृतिपरक यथार्थवादी दृष्टि -

इन तीन परिप्रेक्ष्यों को दो नियमों के अंतर्गत समेटा गया है-

1- साहित्येतिहास का अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ

2 - तुलनात्मक आलोचना।

1 - साहित्येतिहास के अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ से आशय दो रचनाओं या घटनाओं के द्वि-आधार संबंध को स्थापित करने से माना गया है। इसका अर्थ यह है कि कलापरक दृष्टि को समाजशास्त्र, संस्कृति एवं इतिहास के संदर्भ में दो साहित्यों के प्रभाव-परस्पर एवं उनके सादृश्य आधारों को स्पष्ट करना।

2 - तुलनात्मक आलोचक के लिए तुलना एक सचेत और मूलभूत पद्धति है।

तुलनात्मक पद्धति के आश्रय से एक से अधिक साहित्यों की तुलना करना तुलनात्मक अध्ययन है। इस प्रक्रिया में दो साहित्यों के सादृश्य संबंध, परम्परा तथा उनके प्रभावों के सूत्रों की खोज की जाती है । अब हम तुलनात्मक साहित्य की कुछ प्रमुख प्रविधियों का अध्ययन करेंगें।

सादृश्य संबंधात्मक प्रविधि-

यह प्रविधि अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ के अंतर्गत आती है। अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ के आश्रय से दो कृतियों का साहित्यगत शैली, संरचना, मूड या विचार का सादृश्य संबंधात्मक अध्ययन होता है। इस प्रकार का अध्ययन सादृश्य या वैशम्यमूलक दोनों हो सकता है। किसी भी दो बेमेल विषयवस्तु की सादृश्यमूलक अध्ययन पद्धति को पॉलीजेनेटिक पद्धति कहते हैं। सादृश्यमूलक पद्धति की सहायता से आलोचक विभिन्न समाज तथा परिस्थिति में अभिव्यक्त होने वाले साहित्य का विवेचन करता है और भिन्न-भिन्न प्रश्नों की तलाश करता है। विभिन्न अभिव्यक्तियों की समानता का कारण क्या है? तथा वे कैसे एक-दूसरे से भिन्न हैं, इसका उत्तर तुलनात्मक आलोचना के सादृश्य-संबंधात्मक प्रविधि में खोजा जाता है।

तुलनात्मक अध्ययन की परम्परा प्रविधि -

अंतर्राष्ट्रीय संदर्भवाद के अंतर्गत परम्परा अध्ययन प्रविधि में भी दो कृतियों का सादृश्यमूलक अध्ययन होता है। इस प्रविधि की मान्यता के मूल में यह तथ्य है कि - रचना, एक बड़े वर्ग का अंश होती है। और जो समान ऐतिहासिक, कालानुक्रमिक तथा रूपात्मक बंधनों से अनुस्युत होती है। इस प्रविधि में खास तौर से भाषा तथा साहित्य में प्रतिफलित राष्ट्रीय चेतना का अध्ययन किया जाता है, या उनके संदर्भ को भी अनिवार्य रूप से शामिल कर लिया जाता है। इस प्रविधि के अध्ययन के संदर्भ में भी दो प्रस्ताव हैं। एक, प्रस्ताव यह है कि अध्ययन प्रविधि में पूरी प्रस्ताव है। एक, प्रस्ताव यह है कि अध्ययन प्रविधि में पूरी परम्परा के संदर्भ में अध्ययन किया जाये, जबकि प्रावर जैसे अध्येता इसके विपरीत यह प्रस्ताव रखते हैं कि अध्ययन के क्षेत्र को सीमित करके किसी एक ऐतिहासिक काल अथवा ऐतिहासिक दृष्टि से उभरते हुए किसी एक काव्यरूप का दो साहित्यों के संदर्भ में अध्ययन किय जाता है। परम्परा अध्ययन की प्रणाली में राष्ट्रीयता एवं अंतर्राष्ट्रीयता एंव अंतर्राष्ट्रीय परम्पराएँ निकट आ जाती है।

प्रभाव प्रविधि-

रूथवेन में प्रभाव प्रविधि के दो धरातल बताये हैं एक जब शक्तिशाली व्यक्तित्व का प्रभाव, अध्येता को अपनी धारा में बहा ले जाता है और दूसरा धरातल यह होता है जब उस शक्तिशाली व्यक्तित्व के प्रभाव से अध्येता अपनी दृष्टि को और परिष्कृत व सम्पन्न करता चलता है। साइमन जियून ने प्रभाव को 'अनुकरण' न मानकर 'प्रेरणा' मानने से प्रभाव-अध्ययन के विरोध में की गई आलोचना माना है। तुलनात्मक साहित्याध्ययन में प्रभाव-सूत्रों का अध्ययन ही उसकी केन्द्रीय पद्धति है। क्लांद गुइएँ ने इसीलिए प्रभाव सूत्रों के अध्ययन को मनोवैज्ञानिक प्रतिभास कहा है। इसे स्पष्ट करते हुए गुइएँ प्रत्यक्ष और अप्रत्यँ प्रभाव की बात करता है। प्रत्यक्ष प्रभाव में आलोच्य लेखक और अप्रत्यक्ष प्रभाव में सृजनात्मक परम्परा को शामिल किया जा सकता है।

अध्ययन की स्वीकृति तथा संचारण प्रविधि-

उलरिच वाइस्टाइन ने इस प्रविधि को स्पष्ट करते हुए लिखा है- प्रभावसूत्रों का अध्ययन मूलतः परिपूर्ण दो साहित्यिक कृतियों को लेकर किया जाता है किन्तु स्वीकृति अध्ययन का क्षेत्र काफी बड़ा होता है। इसमें कृतियों के पारस्परिक संबंधों से लेकर उनके आस-पास की परिस्थितियों, लेखक, पाठक, समीक्षक, प्रकाशक तथा प्रतिवेशी परिवेश सब कुछ अध्ययन के विषय के अंतर्गत आता है। इस तरह स्वीकृति अध्ययन साहित्यिक समाजशास्त्र अथवा मनोविज्ञान की दिशा में विशेष रूप से अग्रसर होता है। उदाहरणस्वरूप हम समझ सकते हैं कि द्विवेदी कालीन नैतिकता केवल रीतिकाल के प्रति प्रतिक्रिया नहीं थी। बल्कि सम्पूर्ण विक्टोरियन युग के साहित्य की स्वीकृति भी थी। प्रावर ने इसे 'संचारण अध्ययन' कहा है। प्रावर ने इसकी परिभाषा देते हुए लिखा है- ''संचारण संस्थाओं एवं रूपों के सदृश है जिसके माध्यम से विचार, सूचना तथा अभिवृत्तियां स्थानांतरित अथवा स्वीकृत होती है।''

तुलनात्मक अध्ययन की सौभाग्य प्रविधि-

अध्ययन की सौभाग्य प्रविधि क्या है? इसे समझाते हुए इन्द्रनाथ चौधरी ने लिखा है- ''स्वीकृति अध्ययन के अंतर्गत संचारण विश्लेषण के अतिरिक्त किसी एक लेखक या कृति का 'सौभाग्य' विश्लेषण भी किया जाता है। किसी एक विदेशी लेखक या कृति की दूसरे देश में किन्ही कारणों से, नोबेल पुरस्कार मिलने से या आकस्मिक मृत्यु होने से या किसी सत्ता का विरोध करने से ख्याति के बढ़ जाने पर वह कैसे दूसरे लेखकों या साहित्यिक परिवेश को प्रभावित करता है इसका अध्ययन ही सौभाग्य अध्ययन है।'' वाल्टर मुथ्ग ने 'स्टडीज इन द ट्रेजिक हिस्ट्री ऑफ लिटरेचर' में जर्मन साहित्य को प्रभावित करने की प्रक्रिया में 'हैमलेट' का अध्ययन किया है। वाँ टिगहैम, आंद्र मोरिजे तथा गुस्तव रूद्रलर ने स्वीकृति अध्ययन का विवेचन किया है।

संबंधात्मक द्वन्द्वात्मक प्रविधि

डॉ. इन्द्रनाथ चौधुरी ने संबंधात्मक इन्द्वात्मक प्रविधि को स्पष्ट करते हुए लिखा है- ''अंतर्राष्ट्रीय संदर्भवाद साहित्य को मानवीय ज्ञान के दूसरे क्षेत्रों के साथ भी जोड़त है जैसे दर्शन, इतिहास, मनोविज्ञान, राजनीतिशास्त्र, धर्म, समाजशास्त्र तथा ललित कलाएँ।''

तुलनात्मक आलोचना की प्रविधि

तुलनात्मक प्रविधि में आलोचक सुव्यवस्थित ढंग से तुलनात्मक आलोचना के अंग रूप में तुलना के तकनीकों का प्रसार करता है और व्यक्तिगत लेखकों के द्वारा किए गए प्रयासों का अध्ययन आलोचना के मूल अंग दें। इस प्रविधि में कालक्रमिक अध्ययन नहीं, समकालिक अध्ययन होता है।

अभ्यास प्रश्न

क- सही /गलत में उत्तर दीजिए।

1. तुलनात्मक अध्ययन प्रक्रिया का प्रथम चरण रचना विषयक चयन है।
2. अमरीकी स्कूल दृष्टि रूपवादी रही है।
3. फ्रांसीसी-जर्मन स्कूल की दृष्टि ऐतिहासिक रही है।
4. सादृश्य-संबंधात्मक प्रविधि, साहित्येतिहास के अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ से जुड़ा हुआ है।
5. तुलनात्मक अध्ययन की परम्परा प्रविधि का संबंध अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ से जुड़ा हुआ है।

ख- टिप्पणी लिखिए

1. तुलनात्मक अध्ययन की परम्परा प्रविधि ?

2.4 तुलनात्मक अध्ययन एवं भारतीय साहित्य

क्या तुलनात्मक साहित्य और भारतीय साहित्य का किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध है? रवीन्द्रनाथ टैगोर ने जब 1907 ई. में विश्व साहित्य शब्द का प्रयोग किया था, तब से तुलनात्मक अध्ययन को भारत में विशेष बल मिला। भारतीय साहित्य के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन एंव साहित्य की नई परिकल्पनाएँ सामने आई। इसी उद्देश्य से सन् 1954 ई. में साहित्य अकादमी की स्थापना हुई। भारतीय साहित्य की प्रस्तावना प्रस्तुत करते हुए सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने लिखा था कि भारतीय साहित्य एक है यद्यपि वह बहुत-सी भाषाओं में लिखा जाता है। भारतीय साहित्य चूँकि विभिन्न भाषा परिवारों में, 'भारोपीय, चीनी-तिब्बती, कश्मीरी, द्राविड़ इत्यादि'- बांटा हुआ है, इसलिए भी इसे व्यापक प्रचार-प्रसार प्राप्त नहीं हो सका। किन्तु भारत की मूलभूत संस्कृति को दिखाने के लिए भारतीय साहित्य की अवधारणा का व्यापक प्रचार-प्रसार आवश्यक है।

2.5 तुलनात्मक अध्ययन और अनुवाद का प्रश्न

तुलनात्मक अध्ययन के मूल में यह प्रश्न उपस्थित है कि विस्तृत परिप्रेक्ष्य में साहित्य एवं संस्कृति का अध्ययन किस प्रकार संभव हो सकता है? इस अध्ययन प्रणाली में एक से अधिक भाषाओं के साहित्य का प्रश्न भी मूल में हैं क्योंकि अनुवाद करने की स्थिति तो दसूरी भाषाओं के संदर्भ में ही उत्पन्न् होती है। तुलनात्मक अध्ययन और अनुवाद के संदर्भ में कई प्रश्न आज भी अनसुलझे हैं। तुलनात्मक साहित्य के संदर्भ में उचित स्थिति यह होगी कि अध्येता को एक-से अधिक भाषाओं की जानकारी हो। आर्नल्ड के अनुसार अपनी भाषा में रचित साहित्य के अतिरिक्त किसी दूसरी भाषा के साहित्य से भली भाँति परिचित होना आवश्यक बताया था।

अनुवाद सृजन है, या अनुकरण यह प्रश्न ही उठाया जाता रहा है। मूल रूप में तो अनुवाद अनुकरण ही है, किन्तु यांत्रिक अनुवाद भी तुलनात्मक साहित्य के लिए किस काम का? साहित्यिक अनुवाद तो सृजनात्मक ही हो सकता है। क्योंकि साहित्य में एक शब्द के कत्रई अर्थ होते हैं, इसलिए देश-काल-परिस्थिति-परिवेश के अनुसार मूल रूप से अर्थ को ही मूल मानना पड़ता है।

2.6 सारांश

यह एम0ए0एच0एल0-204 की दूसरी इकाई, जो तुलनात्मक अध्ययन पद्धतियों पर केंन्द्रित है- का आपने अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपने जाना कि-

- तुलनात्मक अध्ययन एक सुनिश्चित प्रविधि एंव श्रृंखला के माध्यम से अपना आकार ग्रहण करता है।
- तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया के कई चरण हैं- प्रथम चरण है- रचना विषयक चयन, दूसरा चरण है- आलोच्य कृति का पाठ, तीसरा चरण है- तथ्य चयन, चतुर्थ चरण है- तथ्यों का विश्लेषण करना, पंचम चरण है- विषय वस्तु एवं शिल्प के स्तर पर आलोच्य रचनाओं की संगति की विचारणा एवं उनका मूल्यांकन करना।
- तुलनात्मक आलोचना प्रक्रिया के विश्लेषण प्रक्रिया के अंतर्गत- साहित्येतिहास के अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ एवं तुलनात्मक आलोचना का विश्लेषण किया जात है।
- साहित्येतिहास के अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ के अंतर्गत- सादृश्य-संबंधात्मक प्रविधि, तुलनात्मक अध्ययन की परम्परा प्रविधि, प्रभाव प्रविधि, अध्ययन की स्वीकृति तथा संचारण प्रविधि, तुलनात्मक अध्ययन की सौभाग्य प्रविधि, संबंधात्मक द्वन्द्वात्मक प्रविधि इत्यादि आते हैं।

2.7 शब्दावली

- प्रविधि- शैली, तरीका
- एप्रोच – दृष्टि
- सुनिश्चित – निश्चित
- सापेक्षतावाद - समाज के संदर्भ के अनुकूल विकसित दृष्टि

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क-

1. सत्य
2. सत्य

3. सत्य
4. सत्य
5. सत्य

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. तुलनात्मक साहित्य: भारतीय परिप्रेक्ष्य- चौधेरी , इन्द्रनाथ, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2010
2. तुलनात्मक अध्ययनः भारतीय भाषाएँ और साहित्य ' (सं) राजूरकर, भ.ह.एंव बोरा, राजकमल, वाणी प्रकाशन , द्वितीय संस्करण 2008

2.10 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएँ - (सं) राजूरकर, भ.ह. एवं बोरा, राजमल, आवृत्ति संस्करण 2013 वाणी प्रकाशन

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तुलनात्मक अध्ययन के विभिन्न चरणों की व्याख्या कीजिए।
2. तुलनात्मक अध्ययन की विभिन्न पद्धतियों का वर्णन कीजिए।

इकाई 3 भारतीय साहित्य की अवधारणा

इकाई रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 पाठ का उद्देश्य
3.3 भारतीय साहित्य की अवधारणा
3.3.1 अर्थ, परिभाषा
3.3.2 भारतीय, साहित्य का स्वरूप
3.4 भारतीय साहित्य और अध्ययन की समस्याएँ
3.5 भारतीय साहित्यस और राष्ट्रीय-सांस्कृतिक प्रश्न
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
3.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.11 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

सामान्य व्यवहार या आम बोलचाल की भाषा में भारतीय साहित्य का आशय भारत के विभिनन प्रान्त की भाषा में लिखे गये साहित्य से है। किन्तु भारतीय साहित्य एक अनुशासन के रूप में आज विकसित हो चुका है और सम्पूर्ण भारत के साहित्य के अर्थ में समझा जाने लाग है। भारतवर्ष बहुभाषी समाज रहा है। भारोपीय-द्राविड़, चीनी-तिब्बती इत्यादि भाषा परिवारों को समेटे भारत वर्ष भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का वाहक रहा है। स्वाभाविक ही था कि भिन्न भाषा एवं संस्कृतिक की एक समझ बढ़ाने का प्रयत्न होता, क्योंकि उसके बिना भारतीय संस्कृतिक को समझा ही नहीं जा सकता था। भारत के पूर्वी प्रदेश में-उड़िसा , बंगला, असमिया, पूर्वोत्तर प्रदेश में- अरूणाचली, नागालैण्डी, असमिया, मिजो, उत्तर प्रदेश में कश्मीरी, डोंगरी, सिंधी, कोंकणी, पश्चिम के प्रदेश में-राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी, हरियाणी एवं दक्षिण के प्रदेशों में- मराठी, तेलुगु, कन्नड़, तमिल एवं मलयालम भाषाएँ प्रमुखता से बोली और समझी जाती है। इसके अतिरिक्त प्रादेशिक स्तर पर अन्य छोटी-छोटी भाषाओं का भी साहित्य है.... तो क्या इतने बड़े भाषा वैभिध्य वाले प्रदेश में किसी एक चेतना को स्थिर किया जा सकता है? भारतीय साहित्य की अवधारणा में मूल में भारतीय जीवन संस्कृति एवं भाषागत वैविध्य को समेटने का प्रयास है। भारतीय साहित्य का क्षेत्र व साहित्य इतना व्यापक है कि प्रश्न उठता है कि इसका कौन सा स्वरूप नियत किया जाये? एक प्रश्न भाषागत भिन्नता का है, सांस्कृतिक भिन्नता का है, तो दूसरा प्रश्न भाषा-परिवार की भिन्नता का है, व्याकरणिक भिन्नता का है। इतने व्यापक भिन्नता के बावजूद किसी एक भारतीय संस्कृति के निर्माण को बात की जा सकती है? भारतीय साहित्य की अवधारण के मूल में ऐसे ढेरों प्रश्न हैं।

3.2 पाठ का उद्देश्य

एम.ए.एच.एल - 204 की यह तीसरी इकाई भारतीय साहित्य की अवधारणा पर केंन्द्रित है। इस इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप-

- भारतीय साहित्य की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
- भारतीय साहित्य के इतिहास को जान सकेंगे।
- भारतीय साहित्य की परिभाषा एवं उस पर विभिन्न विद्वानों के मतो को जान सकेंगें।
- भारतीय साहित्य और उसके अध्ययन की समस्याओं से परिचित हो सकेंगें।
- भारतीय साहित्य और संस्कृति के अंतर्सम्बन्ध कसे समझ सकेंगे।
- भारतीय साहित्य का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

3.3 भारतीय साहित्य की अवधारणा

3.3.1 अर्थ, परिभाषा

भारतीय साहित्य को परिभाषित करते हुए डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है, ''भारतीय मनीषा की अभिव्यक्ति का नाम भारतीय साहित्य है और भारतीय मनीषा का अर्थ है, भारत के प्रबुद्ध मानस की सामूहिक चेतना-सहस्त्राब्दियों से संचित अनुभूतियों और विचारों के नवनीत से जिसका निर्माण हुआ है। यह भारतय मनीषा ही भारतीय संस्कृति, भारत की राष्ट्रीयता और भारतीय साहित्य का प्राणतत्व है। '' (भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास-सं0 डॉ.नगेन्द्र, पृष्ठ 10) अपनी इस परिभाषा में डॉ.नगेन्द्र ने भारतीय साहित्य की व्यापक संकल्पना की है। 'भारत के प्रबुद्ध मानस की सामूहिक चेतना, को उन्होंने भारतीय साहित्य का आधार माना है। भारतीय मनीषा, भारत की राष्ट्रीयता ही भारतीय साहित्य के केंन्द्र में हैं। डॉ.नगेन्द्र ने अपनी इस परिभाषा में समेकित रूप में भारतीय मनीषा को ही सम्पूर्ण भारतीय साहित्य का पर्याय मान लिया है। इस परिभाषा में अतिव्याप्ति दोष है। भारत वर्ष को भौगोलिक एकत्व के आधार पर रखकर, भारतीय साहित्य की परिभाषा देते हुए विन्टरनिप्स ने 'भारतीय साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक में लिखा है,''भारतीय साहित्य का इतिहास भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त तीन हजार वर्ष के मानसिक क्रिया-कलाप का लिपिबद्ध इतिहास है। हजारों वर्षों तक निरन्तर गतिशील इस मानसिक क्रिया-कलाप का विकास क्षेत्र है वह देश है जो हिन्दुकुश पर्वत से कुमारी अंतरिप-लगभग डेढ़ लाख वर्गमील तक फैला हुआ है-जिसका क्षेत्रफल रूस को छोड़ समस्त यूरोप के बराबर है और विस्तार 8 से 35 उत्तरी अक्षांश तक अर्थात् भूमध्य रेखा के ऊष्णतम प्रदेशों से लेकर शीतोष्ण कटिबंध तक हैं। '' इसे अतिरिक्त विन्टरनिप्स ने आगे एक जगह और लिखा है-''विषय वस्तु की दृष्टि से इसमें, व्यापक अर्थ में, वाङमय के समस्त रूपों-धार्मिक और लौकिक महाकाव्य, प्रगीत-काव्य, नाटक, नीति-काव्य तथा गद्य में रचित कथा-आख्यायिका, शास्त्र आदि का अंतर्भाव है।'' स्पष्ट है कि विन्टरनित्स ने अपनी परिभाषा में समस्त रचना रूपों एवं भारत के समस्त क्षेत्र के साहित्य को अपनी परिभाषा में समेटा है कि विंटरनित्स ने अपनी परिभाषा में समस्त रचना रूपों एवं भारत के समस्त क्षेत्र के साहित्य को अपनी परिभाषा के अंतर्गत रखा है। इसी प्रकार भारतीय वाङमय की भूमिका में भारतीय साहित्य की परिभाषा इस प्रकार दी गई हैः "भारत वर्ष अनेक भाषाओं वाला विशाल देश हैः उत्तर-पश्चिम में पंजाबी, हिन्दी और उर्दू, पूर्व में उड़िया, बंगला और असमिया, मध्य-पश्चिम में मराठी व गुजराती और दक्षिण में तमिल, तेलुगु, कन्नड़ तथा मलयालम। इनके अतिरिक्त कतिपय अन्य भाषाएँ भी है जिनकी साहित्यिक तथा भाषावैज्ञानिक महत्त्व कम नहीं है। जैसे कश्मीरी, सिंहली, डोगरी, कोंकणी और तुरू आदि। इनमें से प्रत्येक का-विशेष कर पहली बारह भाषाओं में से प्रत्येक का अपना साहित्य है जो प्राचीनता, वैविध्य, गुण और पभिाषा- सभी की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। यदि आधुनिक भारतीय भाषाओं के ही संपूर्ण वाङ्मय से किसी भी दृष्टि से कम नहीं होगा। वैदिक संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा अपभ्रंश समूह के वाङमय का समावेश कर लेने पर तो उसका अनंत

विस्तार कल्पना की सीमा को पार कर जाता है ज्ञान का अपार भंडार-हिंद महासागर से भी गहरा, भारत के भौगोलिक विस्तार से भी अधिक व्यापक, हिमालय के शिखरों से भी ऊँचा। '' इस परिभाषा में भारतीय की प्रमुख भाषाओं एवं समस्त ज्ञान परम्परा को समेटने का भावात्मक प्रयास किया गया है।

3.3.2 भारतीय साहित्य का स्वरूप

भारतीय साहित्य की समझ के लिए पहले तो भारतीय क्षेत्र और उसकी भाषाओं का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय भौगोलिक परिधि एवं उसकी भाषाओं को हम एक आरेख के माध्यम से समझ सकेत हैं-

भारत की भाषाएं

1. उत्तरी क्षेत्र की भाषाएँ - कश्मीरी, सिंधी, पहाडी, गढ़वाली-कुमाऊँनी, नेपाली
2. पश्चिम क्षेत्र की भाषाएँ - पंजाबी, हरियाणी, राजस्थानी, गुजराती
3. दक्षिण-पश्चिम - मराठी
4. दक्षिण की भाषाएँ - तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलयालम
5. पूर्वी क्षेत्र की भाषाएं - बंगला,उड़िया, असमिया
6. पूर्वोत्तर की भाषाएँ - नागालैण्डी, मिजो, मेघालयी, अरूणाचली

जाहिर है भारतीय साहित्य की परिधि बहुत व्यापक है। अतः इसीलिए स्थूल रूप में भारत की बहुविध भाषाओं को इसमें समेट लिया जाता है। इस परिकल्पना के अनुसार भारतीय साहित्य का तात्पर्य उपरोक्त की समस्त भाषाओं के सम्पूर्ण साहित्य की संपूर्ण प्रवृत्ति से है। जैसा कि पूर्व में भी हमने अध्ययन किया कि भारतीय साहित्य इन समस्त भाषाओं के समस्त साहित्य का न तो संग्रह मात्र है और न उसकी व्याख्या मात्र भारतीय सांहित्य का आशय तो संपूर्ण भारत की जातीय अस्मिता को तलाशने व उसको संरक्षित करने से है।

अभ्यास प्रश्न 1

(क) टिप्पणी लिखिए।

1. भारत की भाषाएँ

.....

.....

.....

.....

2. भारतीय साहित्य की परिभाषाएँ

.....

.....

.....

.....

(ख) सही/गलत का चयन कीजिए।

1. राजस्थानी पश्चिम भारत की भाषा है।
2. डॉ. नगेन्द्र ने 'भारतीय मनीषा की अभिव्यक्ति' को भारतीय साहित्य कहा है।
3. मराठी भारत के दक्षिण-पश्चिम की भाषा है।
4. कश्मीरी, पूर्वोत्तर की भाषा है ।
5. मलयालम, दक्षिण-पश्चिम की भाषा है।

3.4 भारतीय साहित्य और अध्ययन की समस्याएँ

भारतीय साहित्य के स्वरूप के अंतर्गत हमने भारतीय साहित्य के अध्ययन की समस्याओं का संकेत किया था। यहाँ हम उसी समस्या के कारणों का विस्तार से अध्ययन करेंगे। हमने अध्ययन किया कि भारत में कई भाषा परिवार की भाषाएँ बोली जाती है। यहाँ एक आरेख के माध्यम से हम भारतीय भाषा परिवारों की रूपरेखा समझने का प्रयास करेंगे-

भारतीय भाषाएँ और भाषा परिवार

1. भारोपीय भाषा परिवार - अर्द्धमागधी, शौरसेनी, मागधी, पहाडी़, बिहारी, गुजराती, बंगला, उड़िया
2. द्राविड़ भाषा परिवार - तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मलायम
3. दरद - कश्मीरी, सिंधी पश्तो
4. तिब्बती भाषा परिवार - नागालैण्ड, मणिपुरी, मिजो इत्यादि पूर्वोत्तर की भाषाएँ

ऊपर आपने देखा कि भारत में चार भाषा परिवारों की भाषाएँ बोली जाती है। ये भाषा परिवार अपने व्याकरणिक गठन में भिन्न प्रकार के हैं।

बहुविध भाषा परिवार की उपस्थिति पर रामविलास शर्मा की टिप्पणी है, '' अनेक आधुनिक राष्ट्र और राज्य न केवल बहुजातीय है वरन् उसमें निवास करने वाली जातियाँ एक से अधिक परिवारों की भाषाएँ बोलती है। इसलिए भारत में अनके भाषाओं का बोला जाना अथवा उनका अनेक परिवारों से सम्बद्ध होना कोई अनोखा व्यापार नहीं है। '' इस दृष्टि से रामविलास जी अनेक भाषा परिवार को भारतीय साहित्य के लिए अवरोध नहीं माना है। फिर भी प्रश्न तो उठता ही है कि बहुसांस्कृतिक परिस्थितियों में एक भाषिक संकल्पना की पूर्ति कैसे की जा सकती है? भारत की सांस्कृतिक एकता का संदर्भ काफी पुराना है। भारतीय मिथकों एवं महाकाव्यों को आधार बनायें तो हमे देखते हैं कि उसमें सम्पूर्ण राष्ट्र को आधार बनाया गया है। रामायण में श्री राम की उत्तर से दक्षिण की यात्रा सांस्कृतिक एकत्व के प्रयत्न के सिवा और क्या कहा जा सकता है? महाभारत में भी पाण्डवों के माध्यम से भारत के पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण की यात्रा

कराकर लेखक ने अपनी सांस्कृतिक दृष्टि का ही परिचय दिया है। धार्मिक-मिथकीय व जातीय महाकाव्यात्मक संस्कृति के ही कारण सम्पूर्ण भारत में कर्मकाण्ड व पूजा-पद्धति में लगभग एक जैसी ही पद्धति अपनाई जाती रही है। अर्थ यह है कि भारतीय समाज व संस्कृति की साभ्यता की ऐतिहासिक परम्परा रही है। द्रविड़ भाषा के शब्द अगरू, अनल, कुंड, कुंडल, चंदन (पूजा से शब्द) आदि शब्द संस्कृत भाषा में भी मिलते हैं।

काल विभाजन की समस्या

जैसा कि हमने अध्ययन किया कि भारत अपने भौगोलिक एवं बहुभाषिक वैविध्य की दृष्टि से फैला हुआ बृहद राज्य है। हर क्षेत्र की अलग-अलग भाषा....और उन भाषाओं काअलग व्याकरण रूप। सबसे बडी़ समस्या सभी भाषाओं को एक साथ रखकर उनका विवेचन-विश्लेषण करने से है। भारत की विभिन्न भाषाओं में मूलभूत रूप से एकता तो परिलक्षित की जाती है, लेकिन साहित्यिक प्रवृत्ति यों के निर्धारण में काल विभाजन का प्रश्न उठना स्वाभाविक ही है। कारण यह कि एक ही प्रवृत्ति अलग-अलग भाषाओं में अलग-अलग समय पर रही है। जैसे भक्तिकाल को ही हम उदाहरण स्वरूप लें तो यह कह सकते हैं दक्षिण का भक्ति साहित्य पूर्व का है और हिन्दी का बाद का.... इसी तरह अन्य प्रवृत्ति यों को भी हम ले सकते हैं।

3.5 भारतीय साहित्य और राष्ट्रीय-सांस्कृतिक प्रश्न

डॉ. नगेन्द्र द्वारा सम्पादित पुस्तक 'भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास' में भारतीय साहित्य की अनेक अर्थछायाएँ बताई गयी है। उन अर्थछायाओं को हम एक आरेख के माध्यम से इस प्रकार देख सकते हैं

भारतीय साहित्य: विभिन्न अर्थ

1. भौगोलिक
2. परिवेशीय
3. जातीय-सांस्कृतिक
4. जीवन-दर्शन

आइए इन अर्थों को हम समझने का प्रयास करें। भौगोलिक का तात्पर्य है - भारत की सीमाओं के अतंर्गत बोले जाने वाली भाषाएँ। परिवेशीय अर्थ का तात्पर्य है- यर्थाथवादी दृष्टिकोण से। भारत की सामाजिक- राजनीतिक के अर्थ में भारतीयता की व्याख्या करने से है। जातीय-सांस्कृतिक दृष्टि से तात्पर्य ऐसी अवधारणा से है जो भारतीयता का परिचायक हो। जातीय-सांस्कृतिक में धार्मिक-सांस्कृतिक, आचार-विचार के सार से है। जीवन-दर्शन का तात्पर्य है- भारत की भौगौलिक-परिवेशीय-जातीय-सांस्कृतिक मूल्यों के निचोड़ से प्राप्त जीवन मूल्य। यानी भारतीय जीवन दर्शनों की रसात्मक अभिव्यक्ति के रसात्मक साहित्य को ही भारतीय साहित्य कहा गया है। आपने पूर्ण में अध्ययन किया कि भारतीय साहित्य की अवधारणा के मूल में सांस्कृतिक व राष्ट्रीय प्रश्न ही है। दरसल इस अवधारणा कि 'भारतीय साहित्य के माध्यम से

भारतीय एकता की स्थापना कैसे की जाये? यही प्रश्न भारतीय साहित्य की अवधारणा के केंन्द्र में हैं।

3.6 सारांश

आपने एम.ए.एच.एल-204 की तीसरी इकाई का अध्ययन किया। यह इकाई भारतीय साहित्य की अवधारणा पर केंन्द्रित है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपने जाना कि –

- भारतीय साहित्य की अवधारणा के मूल में भारतीय राष्ट्र की मूलभूत एकता को प्रकट करना रहा है।
- भारत बहु-भाषिक एवं बहु-सांस्कृतिक राष्ट्र रहा है। इसकी बहुभाषिकता कई भाषा परिवारों पर आधारित रही है। भारोपीय भाषा परिवार, द्राविड़ भाषा परिवार। तिब्बती भाषा परिवार एवं कश्मीरी भाषा परिवार। प्रश्न यह है कि बहु-भाषिक समाज में राष्ट्रीय एकता कैसे स्थापित की जाये? भातीय साहित्य की अवधारणा के मूल में यही प्रश्न केन्द्र में रहा है।
- भारतीय साहित्य की अवधारणा को परिभाषित करते हुए उसे भारतीय मनीषा की अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया है।
- भारतीय साहित्य के स्वरूप की समझ के लिए हमें भारत के उत्तरी क्षेत्र, परिश्चमी क्षेत्र, दक्षिण की भाषाएँ, पूर्वी क्षेत्र की भाषाएँ एवं पूर्वोत्तर क्षेत्र की भाषाओं एवं उनकी संस्कृति की समझ भी आवश्यक है।

3.7 शब्दावली

- भाषा-परिवार - व्याकरणिक आधारों पर भाषा का समूह।
- अतिव्याप्ति - बिना ठोस आधार के व्यापक आयामों को धारण करना।
- जातीय चेतना - किसी प्रदेश-राष्ट्र की मूल चेतना।
- महाकाव्यात्मक संस्कृतिक संस्कृतिक। - व्यापक जीवन आदर्श को धारण करने वाली

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

(ख)

1. सत्य
2. सत्य
3. सत्य

4. असत्य
5. असत्य

3.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय साहित्य - त्रिपाठी, रामछबीला, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2012
2. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास - (सं) नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, द्वितीय संस्करण 2009

3.10 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक साहित्य भारतीय परिप्रेक्ष्य, चौधुरी, इन्द्रनाथ, वाणी प्रकाशन,द्वितीय संस्करण 2010
2. तुलनात्मक अध्ययन: भारतीय भाषाएँ और साहित्य: (सं)-राजूरकर,भ.ह.,बोरा, राजकमल, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2008।

3.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय भाषाओं का परिचय प्रस्तुत कीजिए।
2. भारतीय साहित्य की अवधारणा का परिच प्रस्तुत कीजिए।

इकाई – 4 भारतीय साहित्य की व्यापकता

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 पाठ का उद्देश्य
4.3 भारतीय साहित्य की व्यापकता
4.3.1 भागौलिक विस्तार
4.3.2 ऐतिहासिक विस्तार
4.3.3 भाषिक विस्तार
4.3.4 साहित्य का विस्तार
4.4 भारतीय साहित्य का सांस्कृतिक विस्तार
4.5 सारांश/मूल्यांकन
4.6 शब्दावली
4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भारतीय साहित्य की अवधारणा से संबंधित आपने इकाई का अध्ययन किया। उस इकाई के माध्यम आपने जाना कि सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय परिकल्पना को आधार बना करके ही भारतीय साहित्य की अवधारणा निर्मित हुई है। आपने अध्ययन किया कि भारतीय साहित्य की कई अर्थछाया है। भौगौलिक, परिवेशीय, राष्ट्रीय सांस्कृतिक एवं जीवन मूल्य से मुक्त दृष्टि। भारतीय साहित्य की व्यापकता इतनी ज्यादा है कि इसे किसी एक इतिहास, एक काल सीमा में निबद्ध कर देना कठिन कार्य है। किसी एक भाषा के साहित्य के गद्य-पद्य का एक साथ ही विवरण देना भी संभव नहीं है, फिर संपूर्ण भारत के साहित्य की व्याख्या-विवचेना किस प्रकार संभव हो सकती है? भारतीय साहित्य के एकत्व की दृष्टि से नाथ साहित्य, चारण काव्य, संतकाव्य, प्रेमाख्यानक काव्य, वैष्णव काव्य एवं आधुनिक विचार दर्शनों के प्रभावित साहित्यिक प्रवृत्तियां प्रमुख रूप से सभी प्रमुख भारतीय साहित्य में पायी जाती है। भारतीय साहित्य पर टिप्पणी करते हुए कृष्ण कृपालनी ने लिखा है-

''भारतीय सभ्यता की तरह, भारतीय साहित्य का विकास, जो एक प्रकार से उसकी सटीक अभिव्यक्ति है, सामाजिक रूप में हुआ है। इसमें अनेक युगो, प्रजातियों और धर्मों का प्रभाव परिलक्षित होता है और सांस्कृतिक चेतना तथा बौद्धिक विकास के विभिन्न स्तर मिलते है ।'' एक दूसरी जगह कृष्ण कृपलानी जी ने लिखा है, ''अत्यन्त प्राचीन विकासक्रम के अतिरिक्त इसमें दो अन्य विशेषताऐं भी हैं, जो सम्पूर्ण भारतीय साहित्य के अपूर्ण गौरव प्रदान करती है। एक है तीन हजार से अधिकाधिक वर्षों तक व्याप्त अखंड सृजन परम्परा और दूसरी है वर्तमान में जीवित अतीत की प्राणवंत चेतना।'' स्पष्ट है ऐतिहासिक, भौगौलिक एवं विषय विस्तार की दृष्टि से भारतीय साहित्य बहुत व्यापक है। इसके विषय विस्तार का संकेत करते हुए विन्टरनिट्स ने लिखा है, ''विषयवस्तु की दृष्टि से इसमें व्यापक अर्थ में वाङ्यम के समस्त रूपों धार्मिक और लौकिक महाकाव्य, प्रगीतकाव्य, नाटक, नीतिकाव्य तथा गद्य में रचित कथा आख्यायिका, शास्त्र आदि का अन्तर्भाव है।''

4.2 पाठ का उद्देश्य

एम.ए.एच.एल.- 204 की यह चौथी इकाई है। यह इकाई भारतीय साहित्य की व्यापकता पर आधारित है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप-

- भारतीय साहित्य के भौगोलिक विस्तार को जान पायेंगे।
- भारतीय साहित्य के ऐतिहासिक स्वरूप को समझ पायेंगे।
- भारतीय साहित्य के निर्धारक प्रमुख भाषाओं से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- भारतीय साहित्य के माध्यम से सांस्कृतिक विस्तार को समझ सकेंगे।
- भारतीय साहित्य के विस्तार को समझ सकेंगे।

- भारतीय साहित्य से जुड़ी हुई पारिभाषिक शब्दावलियों से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

4.3 भारतीय साहित्य की व्यापकता

भारतीय साहित्य की अवधारणा एवं स्वरूप के संदर्भ में हमने भारतीय भाषाओं के भाषा-वैविध्य एवं विस्तार का अध्ययन किया था। यहाँ हम भारतीय साहित्य की व्यापकता को भौगोलिक एवं ऐतिहासिक संदर्भों के साथ ही समझने का प्रयास करेंगे। भारतीय साहित्य की व्यापकता को बिन्दुरूप में यहाँ हम एक आरेख के माध्यम से समझने का प्रयास करेंगे।

भारतीय साहित्य की व्यापकता

1.भौगोलिक विस्तार 2.ऐतिहासिक विस्तार 3.भाषिक विस्तार 4.साहित्यिक विस्तार

ऊपर हमने भारतीय साहित्य के विस्तार के तत्वों को देखा। अब हम तत्वों का विस्तार से अध्ययन करेंगें।

4.3.1 भौगोलिक विस्तार

भौगोलिक विस्तार, भारतीय साहित्य का प्राथमिक तत्व है। जब सम्पूर्ण भारत की भाषाओं को आधार बना करके भारतीयता की अवधारणा विकसित हुई है, तो उसके मूल में भारत का भौगोलिक विस्तार ही आधार रूप में रहा है। भारतीय साहित्य के भौगोलिक विस्तार का संकेत करते हुए विन्टरनिट्स ने लिखा है- ''हजार वर्षों तक निरन्तर गतिशील इस मानसिक क्रिया-कलाप का विकास-क्षेत्र वह देशा है जो हिंदुकुश पर्वत से कुमारी अंतरीप-लगभग डेढ़ लाख वर्गमील तक फैला हुआ है जिसका क्षेत्रफल रूस को छोड़ समस्त यूरोप केबराबर है और विस्तार 8 से 35 उत्तरी अक्षांश तक अर्थात् भूमध्यम रेखा के ऊष्णतम प्रदेशों से लेकर शीतोष्ण कटिबंध तक हैं।'' भारत के समस्त भौगोलिक वृत्त को भारतीय साहित्य के भौगोलिक विस्तार में शामिल कर लिया गया है। कारण यह कि समस्त भारत में अलग-अलग प्रदेशों की अलग-अलग भाषाओं का अस्तित्व है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक भारत का भौगोलिक विस्तार फैला हुआ है।

4.3.2 ऐतिहासिक विस्तार

भारतीय साहित्य के ऐतिहासिक स्वरूप पर विचार करते हुए विन्टरनित्स ने लिखा है,'' भारतीय साहित्य का इतिहास भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त तीन हजार वर्ष के मानसिक क्रिया-कलाप का लिपिबद्ध इतिहास है।'' इस दृष्टि से विचार किया जाए तो विन्टरनित्स ने भारतीय साहित्य का इतिहास लगभग 1000 ईसा पूर्व निर्धारित किया है। यानी महाकाव्यकालीन सम्भ्यता के बाद के समय को ही उन्होंने अपने विवेचन के केन्द्र में रखा है। महाकाव्यकालीन सभ्यता से पूर्व भी भारत का पर्याप्त साहित्य हमें देखने को मिलता है। भारतीय साहित्य के ऐतिहासिक स्वरूप की समझ हम एक आरेख के माध्यम से समझने का प्रयास करेंगे।

भारतीय साहित्य का ऐतिहासिक स्वरूप (आरेख)

मैक्समूलर	-	1200 ईसा पूर्व
ए. वेबर	-	1200 ईसा पूर्व

जैकोबी	-	4500 ईसा पूर्व
बालगंगाधर तिलक	-	सृष्टि के प्रारम्भिक युग में
पं0 दीनानाथ शास्त्री	-	3 लाख वर्ष पूर्व
अविनाशचन्द्र दास	-	25,000 वर्ष पूर्व
भण्डारकर	-	600 ई.पू0
आदिशंकराचार्य	-	सृष्टि के प्रारम्भिक चरण
व्यास	-	सृष्टि के प्रारम्भिक चरण

चूँकि संसार का प्राचीन ग्रन्थ वेद (ऋग्वेद) को ही माना जाता है। और वेदों की रचना को लेकर काल मतैक्य नहीं है। 600 ईसा पूर्व से लेकर करोड़ों वर्षों तक की मान्यता हमारे सामने उपलब्ध है। मैक्समूलर,ए. वेबर, भण्डारकर जैकोबी, बालगंगाधर तिलक ने ऐतिहासिक प्रमाणों को साक्ष्य मानकर अपना मत स्थिर किया है तो दयानन्द सरस्वती, पं0 दीनानाथ शास्त्री, अविनाशचन्द्र दास, आदिशंकराचार्य एवं व्यास ने मिथकीय-पौराणिक एवं ज्योतिषीय आधार पर अपना मत स्थिर किया है। आइए ऊपर के अध्येताओं के मतों की समीक्षा करें।

मैक्समूलर के मत के मूल में यह अवधारणा रही है कि गौतम बुद्ध के समय तक वेदों की रचना पूरी हो चुकी थी। गौतम बुद्ध का समय 5-6वीं शताब्दी ई.पू0 माना गया है। मैक्समूलर ने अपने मत की पुष्टि के लिए वैदिक साहित्य को चार प्रमुख भागों में विभक्त कर दिया है, तथा प्रत्येक के लिए 200 वर्ष का समय रखा है-

1.	छन्द काल	-	1000-1200 ई.पू.
2.	मन्त्र काल	-	800- 1000 ई.पू.
3.	ब्राह्मण काल	-	600-800 ई.पू.
4.	सूत्र काल	-	400- 600 ई.पू.?

ए. वेबर ने वेदों के समय को 1200 ई.पू. तो स्वीकार किया, किन्तु साथ ही वे यह भी जोड़ देते हैं कि यह अनुमानित समय है। जैकोबी के मत के मूल में ज्योतिष की गणना रही है। ज्योतिष को आधार बना करके ही बालगंगाधार तिलक ने भी अपना मत स्थिर किया है। तिलक ने वैदिक काल को 4 भागों में विभक्त किया है-

1. अदित काल – 4000 - 6000 ई.पू. - गद्य-पद्यात्मक मंत्र
2. मृगशिरा काल - 2500-4000 ई.पू. - ऋक सूक्त
3. कृतिका काल - 1400-2500 ई.पू. - चारों वेदों का संकलन ब्राह्मण ग्रन्थ
4. अंतिम काल - 500-1400 ई.पू. - सूत्र एवं दर्शन ग्रन्थ

दयानन्द सरस्वती एवं अविनाशचन्द्र दास ने ज्योतिषीय आधार पर अपना मत स्थिर किया है।

4.3.2 भाषिक विस्तार

भारत बहुभाषिक राष्ट्र है। इस दृष्टि से इसे बहुसांस्कृति राष्ट्र भी कहा जा सकता है। लगभग 1652 मातृभाषाएँ हमारे देश में बोली जाती है तथा प्रमुख रूप से 25-30 भाषाएँ अपने समृद्ध साहित्य के कारण उल्लेखनीय हैं। इन भाषाओं का संबंध भारतीया संस्कृतिक से प्रमुखता

से जुड़ा हुआ है। पिछली इकाई में आपने भाषिक विस्तार की दृष्टि से भारतीय साहित्य का अध्ययन कर लिया है। अब हम प्रमुख भाषा परिवारों एवं लिपियों के माध्यम से भारतीय साहित्य का विस्तार समझने का प्रयास करेंगे। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की हिन्दी संरचना की पुस्तक में लिपि और भाषा के सम्बन्ध को इस प्रकार व्यक्त किया गया है।

ब्राह्मी लिपि

1. उत्तरी शैली 2. दक्षिणी शैली

उत्तरी शैली के निम्न लिखित चार भेद हैं -

1. गुप्त लिपि 2. कुटिल लिपि 3. शारदा लिपि 4. प्राचीन नागरी लिपि

शारदा लिपि के निम्नलिखित उपभेद हैं –

1. कश्मीरी
2. मंडेआली
3. डोगरी
4. चंबा
5. सिरमौरी
6. जौनसारी
7. कुल्लई
8. मुलतानी
9. सिंधी
10. गुरूमुखी आदि

इसी कर्म ने प्राचीन नागरी लिपि के पुनः दो भेद माने गए हैं

(क)पूर्वी नागरी (इसके उपभेद निम्न हैं)

1. मैथिली कैथी
2. नेवारी
3. उड़िया
4. बंगला
5. असमिया
6. प्राचीन मणीपुरी आदि

(ख)पश्चिमी नागरी

1. गुजराती
2. महाजनी
3. राजस्थानी
4. महाराष्ट्री
5. मोडी़
6. नागरी

ब्रह्मी लिपि के दूसरे भेद अर्थात दक्षिणी शैली के 6 उपभेद निम्नलिखित हैं -

1. तेलुगु कन्नड़ लिपि
2. ग्रन्थ लिपि
3. तमिल लिपि
4. कलिंग लिपि
5. मध्य लिपि
6. पश्चिम लिपि

भारतीय साहित्य के विस्तार को समझने के लिए लिपि और भाषा के इस आरेख को समझना अनिवार्य है। आरेख में हम देख सकते हैं कि एक ही मूल लिपि (एक ही मूल संस्कृति) ब्राह्मी लिपि से ही उत्तरी एवं दक्षिणी शैली का जन्म हुआ और उत्तरी एवं दक्षिणी शैलीयों से अनेक लिपियाँ और उनको अभिव्यक्त करती अनेक भाषाओं का जन्म हुआ। इस आरेख के माध्यम से जहाँ एक ओर हमें भारतीय साहित्य के वैविध्य एवं विस्तार को समझने में मदद मिलती है, वहीं दूसरी एक संकेत भी मिलता है कि मूल रूप से भारतीय संस्कृति एक ही है। अब हम प्रमुख भाषा परिवारों के संदर्भ में भाषिक विस्तार का अध्ययन करेंगें। पूर्व की इकाई में हमने भारत के प्रमुख भाषा परिवारों का अध्ययन किया। अब हम उनका विस्तार से अध्ययन करेंगें। संक्षेप में विश्व के भाषा परिवारों की सूची यहाँ हम देखें -

विश्व के प्रमुख भाषा परिवार निम्न हैं -

1. भारोपीय सेमेटिक
2. हैमेटिक परिवार
3. सूडानी भाषा परिवार
4. नाइजर- कांगो परिवार
5. मूरल-अल्टाइक परिवार
6. द्रविड़ भाषा परिवार
7. चीनी- तब्बती परिवार
8. आस्ट्रो-एशियाटिक परिवार
9. मलाय-पालिनेशयन परिवार
10. अमेरिकी भाषाएँ

भारोपीय परिवार के अंतर्गत भारतीय भाषाओं की अधिंकाश भाषाएँ समेट ली जाती है या आ जाती है। भारोपीय परिवार के विस्तार को हम एक आरेख के माध्यम से इस प्रकार समझ सकते हैं- **भारोपीय परिवार**

भारोपीय भाषा परिवार के अंतर्गत भाषा परिवार निम्नलिखित दो वर्गों की प्रधानता हैं -

1. केंटुम वर्ग 2. शतम् वर्ग

भारोपीय भाषा परिवार के अंतर्गत कश्मीरी-पश्तो, फारसी, इत्यादि भाषाएँ भी आती हैं। इसी शाखा में प्राचीन संस्कृत, लैटिन, ग्रीक आदि भाषाओं के साथ ही हिन्दी, पंजाबी, उर्दू, गुजराती, मराठी, बांगला, ओड़िया, असमिया, लहंदा, सिन्धी जैसी भाषाएँ भी आती है। जहाँ तक द्रविड़ भाषा परिवार का प्रश्न है। उसमें चार प्रमुख भाषाएँ हैं-

द्रविड़ भाषा परिवार

1.तमिल 2. मलयालम 3. कन्नड़ 4.तेलुगु

द्रविड़ भाषा परिवार की चार प्रमुख भाषाओं के अतिरिक्त तुलु, कोडगु या कूर्ग, तोडा, गोंडी, कुई, कुडुख या ओराँव, माल्तो इत्यादि हैं। भातीय साहित्य का तीसरा भाषा-परिवार आस्ट्रिक भाषा परिवार है। एक आरेख के माध्यम से इसे हमें इस प्रकार समझ सकते हैं-

आस्ट्रिक भाषा परिवार

आस्ट्रिक भाषा परिवार के अंतर्गत दो वर्गों को समाहित किया जाता है -

(क) मान-ख्मेर (ख) मुंडा

मान-ख्मेर के अन्तर्गर खासी (मेघालय), निकोबारी (निकोबार)और मुंडा के अन्तर्गत संथाली मुंडारी, कुर्क, सवर भाषाओं का उल्लेख किया जाता है.

भारतीय साहित्य का चौथा भाषा-परिवार चीनी-तिब्बती भाषा परिवार है।

4.3.4 साहित्य का विस्तार

भारतीय साहित्य की व्यापकता के अंतर्गत आपने भौगौलिक, ऐतिहासिक एंव भाषिक विस्तार का अध्ययन किया। अब हम भारतीय साहित्य के साहित्यिक विस्तार का अध्ययन करेंगे। जैसा कि विन्टरनित्स ने प्रस्तावित किया था कि भारतीय साहित्य में-''विषय-वस्तु की दृष्टि से इसमें, व्यापक अर्थ में ,वाङ्मय के समस्त रूपों- धार्मिक और लौकिक महाकाव्य, प्रगीत-काव्य, नाटक, नीति-काव्य तथा गद्य में रचित कथा-आख्यायिका, शास्त्र आदि का अंतर्भाव है।'' स्पष्टयतया हम देख सकते हैंकि साहित्य के समस्त काव्य रूपों एवं भारतीय साहित्य का समस्त भाषाएँ इसके अंतर्गत आती है। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने भारतीय साहित्य के विस्तार पर टिप्पणी करते हुए लिखा है-''तमिल, तेलुगु, मराठी, बंगाली, आदि विभिन्न भाषाओं के माध्यम से अभिव्यक्त, विभिन्न साहित्य क्यों एक होकर भारतीय साहित्य की संज्ञा पाने के अधिकारी हैं, इसको हम हिन्दी साहित्य की अपनी संकल्पना के माध्यम से समझ सकते हैं। जब हम हिन्दी साहित्य की आज बात करते हैं,तब उसे खडी़ बोली में रचित काव्यकृतियों तक ही सीमित नहीं

रखते। इसमें प्रसाद, पंत, निराला, प्रेमचन्द्र, अज्ञेय, यशपाल आदि की रचनाओं के साथ-साथ अवधी, ब्रज, मैथिली आदि भाषाओं के साहित्यकार जायसी, सूर, तुलसी, विद्यापति आदि की कृतियों को भी समाहित करने में संकोचन नहीं करते। इन विभिन्न भाषा/बोलियों के माध्यम से अभिव्यक्त होने वाला साहित्य एक है क्योंकि इनकी रचना करने वाले हिन्दी भाषाई समाज की जातीय चेतना एक है।''

''जिस प्रकार वृजवासी और अवध-निवासी व्यक्तियों की मातृबोली क्रमशः ब्रजभाषा और अवधी है, फिर भी हिन्दी भाषाई समुदाय का एक सदस्य होने के नाते अपने व्यक्तित्व के एक आयाम पर दोनों ही समान रूप से हिन्दी भाषाभाषी है, उसी प्रकार हम यह भी कह सकते हैं कि तमिलनाडु का तमिलभाषी, आंध्र प्रदेश का तेलुगुभाषी, महाराष्ट्र का मराठी भाषी और बंगाल का बँगलाभाषी, अपनी तमाम क्षेत्रीय विशिष्टताओं के बावजूद अपने व्यक्तित्व के एक वृहत्त आयाम पर भारतीय है और उनके द्वारा रचित साहित्य अपने समस्त भषा-भेद के उपरान्त भी एक (भारतीय) साहित्य के अंतर्गत आते हैं, क्योंकि भारतीय समाज की ऐतिहासिक परम्परा, सांस्कृतिक मूल्य और काव्य-संवेदना की ऐतिहासिक परम्परा, सांस्कृतिक मूल्य और काव्य-संवदेना समानधर्मों है और उसके द्वारा रचित साहित्यिक कृतियों में काव्य-वस्तु का संयोजन, कथा-रूढ़ियों का निर्वाह, भाव-बोध का संस्कार और शिल्पगत अभिविन्यास की प्रकृति सामासिक है।''

अभ्यास प्रश्न 1

(क) सही/गलत में उत्तर दीजिए।

1. भारत का भौगोलिक विस्तार कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक फैला हुआ है।
2. मैक्समूलर ने वेदों का समय 1200 ईसा पूर्व का माना है।
3. बालगंगाधार तिलक ने वेदों का रचनाकाल 2000 ईसा पूर्व माना है।
4. दयानन्द सरस्वती ने वेदों का समय 4000 ईसा पूर्व माना है।
5. व्यास ने वेदों का रचनाकाल सृष्टि के प्रारम्भिक चरण को माना है।

(ख) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

1. ब्राह्मी लिपि की.....शैलियाँ प्रचालित है। (2/5/7)
2. उत्तरी शैली की शैली नहीं हैं .....। (पश्चिमी लिपि/गुप्त लिपि/कुटिल लिपि)
3. गुरूमुखी लिपि का संबंध है.....से। (शारदा लिपि/ग्रन्थ लिपि/गुप्त लिपि)
4. उड़िया का संबंध..... से है। (पश्चिमी नागरी/पूर्वी नागरी/ पश्चिमी लिपि)
5. द्रविड़ भाषा परिवार कें अंतर्गत भाषा .....नहीं है। (उड़िया/मलयालभ/कन्नड़)

2- टिप्पणी लिखिए।

1. भारोपीय परिवार

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2- चीनी- तिब्बती भाषा परिवार

.....

.....

.....

.....

.....

4.4 भारतीय साहित्य का सांस्कृतिक विस्तार

भारतीय साहित्य की व्यापकता के अंतर्गत हमने उसके भौगोलिक, ऐतिहासिक, भाषिक एवं साहित्यि विस्तार को समझने का प्रयास किया। अब हम भारतीय साहित्य के सांस्कृतिक विस्तार के तत्वों को समझने का प्रयास करेंगे।

भारतीय साहित्य बनाम राष्ट्र की अवधारणा का प्रश्न

भारतीय साहित्य के मूल में राष्ट्र की अवधारणा का प्रश्न अनुष्युत है। किसी भी देश की राष्ट्रीयता व जातीयता का प्रश्न भौगोलिक भी हो सकता है और सांस्कृतिक भी। कई बार राजनीतिक भी.....। प्राचीन काल में भारत की राष्ट्रीयता की अवधारणा मूल रूप से सांस्कृतिक प्रश्न ही था। भारत, आर्यावर्त जैसे नामकरण हो या 16 महाजनपद की अवधारणा। क्या ये अवधारणाएँ एक राष्ट्र का संकेत नहीं करते? इसी प्रकार 12 ज्योर्तिलिंग एवं चार पीठ की स्थापना क्या इस बात का सूचक नहीं है की सम्पूर्ण भारत एक राष्ट्र की संकल्पना से जुड़ा हुआ है. राजनीतिक प्रश्नों ने भारत की सीमाओं को कम कर दिया है, और भी इस प्रकार का प्रयास किया जा रहा है....। फिर सांस्कृतिकता का प्रश्न जातीयता से जुड़ा हुआ भी है। हर संस्कृति अपनी जातीयत का निर्माण करती ही है। भारतीय जातीय चेतना भी एक ही है और वही उसके एक राष्ट्र का सूचक भी है। महाभारत में भारत की राष्ट्रीयात का संकेत करते हुए कहा गया है- ''इस देश में गंगा, सिंन्धु सरस्वती, गोदावरी, नर्मदा, वितस्ता, सरयू, गोमी, कावेरी आदि नदियाँ प्रवाहित है। इसमें कुरू, पांचाल, शूरसेन, कोसल, कलिंग, विदर्भ, पुण्ड्र, निषाद, निश द्य, कश्मीर, गान्धार, सिंधु-सौवीर्य, द्रविड़, केरल, कर्णाटक, चोल, चुलिक, पुलिन्द, कुलिन्द, कोंकण, आन्ध्र आदि अनेक जनपद है। इस देश में आर्य क्लेच्छा दोनों रहते हैं यवन, चीन, काम्बोज भी इस भारत में है।'' स्पष्ट है कि राष्ट्र वे देश की अवधारणा का विकास उस समय भी हो चुका था।

धर्म प्रधानता

भारतीय संस्कृतिक के मूल में धार्मिकता है। चाहै वह चार पीठ हो या 12 ज्योर्तिलिंग या 52 शक्तिपीठ/सम्पूर्ण में इसी प्रकार की धार्मिक भावना उसे अपने भीतर समोये हुए है।

सहिष्णुता और उदारता

भारतीय संस्कृति अपनी उदारता और सहिष्णुता की भावना के लिए विख्यात रही है। वेदों में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा मिलती है। प्राचीन भारतीय संस्कृतिक समरसता एवं साहर्चय पर आधारित रही है। यानी जाति-धर्म, रंग एवं देश की सीमाओं से युक्त होकर मनुष्यता पर विचार विमर्श करना।

अनेकता में एकता का प्रश्न

हमने अध्ययन किया कि भारत बहुविध भाषा एवं संस्कृति का राष्ट्र है। किन्तु इतनी विविधता के बावजूद सम्पूर्ण राष्ट्र की जातीय चेतना एक ही है। इसे ही अनेकता में एकता कहा गया है।

4.5 सारांश

एम.ए.एच.एल-204 की यह चौथी इकाई है। यह खण्ड भारतीय साहित्य पर आधारित है। भारतीय साहित्य की व्यापकता' शीर्षक इस इकाई का आपने अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपने जाना कि-

- भारतीय साहित्य की व्यापकता को भौगोलिक, ऐतिहासिक, भाषिक एवं साहित्यिक संदर्भों में समझने की जरूरत है।
- भारतीय साहित्य के ऐतिहासिकत स्वरूप को खोजते हुए वेदों की उत्पत्ति से जोड़ा गया है। वेदों का समय प्रामाणिक रूप से ईसा पूर्व 4000 के आस-पास माना जा सकता है।
- भारतीय साहित्य के भाषिक विस्तार को समझने के क्रम में आपने अध्ययन किया कि ब्राह्मी लिपि की उत्तरी -दक्षिणी शैलियों से ही भारत की विभिन्न भाषाओं का जन्म हुआ है।
- संसार के भाषा परिवारों में चार भाषा परिवार- भारोपीय, द्रविड़, भाषा परिवार, चीनी-तिब्बती एवं आस्ट्रो-एशियाटिक परिवार, भारतीय साहित्य के अंतर्गत आते हैं।
- भारतीय साहित्य का प्रमुख भारोपीय परिवार के अंतर्गत आता है भारोपिय परिवार में संस्कृत, हिन्दी, पंजाबी, उर्दू, गुजराती, मराठी, बांगला, ओड़िया, असमिया, जैसी प्रमुख भाषाएँ आती है।

4.6 शब्दावली

- महाकाव्यकालीन सभ्यता - रामायण-महाभारत जैसे महाकाव्यों की सभ्यता।
- बहुभाषिक राष्ट्र - ऐसा राष्ट्र जहाँ कई भाषाएँ (संस्कृति) बोली जाती है।
- भाषा परिवार - संसार की समस्त भाषाओं का उनके व्याकरणिक संरचना के आधार पर वर्गीकरण।
- बृहत्त आयाम - बड़े संदर्भ में देखने की दृष्टि
- कथा- रूढ़ि - कथा की परम्परागत पद्धति।

4.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

(क)

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. सत्य

(ख)

1. 2
2. पश्चिम लिपि
3. शारदा लिपि
4. पूर्वी नागरी
5. उड़िया।

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय साहित्य-त्रिपाठी, रीमछबीला, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2012
2. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास - (सं) नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, द्वितीय संस्करण 2009
3. हिन्दी भाषा: इतिहास और वर्तमान - इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली अगस्त 2010
4. हिन्दी संरचना - इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली अक्टूबर 2009

4.9 सहायक/ उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक साहित्य भारतीय परिप्रेक्ष्य:चौधरी, इन्द्रनाथ, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2010
2. तुलनात्मक अध्ययन: भारतीय भाषाएँ और साहित्य: (सं)- राजूरकर, भ.ह. एवं बोरा राजमल, वाणी प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2008

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय साहित्य के भाषिक विस्तार की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।
2. भारतीय साहित्य की व्यापकता पर प्रकाश डालिए।

इकाई – 5 भारतीय साहित्य का इतिहास

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 पाठ का उद्देश्य
5.3 भारतीय साहित्य का इतिहास
5.3.1 दक्षिणी साहित्य का इतिहास
5.3.2 पूर्वी साहित्य का इतिहास
5.3.3 पश्चिमी साहित्य का इतिहास
5.3.4 हिन्दी साहित्य का इतिहास
5.4 भारतीय साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन
5.5 भारतीय साहित्य: उपलब्धियाँ और अन्य प्रश्न
5.6 सारांश
5.7 शब्दावली
5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
5.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आपने भारतीय साहित्य की अपधारणा एवं व्यापकता से संबंधित इकाईयों का अध्ययन किया। आपने अध्ययन किया कि सम्पूर्ण राष्ट्र में अंतर्निहित जातीय सूत्रों की तलाश की प्रक्रिया में ही भारतीय साहित्य की अवधारणा सामने आई। भारतीय साहित्य के भौगोलिक- ऐतिहासिक स्वरूप से आप परिचित हो चुके हैं.....।आपने भारतीय साहित्य के भाषा विकास की प्रक्रिया का भी अध्ययन किया। इस इकाई में हम भारतीय साहित्य के इतिहास का अध्ययन करेंगें।

भारतीय साहित्य में पूर्वी- पश्चिमी-उत्तरी एवं दक्षिणी सभी भाषाओं के साहित्य का अध्ययन किया जाता है। भारत की प्रमुख भाषाओं के इतिहास एवं उसकी विशेष ताओं का अध्ययन कर तुलनात्मक रूप से भारतीय साहित्य की पीठिका तैयार की जाती है। दक्षिण की भाषाओं तेलुगु, तमिल, मलयालम एवं कन्नड़ से क्या भारतीय आर्यभाषाओं का सांस्कृतिक सम्बन्ध स्थिर किया जा सकता है? पश्चिमी भाषाओं गुजराती-मराठी से क्या हिन्दी की जातीय चेतना का सम्बन्ध है? और फिर है तो किस रूप में ? पूर्वी भाषाओं- बंगला, ओड़िया, असमिया से क्या भारतीय आर्यभाषा (हिन्दी) का जातीय सम्बन्ध है? और है तो किस रूप में? और फिर हिन्दी की सामासिक चेतना भी 18 बोलियों (भाषाओं) में विभक्त है, उनका तात्विक आधार क्या है? इन सभी प्रश्नों को समझने की दृष्टि से भारतीय साहित्य के इतिहास का अध्ययन उपयोगी है।

इस इकाई में हम भारतीय साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से भारतीय साहित्य व संस्कृति की जातीय चेतना को समझने का प्रयास करेंगें। साथ ही कुछ अन्य प्रश्नों पर भी हम इस इकाई में विचार करेंगें।

5.2 पाठ का उद्देश्य

एम.ए.एच.एल- 204 की यह पांचवी इकाई है। यह इकाई भारतीय साहित्य के इतिहास पर केन्द्रित है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- भारतीय साहित्य के इतिहास से परिचित हो सकेंगे।
- दक्षिणी भाषाओं के साहित्य से परिचित हो सकेंगें।
- पश्चिमी भाषाओं के साहित्य से परिचित हो सकेंगें।
- पूर्वी भाषाओं के साहित्य से परिचित हो सकेंगे।
- उत्तरी भाषाओं के साहित्य से परिचित हो सकेंगें।
- भारतीय साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन कर सकेंगें।
- भारतीय साहित्य की उपलब्धियों को जान सकेंगे।
- भारतीय साहित्य से संबंधित पारिभाषिक शब्दावलियों को जान सकेंगे।

5.3 भारतीय साहित्य का इतिहास

पिछली इकाई में आपने भारतीय साहित्य के मूल वेद-उपनिषद इत्यादि के ऐतिहासिक विवेचन का अध्ययन किया। इस इकाई में हम प्रमुख भारतीय भाषाओं व साहित्य का ऐतिहासिक विवेचन करेंगे/ अध्ययन करेंगे।

5.3.1 दक्षिणी साहित्य का इतिहास

आपने अध्ययन किया कि दक्षिणी साहित्य का संबंध द्राविड़ भाषा परिवार से है। इस भाषा परिवार में चार प्रमुख भाषाएँ हैं। तमिल, मलयालम, कन्नड़ एवं तेलुगु भाषा से मिलकर यह भाषा परिवार बना है। संस्कृत के बाद के भाषा विकास क्रम में ये भाषाएँ आती है। दक्षिणी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए प्रमुख भाषाओं का इतिहास एवं उसके साहित्य को देखना प्रासांगिक होगा।

तमिल भाषा का इतिहास

दक्षिण भारतीय भाषाओं में तमिल भाषा सर्वाधिक संपन्न मानी जाती है। तमिल भाषा की रचनाएँ प्रथम शताब्दी से भी पूर्व मिलनी शुरू हो जाती है, किन्तु इसका भाषा का वास्तविक विकास 7-8 वी शताब्दी से मिलता है। तमिल साहित्य का काल विभाजन करते हुए उसे सामान्यतः मोटे तौर पर प्राचीन काल एवं मध्यकाल में विभाजित किया गया है। आइए तमिल साहित्य का काल-विभाजन देखें-

1. प्राचीनकाल - 500 ई.पू. से 600 ई. तक

प्राचीनकाल की कृतियों को भी तीन भागों में विभक्त किया गया है।

1. संगम युग (संघकालीन कृतियाँ)
2. संघकालोत्तर
3. महाकाव्य द्वय

2- मध्यकाल - 600 ई. से 1200 ई.

मध्यकाल की कृतियों को अवान्तर रूप से कई भागों में विभक्त कर दिया गया है।-

1. भक्ति साहित्य - इसमें शैवनायमार और वैष्णव आलवार भक्तों की कृतियों आती है।
2. जैन, बौद्ध प्रबन्धकाव्य एवं कम्बन रामायण।

3. उत्तरकाल- 1200 ई. से 1750 ई. तक

3- परवर्ती काल -17 वीं से 19 वीं सदी तक, इसमें प्रमुख रूप से मुस्लिम साहित्य आता है।

4- आधुनिक काल - 19 वीं सदी से अब तक।

1. प्राचीनकाल तमिल साहित्य (संगम साहित्य)

तमिल के प्राचीन साहित्य में संगम साहित्य सर्वाधिक प्राचीन है। संगम साहित्य में लगभग 381 पद्य व 782 वर्णनात्मक प्रगीत हैं। संगम साहित्य के संकलन को दो वर्गों में रखा गया है- 1- एट्तो है या अष्ट संग्रही 2- पत्तुपपाट्टु या गीतदशी अष्ट संग्रही के उक्त आठ संकलनों के पदों में

मनुष्य की अनुभूतियों एवं प्राकृतिक का चित्र खींचा गया है। गीतदशी की रचनाओं में मुख्य रूप से राजवंशों के पराक्रम प्रेम एवं प्रकृति वर्णन का चित्रण मिलता है।

2. संघकालोत्तर या नीतिकाल

नीतिकाव्यों का समय 100 से 500 ई. तक माना गया है। नीतिकाव्यों की रचना के पीछे चेर, चोल और पांड्य राजाओं के शासनकाल को अशान्तिकारक बताया गया है। इस युग में रचित काव्यों को 'पदिनेन-कील-कणक्कु' (अठारह लघु नीति ग्रन्थ) कहा गया है। 18 लघु गीतों में 5 प्रेम संबंधी हैं। 18 ग्रन्थों में दो ग्रन्थ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 1. तिरूककुरल 2. नालडियार।

तिरूककुरल के रचयिता 'तिरूवल्लुवर' है। यह सार्वभौमिक दर्शन का ग्रन्थ है। सहधर्मिता, धर्माचरण, सांसारिक्ता, प्रेम एवं जीवन बोध से समन्वित यह सुन्दर रचना है। नालडियार, जैन कवियों के विरचित पद्यों का संग्रह हैं।

3. महाकाव्य-द्वय

तमिल साहित्य में शिप्पदिकारम् और मणिमेखला को महाकाव्य-द्वय की संज्ञा प्राप्त है। शिप्पदिकारम् (नूपुर काव्य) के रचयिता इलंगो अडिगल है। इस महाकाव्य में कोवलन एवं कन्नगी के माध्यम से तत्कालीन समाज का व्यापक चित्र खींचा गया है। मणि मेखलै, महाकाव्य, शिप्पदिकारम् के आगे का विस्तार माना गया है। यह महाकाव्य कोवलन तथा माधवी की पुत्री मणि मेखलै के आध्यात्मिक जीवन की कहानी है।

2- मध्यकाल

1. मध्यकालीन तमिल साहित्य वैष्णव भक्ति आन्दोलन के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध रहा है। शैव नायनमार तथा वैष्णव आलवार संतों के भक्तिपूर्ण गीत ही इस युग के साहित्य के विशेष गौरव है।

शैव नायनकारों की संख्या लगभग 63है, जिनमें विशेष रूप से प्रसिद्ध है- संत तिरूमूलरू, तिरूज्ञान सम्बन्धर, तिरूना, वक्करसर, सुन्दरर, माणिक्यावाचक एवं कारैक्काल अम्मैयार्।

वैष्णव आलवार भक्तों का भारतीय साहित्य में विशेष स्थान है। वैष्णव आलवार भक्त प्रयाः निम्न जातियों से आये हुए थे। आलवार भक्तों के पदों का संकलन आचार्य नाथमुनि द्वारा किया गया है। इनका समय 3-9 वीं सदी के बीच है। 12 आलवार संत हैं- पोइगै आलवार (सरोयोगी), पूदत्तालयार (भूतयोगी), पेयालवार (पिशाचयोगी), तिरूमलिशै (भक्तिसार), तिरूप्पन, टोंडरडिप्पडि, तिरूमंगै (परकाल), कुलशेखर, पेरियालवार (विष्णुचित्त), आंडाल (गोदादेवी), बम्मालवार (परांकुश) एवं मधुर कवि।

2. जैन, बौद्ध प्रबन्धकाव्य एवं कम्बन रामायण-

जैन तथा बौद्ध साधुओं द्वारा विरचित महाकाव्य विशेष रूप से चर्चित रहै। इस धारा के महत्त्व पूर्ण महाकाव्य है1. पेरूमकथै 2. जीवक चिन्तामणि 3. चूलामणि 4. वलैयापति 5. कुण्डलकेशी।

कम्बन रामायण

तमिल भाषा में विरचित रामायण को कम्ब द्वारा रचे जाने के कारण इसे कंब रामायण भी कहते हैं। तमिल साहित्य में इस रचना का विशिष्ठ स्थान है। वाल्मीकि रामायण की कथा को आधार बनाते हुए भी कम्ब ने अपने रचना-कौशल एवं मौलिकता का परिचय जगह -जगह दिया है।

2. उत्तरकाल: 1200 ई. से 1750 ई. तक

उत्तरकाल के प्रसिद्ध कवियों में ''औण्वैयार'' नामक एक महान कवयित्री की गणना की जाती है। इनके द्वारा लिखित आतिचूडि, मुदुरै आदि विशेष लोकप्रिय है। इसी युग में जयनकोंडार द्वारा विरचित कलिंगत्तुपरणि रचना विशेष लोकप्रिय है। इसी युग मे सिद्ध नाम से प्रसिद्ध 18 रचयिताओं की गीतात्मक कृतियाँ विशेष रूप से प्रचलित है।

3. परवर्तीकाल-

इस युग के प्रसिद्ध कवियों में मीनाक्षी सुंदरम पिल्लै हैं। इनकी कृतियों में 16 पुराण,9 पिल्लै एवं 11 अंदानियाँ विशेष चर्चित है। इसी युग में रामलिंग स्वामिगल भी थे।

4. आधुनिक काल

जिस प्रकार हिन्दी भाषा में नवजागरणवादी चेतना का आगमन हुआ, उसी प्रकार तमिल साहित्य में भी आधुनिक काल में नवजागरणवादी प्रवृत्तियों का उदय हुआ। तमिल साहित्य के नवजागरणवादी प्रमुख कवियों में सुब्रह्मण्यम् भारती, भारतीदासन, शुद्धानन्द भारती, देशिक विनायक पिल्लै, कोत्तागंगलम सुब्बु, नामक्कल रामलिंगम पिल्लै एवं कंबदासन आदि प्रमुख है। 1950 ई. के बाद तमिल साहित्य में नई तरह की कविता का (आधुनिक मूल्यों से युक्त) प्रादुर्भाव हुआ। इस धारा के प्रमुख कवियों में अचलांविकै अम्मैयार, नानल, सोमू, बालभारती, तूरन, वापणीदासन, के. एम. बालसुब्रह्मण्यम्, कृष्णदासन, त्रिलोक सीताराम, भास्करन, दुरैसामी, कुलियन, करूणानिधि , के. वी. जगन्नाथन, तंगवेलन, अकलन इत्यादि है।

तेलुगु भाषा एवं साहित्य

दक्षिण भारतीय भाषाओं में तेलुगु भाषा का अपना विशाल साहित्य है। भाषा के अर्थ में 1000 ई. केबाद इसका विकास हुआ। 1200 ई. के बाद साहित्यिक दष्टि से इसका विशेष प्रचार एवं प्रसार हुआ है। तेलुगु साहित्य को तीन कालों में विभाजित किया गया है-

1. **आदिकाल 2. मध्यकाल 3. आधुनिक काल ।**

1- आदिकाल- आदिकाल का एक नाम 'प्राग्नवदयुग' भी है । इसका समय 1000 ई. से 1380 ई. तक माना गया है। नन्नय भट्ट, तिकन्ना एवं एर्रना को तेलुगु साहित्य का कवित्रय कहा गया है। नन्नय भट्ट तेलुगु के आदि कवि कहै गये हैं। इन्होंने ''आन्ध्र महाभारतम्'' की रचना की है। आदिकाल की अन्य कृतियों में वासवेश्वर द्वारा 'वीर शैव धर्म' का प्रवर्त्तन किया गया है। तेलुगु का प्राचीनतम रामायण गोन बुद्धा रेड्डि द्वारा रचित 'रंगनाथ रामायण' है। पुराण साहित्य पर कार्य की दृष्टि से महाकवि श्रीनाथ एवं पोतन्ना की गणना की जाती है।

2- मध्यकाल - मध्यकाल को प्रबन्ध युग भी कहा गया है। इस नामकरण का अधार इस युग में बहुत से प्रबन्धों की रचना का होना है। कृष्णदंवराय के दरबारी कवियों में

अल्लासानि पेद्दना, नंदि तिम्मना, रामभद्र, घूर्जटी, मल्लना, तैनालि रामकृष्ण, पिंगलिसूरना और भट्टमूर्ति आदि हैं।

3- आधुनिक युग- वीरेशलिंगम, वडडादि सुब्बाराव जयंति रामय्या, सुब्बाराव, वासुदेवशास्त्री, श्रीपाद कृष्णमूर्ति, विश्वनाथ सत्यनारायण आदि कवियों ने राष्ट्रीय मनोवृत्तियॉ विकसित करने में विशेष भूमिका निभाई। तेलुगु साहित्य की प्रमुख साहित्यिक प्रवृत्तियों में स्वच्छन्दतावाद, अभ्युदय कविता (प्रगतिशील काव्यान्दोलन), प्रयोगवाद और नई कविता, साठोत्तरी कविता इत्यादि धाराएँ मिलती है।इस दृष्टि से ये हिन्दी कविता की तरह ही, उसी क्रम से विकसित हुए हैं।

कन्नड भाषा एवं साहित्य

कन्नड़ साहित्य का इतिहास 2-5 वीं सदी के बीच में मिलता है। कन्नड़ साहित्य को सुविधा की दृष्टि से आदिकाल, मध्यकाल एवं आधुनिककाल में विभक्त कर सकते हैं।

आदिकाल - 950 ई. ' 1150 ई के बीच के समय का कन्नड़ साहित्य का स्र्वणयुग कहते हैं। इस काल जिन्हें रत्नत्रयी या कवित्रय कहा जाता है। पंप ने दो काव्यों की रचना की है- आदिपुराण एवं विक्रमार्जुन विजयम्। पोन्न द्वारा रचित कृतियों में 'शातिपुराण' नाम कृति का विशेष महत्त्व है। रन्न ने अजितपुराण, गदायुद्धम या सहसभीम-विजयम् जैसी कृतियों का रचना की है। इस युग के अन्या लेखकों में नागचन्द्र, चावुंड, नाग वर्मा, केशिराज, नेमिचन्द्र, रूद्रभट्ट, हंरिहर, राघवांक आदि प्रमुख है।

मध्यकाल - कन्नड़ साहित्य का मध्यकाल 1200-1400 ई. तक माना जाता है। इस काल के प्रमुख आन्दोलनों में 12 वीं शताब्दी के वीरशैववाद की गणना की जाती है। इसके उत्प्रेरक बसवेश्वर थे। इस आन्दोलन के माध्यम से 'वचन शैली' का प्रादुर्भाव हुआ। 12 वीं शताब्दी से 15 वी शताब्दी तक का काल' वसवयुग' कहा जाता है। वंसवेश्वर इस क्रान्ति के उत्प्रेरक थे।

इसी प्रकार कर्नाटक में वैष्णव साहित्य की भी समृद्ध परम्परा नही है। यहाँ कृष्णभक्ति को प्रचारित करने में श्री मध्वाचार्य की प्रमुख भूमिका है।

आधुनिककाल- 17 वीं सदी के बाद कन्नड़ साहित्य का ह्रास होना प्रारम्भ होता है। 17-19वीं सदी तक कन्नड़ साहित्य में अंधकार काल के नाम से जाना जाता है। 19वीं सदी के बाद से कन्नड़ साहित्य में आधुनिक काल का प्रवेश होता है। बेन्द्रे, मंगलूर, विनायक कृष्ण गोकाक, श्री कंठप्पा, क. शंकरभट्ट ने देशभक्ति को कन्नड़ साहित्य से जोड़ा। कन्नड़ साहित्य में स्वच्छन्द तावाद (भावगीत), प्रगतिशील चेनता एवं प्रयोगवादी कविता की प्रवृत्तियॉ हिन्दी साहित्य के क्रम में ही देखने को मिलता है।

मलयालम भाषा एवं साहित्य का इतिहास

मलयालम भाषा, तमिल भाषा की एक शाखा के रूप में विकसित हुई है। मलयालम भाषा का इतिहास चौथी सदी से स्पष्ट रूप से दिखने लगता है, किन्तु इसका साहित्य 13 वीं सदी से व्यवस्थित रूप से मिलना प्रारम्भ होता है। मलयालम भाषा एवं साहित्य को सुविधानुसार तीन कालों में विभक्त किया गया है- 1. आदिकाल 3. मध्यकाल 3. आधुनिककाल

1. आदिकाल- आदिकालीन मलयालम साहित्य में तीन सम्प्रदाय देखने को मिलते हैं- 1. पच्च मलयालम (शुद्ध मलयालम भाषा में अभिव्यक्ति) 2. तमिल सम्प्रदाय 3. संस्कृत सम्प्रदाय। पच्च मलयालम में मुख्य रूप से लोकगीत है। इसके रचनाकार रामवीर वर्मा है। संस्कृत सम्प्रदाय में लीला तिलकम्, संदेश काव्य इत्यादि महत्त्व पूर्ण कृतियाँ है।

2. **मध्य काल** (भक्तिकाल एवं श्रृंगारिक काव्य)

मलयालम के भक्तिकाल में संतसाहित्य के कुछ सूत्र हमें 'देवीपाट्टु' और लोकगीतों में मिलते हैं। किन्तु प्रबंध गीतिकाव्यों में सबसे प्रसिद्ध रचना 'कृष्णगाथा' है। इसके रचनाकार चेकश्शेरी नंबूतिरी है। एषुतच्छन द्वारा विरचित विलिप्पाट्टु भी इस युग की महत्त्व पूर्ण रचना है। 14 वीं से लेकर 17 वीं शताब्दी तक मलयालमक भाषा में चंपूकाव्यों की लम्बी परम्परा भी हमें देखने का मिलता है। इनमें 'रामायण चंपू' सबसे प्रसिद्ध है।

19 वीं सदी में वेणमिण नंपूतिरिप्पाट ने श्रृंगारिक एवं मार्मिक पदों की रचना कर श्रृंगारिक पदों की शुरूआत की। 'प्रबन्धम्' वेण्मणि का श्रृंगारिक काव्य है। इसी प्रकार संदेश काव्य परम्परा में ''उण्णुनीलि संदेश' का भी महत्त्व पूर्ण स्थान है

3. **आधुनिककाल** - 19 वीं सदी से करेल वर्मा से मलयालम भाषा में नई चेतना का प्रवेश होता है। के.सी. पिल्लई, ए.आर. राजराज वर्मा एवं सी.एस. सुब्रह्मण्यम्पोट्टी के माध्यम से नवीन भाव बोध मलयालम साहित्य को प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार 20 वी शताब्दी में कुमार असन, वल्लतोल एवं उल्लूर के माध्यम से मलयालम साहित्य का प्रचुर विकास हुआ।

5.3.2 पूर्वी साहित्य का इतिहास

पूर्वी भाषा में प्रमुख रूप से बंगला, उड़िया एवं असमिया भाषा के साहित्य की गणना की जाती है। यहाँ संक्षेप में हम नई भाषाओं के इतिहास का अध्ययन करेंगें।

बंगला साहित्य का इतिहास

बंगला भाषा का सम्बन्ध मागधी अपभ्रंश से माना जाता है। बंग भाषा की बोली होने कारण इसका नाम बंगला पड़ा है। बंगला भाषा व साहित्य को तीन भागों में विभाजित किया गया है। 1. प्राचीनकाल या आदिकालीन साहित्य (950से 1350ई. तक) 2. मध्यकाली बंगला (1350 से 1800 ई. तक) 3. आधुनिक बंगला साहित्य (1800 ई. से आज तक)

1. **प्राचीनकाल का बंगला साहित्य** - सिद्धों के चर्यागीतों को प्राचीन बंगला साहित्य का प्राचीनतम साहित्य कहा जाता है। बौद्ध- नाथ साहित्य के अतिरिक्त जयदेव कृत 'गीत गोविन्द;' इस काल की विशेष उपलब्धि है।

2. **मध्यकालीन बंगला साहित्य**- मध्यकालीन बंगला साहित्य की प्रमुख कृतियों में कृतिवास ओझा की 'कृतिवास रामायण' बंगला साहित्य की उपलब्धि ही है। मालाधर बसु द्वारा लिखित, श्री कृष्ण विजय' प्रमुख प्रबन्धकाव्य है। चंडीदास रचित 'श्रीकृष्ण कीर्तन' अपने गीतात्मकता के कारण उल्लेखनीय है। चैतन्य महाप्रमभु द्वारा रचित 'चैतन्यचरितामृत' इस युग की विशिष्ट कृति है। मध्यकाल की अन्या उल्लेखनीय बंगला कृति में 16 वीं सदी का मंगलकाव्य एवं दौलत काजी रचित 'लोरचन्द्राणी' विशेष उल्लेखनीय है।

3. **आधुनिककालीन बंगला साहित्य-**

भारतीय भाषाओं में नवजागरणवादी स्वर प्रदान करने में बांगला भाषा एवं साहित्य की महत्त्व पूर्ण भूमिका रही है। चाहै वह फोर्टविलियम कॉलेज का गद्य साहित्य रहा हो या प्रथम हिन्दी समाचार पत्र उदन्त मार्तण्ड। नवजागरणवादी चेतना के प्रवक्ताओं में ईश्वर चन्द्रगुप्त, रंगालाल, मधुसूदन, हैमचन्द्र एवं नवीनचन्द्र की महत्त्व पूर्ण भूमिका रही है।

इसी प्रकार स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों के विकास में भी बंगला साहित्य की महत्त्व पूर्ण भूमिका रही है। विहारीलाल चक्रवर्ती, सुरेन्द्रनाथ मजूमदार, द्विजेन्द्रनाथ टैगोर, देवेन्द्रनाथ सेन, गोविन्द्रचन्द्रदास, द्विजेन्द्रलाल राय एवं रवीन्द्रनाथ टैगोर इस प्रकृति के प्रमुख कवि हैं। गद्य साहित्य में भी बंगला साहित्य का महत्पर्ण योगदान रहा है। बंकिमचन्द्र, रवीन्द्रनाथ टैगोर, ताराशंकर वंद्योपाध्याय, शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय, वुद्धदेव वसु इत्यादि प्रमुख कथाकार रहै हैं।

उड़िया भाषा एवं साहित्य का इतिहास

उड़िया भाषा का ऐतिहासिक साक्ष्य लगभग 1000 वर्ष पुराना है। सुविधा की दृष्टि से इसे भी तीन कालों में विभाजित किया गया है।-

1. **आदिकाल 2. मध्यकाल 3. आधुनिककाल**

1. **आदिकाल**- सिद्धों- नाथों की कुछ रचनाएँ बंगला के साथ ही उड़िया भाषा में भी मिलती हैं। 'बौद्धगान ओ दोहा' के कवि-लुइपा, कन्हपा एवं शबरपाद उत्कल (उड़िया) के ही थे। उड़िया साहित्य में सरलादास के 'महाभारत' का विशेष गौरव है। इस रचना ने उड़िया जनता की चेतना, उनके आदर्श व जातीय चेतना को उभारने में सर्वाधिक योग दिया है। उड़िया साहित्य में इस युग को पंचसखा- बलरामदास, जगन्नाथदास, अनंतदास, यशवंतदास, अच्चुतानंददास- के नाम से भी जाना जाता है। इसी प्रकार जगन्नाथ दास के भागवत को भी उड़िया समाज में ''उड़िया जनता की बाइबिल'' की संज्ञा प्राप्त है।

2. **मध्यकाल** - धनंजयभंज को मध्यकाल का प्रतिष्ठापक कहा जाता है। धनंजयभंज की 'रघुनाथ विलास' प्रसिद्ध रचना है। 'नीलाद्रि- महोत्सव' इनकी एक अन्य प्रसिद्ध कृति है। इन्हीं के समकालीन दीनकृष्णदास का 'रसकल्लोल' प्रसिद्ध रचना है। उपेन्द्रभंज मध्यकाल के प्रसिद्ध कवि है। इनकी रचनाओं में लावण्यवती, कोटिब्रह्मंड सुन्दरी, आदि प्रमुख रचनाएँ हैं। इस काल के अन्य प्रसिद्ध कवियों में - सदानन्द कवि सूर्यब्रह्मा, केशव पटनायक, ब्रजनाथ बलचैना, कृष्णसिंह, विश्वम्भर दास, कवि सूर्य बल्देव रथ, गोपाल (कृत गीतवली), भीमा भाँई आदि हैं।

3. **आधुनिककाल-** 1879 ई. में आधुनिक उड़िया साहित्य का प्रवर्त्तन हुआ। 1873 ई. में राधानाथ, मधुसूदन की कवितावली प्रकाशित हुई, 1873 ई. में उत्कलदर्पण प्रकाशित हुआ। रामशंकर ने प्रथम उपन्यास लिखा। आधुनिक उड़िया साहित्य में राधानाथ, मधुसूदन और फकीरमोहन का विशिष्ट स्थान है। राधानाथ की चिलिका, मधुसूदन राव की कविताएँ तथा फकीर मोहन सेनापति को छमाण, आठ गुण्ठ, भामू लछमा, प्रायश्चित काल के अन्या उड़िया साहित्यकारों में गोपबन्धुदास का विशिष्ठ स्थान है। गोपबन्धुदास दास द्वरा विरचित

'राष्ट्रीयसत्यवादी बनविद्यालय' का उड़िया साहित्य के विकास में क्रान्तिकारी महत्त्व है। उड़िया के अन्य कवियों में चिंतामणि महति, कुंतलाकुमारी, लुक्ष्मीकांत महापात्र, कृपासिन्धुमित्र, चन्द्रमणिदास आदि उल्लेखनीय है। सन् 1935 ई. के बाद में भगवती चरण पाणिग्रही ने' नवयुग साहित्य संसद' नामक संस्था की स्थापना की और 'आधुनिक' शीर्षक से एक मासिक पत्र का प्रकाशन भी किया। कालिंदीचरण पाणिग्रही और बैकुंठनाथ अतीन्द्रिय ने उड़िया कविता में क्रान्ति का स्वर तेज किया।

असमिया भाषा एवं साहित्य का इतिहास

असम प्रदेश में बोली जाने वाली भाषा होने के कारण इसका नाम असमिया पडा है। इसका अन्य नाम प्राग्ज्योतिश व कामरूप भी है। असमी भाषा का समब्न्ध मागधी अपभ्रंश से है। असमिया साहित्य को चार कालों में विभाजित किया गया है।

1. **प्राक्वैष्णकाल 2. वैष्णवकाल 3. बुरंजी गद्यकाल 4. आधुनिककाल।**

1. **प्राक्वैष्णकाल**- सातवीं शताब्दी के चीनी यात्री छेनसांग ने असमिया भाषा का उल्लेख किया है। मत्स्येन्द्रनाथ तथा सरहपाद क जन्म कामरूप (आसाम) ही माना गया है। सिद्धों द्वारा विरचित चर्यापद / चर्यागीतों का कुछ सम्बन्ध आसाम से भी है। असाम के रचनाकार डाक की सूक्तियों पर वैष्णव विचारधारा का पर्याप्त प्रभाव है। 'प्राक्वैष्णवकाल' नामकरण के पीछे यही तर्क दिया गया है। माधव कंदली इस काल के श्रेष्ठ कवि है- उनकी रामायण व देवजित काव्य प्रमुख रचनाएँ हैं। हैम सरस्वती की ''हरगौरीसंवाद'' में जयद्रथ-वध की कथा को आधार बनाय गया है।

2. **वैष्णवकाल** - वैष्णवकाल में श्री शंकरदेव व उनके शिष् माधवदेव की कृतियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं इनके माधम से असमिया साहित्य में पुनर्जागरण का प्रवेश माना जाता है। शंकरदेव एवं माधवदेव की रचनाओं में असमिया साहित्य को सर्वाधिक प्रभावित किया। शंकरदेव द्वारा प्रवर्तित 'शरणिया पंथ' ने सर्वमान्य की एकता पर बल दिया। माधवदेव ने वरगती, चोरधरा, पिम्परा, गुचुवा आदि नाटकों के माध्यम से वैष्णव भक्ति का प्रचार किया। अनन्त कन्दली और राम सरस्वती इसी काल के प्रसिद्ध कवि थे।

3. **बुरंजी गद्यकाल**-ब्रजबुलि मिश्रित गद्य को ही बुरंजी गद्य कहा गया है। असमिया गद्य का प्रारंभिक सूत्र शंकरदेव और माधवदेव के नाटकों में मिलता है। भट्टदेव ने भगवतपुराण और भगवद्गीता का, गोपालचन्द्र द्विज ने भक्तिरत्नाकर का, रघुनाथ महन्त की कथारामायण अज्ञात लेखक की पद्मपुराण, कृष्णानन्द का सत्यता तंत्र और कथाघोषा प्रसिद्ध गद्य रचनाएँ हैं।

4. **आधुनिक काल**- असमिया साहित्य में आधुनिकता का प्रेवश 19वीं शताब्दी में हुआ। आनन्दराम ढेकियाल फूकन ने असमिया साहित्य को राष्ट्रीय नवजागरण एवं गौरव से जोड़ा । इसके बाद चन्द्रकुमार अग्रवाल, लक्ष्मीकान्त, बेजबरूआ, हैमचन्द्र गोस्वामी, पद्मनाथ गोहांई बरूआ जैसे लेखक आधुनिक असमिया साहित्य के निर्माता कहै जाते हैं।

5.3.3 पश्चिमी साहित्य का इतिहास

पश्चिमी साहित्य में प्रमुख रूप से मराठी, गुजराती एवं पंजाबी साहित्य का अध्ययन किया जाता है। यहाँ संक्षेप में हम इन भाषाओं का इतिहास देखने का प्रयास करेंगे।

मराठी भाषा एवं साहित्य का इतिहास-

मराठी का संबंध महाराष्ट्री प्राकृत से बाताया गया है। मराठी भाषा का प्राचीनतम समय 9 वीं सदी में स्थिर किया गया है। किन्तु साहित्य के रूप में इसका समय 12 वीं शताब्दी के आस-पास स्थिर किया गया है। मराठी के आदिकवि हैं। इनका ग्रन्थ विवेकसिन्धु है।

मराठी साहित्य का काल विभाजन-

मराठी साहित्य को प्रमुख रूप से दो कालों में विभक्त किया गया है-

1. **प्राचीनकाल** (1000-18000 ई. तक)
2. **आधुनिककाल** - 1800 ई. के बाद का साहित्य

1. प्राचीनकाल मराठी साहित्य को 6 वर्गों में विभाजित किया गया है- महानुभावकाल, ज्ञानेश्वर-नामदेवकाल, एकनाथकाल, तुकाराम- रामदासकाल, मोरोपंतकाल, प्रभाकर राम जोशीकाल

गुजराती भाषा एवं साहित्य का इतिहास

गुरजराती प्रेदश में बोली जाने के कारण इसे गुजराती कहा गया है। माना जाता है कि गुजराती का विकास गुजराती के नागर अपभ्रंश से हुआ है।

गुजराती साहित्य: काल विभाजन

गुजराती साहित्य को तीन कालों में विभक्त किया गया है-

1. **आदिकाल** (हैमयुग, रासयुग) सन् 1000 से 1500 तक।
2. **मध्यकाल**: (नरसिंहयुग, नाकर युग, श्यामल युग, प्रेमानन्द युग, दयारामयुग) सन् 1500 से 1850 तक
3. **आधुनिक काल**: (दलपत- नर्मदयुग, गोवर्द्धन युग, गांधीयुग आदि।) सन् 1850 से आज तक

गुजराती भाषा के प्रमुख साहित्यकारों में धनपाल, हैमचन्द्र, शालिभद्रसूरि, नरसिंहमेहता, मीराबाई, भालण, पदमनाथ, मांडण, नाकर, प्रेमानन्द, शामल भट्ट, प्रीतमदास, दयाराम, दलपतराम, नर्मदाशंकर, गोवर्धनराम, महात्मा गांधी, काका कालेकर, कन्हैयालाल मुंशी इत्यादि हैं।

पंजाबी भाषा एवं साहित्य का इतिहास-

पंजाब प्रदेश में बोली जानेवाली भाषा होने के कारण इस भाषा का नाम पंजाबी पड़ा है। पंजाबी का अर्थ है- पाँच नदियों का देश। पंजाबी भाषा की लिपि गुरूमुखी है।

पंजाबी साहित्य का काल विभाजन

1. **आदिकाल 2. मध्यकाल एवं 3. आधुनिक काल**

1. **आदिकाल** पंजाबी साहित्य में उल्लेखनीय साहित्य नहीं है। सिद्ध-नाथ साहित्य का एक हिस्सा पंजाबी से जरूर संबंधित रहा है।

2. **मध्यकाल-**

मध्यकाल का पंजाबी साहित्य विशेष उल्लेखनीय रहा है। मध्यकाल में पंजाबी की चार काव्य परम्पराएँ देखने को मिलती है- सूफी परम्परा, गुरूनानक की संत परम्परा, किस्सा और वार।

सूफी परम्परा में शेख फरीद, शाह हुसैन बुल्लेशाह और सिहरफी आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

सिक्ख गुरूओं की परम्परा का आधार ग्रन्थ '' ग्रन्थ साहिब'' है। ग्रन्थ साहिब सिक्ख गुरूओं की वाणियों का संकलन है। इस परम्परा में गुरूनानक, अंगद, अमरदास, रामदास, अर्जुन एवं गुरू तेग बहादुर की रचनाएँ संकलित है।

किस्सा और वार प्रमुखतः प्रेमकथा है। बुल्लेशाह और वारिस शाह इस परम्परा के प्रमुख कवि हैं।

3. **आधुनिक काल-**

19 वीं शताब्दी के बाद से पंजाबी भाषा एवं साहित्य में आधुनिकता का प्रवेश हुआ। भाई वीरसिंह , पूरनसिंह, धनीराम इत्यादि इस युग के चर्चित रचनाकार हैं।

5.3.4 हिन्दी साहित्य का इतिहास

हिन्दी साहित्य का इतिहास

शाब्दिक रूप में भले ही हिन्दी शब्द का प्रयोग पांचबी-सातवीं शताब्दी से मिलने लगता है, किन्तु साहित्य के रूप में इसका इतिहास 7वीं शताब्दी से माना जाये या 10वीं-11वीं शताब्दी से, यह प्रश्न अवश्य विवादित रहा है। अपभ्रंश की रचनाओं को हिन्दी साहित्य में सम्मिलित किया जाये कि नहीं, यह प्रश्न विवादित ही रहा है। फिर भी मोटे रूप में 10वीं-11वीं शताब्दी से अधिकांश लोगां ने हिन्दी साहित्य का प्रारम्भ माना है। हिन्दी भाषा का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से माना जाता है। संस्कृत-पालि-प्राकृत-अपभ्रंश -हिन्दी का भाषा विकास क्रम स्थिर किया गया है।

हिन्दी भाषा एवं साहित्य के इतिहास के 4 भागों में विभक्त किया गया है।

आदिकाल - 1000-1400 ई.
भक्तिकाल - 1400-1650 ई.
रीतिकाल - 1650 - 1850 ई.
आधुनिक काल - 1850 ई. से अब तक

अभ्यास प्रश्न 1

टिप्पणी कीजिए।

1. तमिल साहित्य का काल विभाजन

.....

.....

.....

.....

2. मराठी साहित्य का काल विभाजन

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. तमिल साहित्य के प्राचीन युग को.....कहा गया है। (संगमकाल/परवर्ती काल/उत्तरकाल)
2. शिप्पदिकाराम्.....साहित्य का महाकाव्य है। (तेलुगु/मलायलम/तमिल)
3. तेलुगु आदिकाव्य का एक नाम ..... है। (प्रबन्धयुग/प्राग्नबदयुग/मध्यकाल)
4. कन्नड़भाषा के रत्नत्रय नहीं हैं। (पंप/पोप/बसवेश्वर)
5. मलायलम भाषा में ..... काल माने गये हैं। (5/3/10)

सत्य / असत्य का चुनाव कीजिए।

1. बंकिमचन्द्र चटर्जी बंगला भाषा के साहित्यकार है।
2. जगन्नाथदास की भागवत को उड़िया की बाइबिल कहा गया है।
3. शंकरदेव तमिल भाषा के साहित्यकार हैं।
4. मराठी पश्चिमी साहित्य के अंतर्गत आता है।
5. हैमचन्द्र गुजराती भाषा के साहित्यकार हैं।

5.4 भारतीय साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन

प्रमुख भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि कुछ ऐसे तत्व हैं जो प्रायः भारतीय भाषाओं में मिलते हैं सर्वप्रथम समानता का तत्व है भाषाओं का काल विभाजन। प्रायः भाषाएँ आदिकाल, मध्यकाल एवं आधुनिककाल में विभक्त है। हाँ इस संदर्भ में साहित्य के प्रारम्भ होने का समय अवश्य अलग है, लेकिन आधुनिककाल का समय प्रायः भाषाओं में समान है। इसका अर्थ यह है कि आधुनिक चेतना का आगमन भारतीय भाषाओं की यह है कि भक्तिकालीन प्रवृत्तियाँ प्रायः भाषाओं में पाई जाती है। हिन्दी, पंजाबी, मराठी, बंगला जैसी भाषाओं के तो कालक्रम में भी काफी सामनता है। तीसरी समानता गद्य के स्तर पर है। गद्य का व्यापक रूप में प्रयोग भी आधुनिक काल में देखने को मिलता है, जो प्रायः भाषाओं में हम

देख सकते हैं। इसी प्रकार स्वच्छन्दतावादी, प्रगतिवादी एवं यर्थाथवादी प्रवृत्तियों में भी काफी हद तक साम्य देखने को मिलता है।

5.6 सारांश

एम.ए.एच.एल-204 की यह पांचवी इकाई है। यह इकाई भारतीय साहित्य के इतिहास से संबंधित है। इस इकाई का आपने अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपने जाना कि-

- भारतीय साहित्य के इतिहास में दक्षिणी, उत्तरी , पूर्वी एवं पश्चिमी भाषाओं के साहित्य एवं भाषा के इतिहास का अध्ययन किया जाता है।
- आपने अध्यन किया कि प्रत्येक भाषा में महाकाव्यों की समृद्ध परम्परा रही है। चाहै वह तमिल साहित्य हो, हिन्दी साहित्य हो या तेलुगु साहित्य।
- रामायण एवं महाभारत जैसे जातीय महाकाव्य भारत की कई भाषाओं में रचित हुए हैं। तमिल, तेलुगु, उड़िया, मराठी, बंगला जैसी भाषाओं ने इन महाकाव्यों को अपनी संस्कृति के अनुरूप रचा है।
- भारतीय भाषाओं में बहुत भिन्नता है है, लेकिन प्रायः भाषाओं के विकास क्रम को आदिकाल, मध्यकाल एवं आधुनिक के अंतर्गत रखकर ही विश्लेषित किया गया है।
- आधुनिक प्रवृत्तियों का आगमन मोटे रूप में प्रायः भारतीय भाषाओं में थोडे-बहुत काल के अन्तराल में देखने को मिलता है।

5.7 शब्दावली

- जातीय चेतना - किसी भाषा एवं प्रदेश की मूलभूत विशेषताओं से युक्त चेतना।
- सार्वभौमिक - व्यापक जीवन का बोध कराना।
- कवित्रय - एक ही भावधारा से युक्त तीन कवियों का समूह।
- प्रबन्ध - कथा विकास को लेकर चलने वाली विधा।
- नवजागरण - आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से युक्त चेतना
- प्राक् - पूर्व का
- ब्रजबुलि - ब्रज, असमिया - उड़िया से मिश्रित भाषा।

5.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 2

(1)

1. संगमकाल
2. तमिल
3. प्राग्नबदयुग
4. बसवेश्वर
5. 3

(2)

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. सत्य
5. सत्य

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय साहित्य -त्रिपाठी, रामछबीला, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2008।
2. भारतीय साहित्य का समेकित इतिहास - (सं) नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, संस्करण 2009।

5.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तुलनात्मक अध्ययन - (सं) राजूरकर, भ.ह. एवं बोरा, राजमल

5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दक्षिण के प्रमुख भाषाओं का ऐतिहासिक विकास क्रम वर्णित कीजिए।
2. पूर्वी क्षेत्र की भाषाओं का विकास क्रम निर्धारित कीजिए।

इकाई 6 तेलुगु साहित्य का इतिहास एवं परिचय – 1

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 तेलुगु साहित्य का इतिहास
6.3.1 प्रांग नन्नय युग/पूर्व नन्नय युग (तेलुगु साहित्य का आदिकाल)
6.3.2 तेलुगु साहित्य का काव्य युग (सन् 1000 से 1850)
6.3.3. तेलुगु साहित्य का आरंभिक काल (सन् 1001 से 1150 तक)
6.3.4 तेलुगु साहित्य का पूर्व मध्यकाल (सन् 1151 से 1500)
6.3.5 तेलुगु साहित्य का उत्तर मध्यकाल (सन् 1501 से 1700)
6.3.6 तेलुगु साहित्य का तृतीय काल (सन् 1701से 1850)
6.3.7 तेलुगु गद्य साहित्य का विकास (नन्नय से सन् 1850 ई. तक)
6.3.8 तेलुगु साहित्य के विविध काव्य रूप
6.4 सारांश
6.5 शब्दावली
6.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची
6.7 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

तेलुगु साहित्येतिहास एवं उसके विविध कालों का विवेचन किया गया है। तेलुगु साहित्य लेखन की परम्परा संस्कृत के 'महाभारत', 'रामायण', 'भागवत' तथा अन्य पुराणों आदि को आधार बना कर शुरू की गयी। संस्कृत के विषयों को लेकर तेलुगु साहित्यकारों ने अपनी अद्वितीय प्रतिभा के द्वारा विषय को सर्वथा नवीन बना दिया। तेलुगु साहित्यकारों की प्रतिभा को देखकर ही साहित्योतिहास लेखकों ने कवियों के आधार पर काल, विभाजन किए। जैसे- प्रांग नन्नय, नन्नय, शिव कवि, तिक्कना, एईना, श्रीनाथ आदि के नाम पर काल विभाजन किया गया है। तेलुगु साहित्य में गद्य रूप प्रारंभ से ही प्राप्त होती है। तेलुगु साहित्य में गद्य रूप प्रारंभ स ही प्राप्त होती है। आदि कवि नन्नय भट्ट द्वारा चंपू शैली अपनाये जाने के बाद लगभग सभी साहित्यकार इस शैली को अपनाते हुए साहित्य सर्जना करते हैं। तेलुगु का आधुनिक गद्य, पद्य रूप सतत् विकासमान है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के आप-

- तेलुगु साहित्येतिहास से परिचित होंगे।
- तेलुगु साहित्य के चंपू काव्य से अवगत होंगे।
- तेलुगु साहित्य के विविध काव्य रूप की जानकारी मिलेगी।
- तेलुगु साहित्य रचना के मूल विषय की जानकारी प्राप्त होगी।
- तेलुगु के अद्वितीय कवियों से परिचित होंगे।

6.3 तेलुगु साहित्य का इतिहास

आदिकाल से अब तक तेलुगु भाषा तीन नामों से जानी जाती है। 'आन्ध्र', 'तेलुगु' और 'तेनुगु' नाम आदिकवि नन्नय और नन्नेचोड्ड ने अपनी काव्य-भाषा हेतु प्रयुक्त किया था। तिक्कन्ना ने 'तेनुगु' और 'तेलुगु' दोनों शब्द प्रयुक्त किए थे। जबकि कृष्णदेवराय ने 'देशभाषालन्दु तेलुगु' (देशी भाषाओं में तेलुगु श्रेष्ठ है) कहकर तेलुगु की मिठास को स्पष्ट किया है। यद्यपि प्राचीन काल में तेलुगु शब्द तेलुंग, त्रिलिंग, तिलंग, तेलिंग, तेलंग आदि रूपों में प्रयुक्त होता रहा तथापि तेलुगु शब्द के विकास को गंटिजोगि सोमयाजी ने अपनी कृति 'आंध्र भाषा विकासमु' में दर्शाया है। वर्तमान में राजनीतिक जागृति और राष्ट्रीय भावना के उत्थान के कारण 'आन्ध्र' शब्द की जनप्रियता बढी़ है किंतु तेलंगाना और रायलसीमा आदि जिलों में 'आंन्ध्र' की जगह 'तेलुगु' और 'तेलगंना' शब्द का मोह है। भारतीय राज्यों का भाषायी आंन्ध्रप्रदेश पहला उदाहरण है। आंन्ध्रप्रदेश की भाषा तेतु (ड) गु और तेतु (ड) गु धातु रूप की प्राचीनता सर्वज्ञाता है।

6.3.1 प्रांग नन्नय युग/पूर्व नन्नय युग (तेलुगु साहित्य का आदिकाल)

ईसा पूर्व की प्रथम शती से लेकर ईसा की ग्यारहवीं शतीं तक इस भाषा में अनेक लोक कथायें, लोकगीत, ताम्रपत्र एवं शिला लेख प्राप्त हुए है। बारह सौ वर्षों के दीर्घकाल को तेलुगु साहित्य का आदिकाल माना जा सकता है। आंध्र प्रदेश की सामाजिक, सांस्कृतिक सुरूचि का पता इस बात से चलता है कि इस काल में भौतिक सुख-सुविधाओं से ऊपर उठकर परोक्ष-जगत् की चर्चा मनीषियों में होती रहती थी। दैनिकचर्या जब लोकगीतों के रूप से फूट पड़े तो उस समाज की उन्नति का सहज अनुमान लगाया जा सकता है। बारहवीं शती में जो सोमनाथ कृत 'बसव पुराण' में उस काल के पद में 'गोविंदपद, बोलशुपद, वेललु, जोललु, तुम्मेद-पदमुलु' जैसे पदों की प्रयुक्ति का उल्लेख किया है। इस काल के शिलालेखों के दान प्राप्त करने वाले व्यक्ति का जाति समेत नाम तथा देने वाले के 'विरूदु' (उपाधि), पद, प्रतिष्ठा के साथ ही देय वस्तु का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। यद्यपि इस काल की भाषा स्थिर नहीं थी तथापि व्यवहार में प्रयुक्त भाषा को व्याकरणिक नियम रहित प्रयोग किया जाता था। जिससे वर्ण्य-विषय में दोष देखा गया है। चोलों और चालुक्यों के शिलालेखों के अध्ययन पूर्व होने पर ही इस काल की भाषा का स्वरूप निश्चित किया जा सकता है। आदिकवि नन्नय भट्ट से 25-30 वर्ष पूर्व के प्राप्त शिलालेखों में संस्कृत का शब्दतः अनुकरण किया गया है। 'पडरंग (सेनानी) के शिलालेखों में सीसपद्य का प्रयोग हुआ है तो विजयवाड़ा के मुछदमल्लु के शिलालेखों में 'मध्याक्कर' छंद का , जो तेलुगु के अपने छंद हैं। इस प्रकार प्राचीन शिलालेखों में सीसमु, तरूवोज, अक्कर, गातिका (तेलुगु) आदि छंद प्रयुक्त हुए हैं। अतः शिलालेखों के आधार पर नन्नयभट्ट से पूर्व भी तेलुगु साहित्य का अस्तित्व स्वीकार किया जाता है। नवीं से ग्यारवीं शताब्दी में बीच कन्नड़ के कवि पम्प कृत 'विक्रमार्जुन विजय', नामक पुस्तक जो 942 ई. में समाप्त हुई, अत्यंन्त महत्पूर्ण है। पम्प एवं कवि रत्न ने स्वयं को बेंगी देश के निवासी अर्थात् तेलुगु भाषी कहा है। नन्नय भट्ट ही तेलुगु के प्रथम कवि सिद्ध होते हैं। तेलुगु में उस समय तक जो कुछ लिखा गया, उसी को आधार बनाकर नन्नय भट्ट ने 'महाभारत' की रचना की । इस काल में बौद्ध एवं जैन साहित्य न के बराबर प्राप्त हुए हैं, जो कुछ मिले हैं वे शिलालेखों के रूप में । अतः आंध्र भाषा को काव्य रूप में प्रतिष्ठित करने वाले सर्वप्रथम कवि नन्नय भट्ट ही हैं ।

6.3.2 तेलुगु साहित्य का काव्य युग (1000-1850)

उत्तर भारत जहाँ राजनैतिक विप्लवों से सदा आक्रांत रहा वहीं दक्षिण भारत शांति काल में पल्लवित होता रहा। राजा भोज का 'चंपू रामायण' उनकी प्रतिभा को सहज स्पष्ट करता है। राजा भोज के दर्शन मात्र से काव्य-स्फुरित हो उठता था। प्राचीन काल में कश्मीर में प्रतिष्ठित संस्कृत को राजा भोज ने इस काल में प्रतिष्ठत किया। ऐसे समय में जबकि संस्कृत भाषा की तूती बोल रही हो तेलुगु भाषा में की गयी स्वतंत्र रचनायें इसकी जिजीविषा को स्पष्ट करती है । तेलुगु काव्य की दो पद्धतियों का उल्लेख है।

1. मार्ग काव्य **2.** देशी काव्य

मार्ग काव्य - इसके अंतर्गत तेलुगु कवियों द्वारा अपनाई गई शैलियों को ध्यान में रखा गया है। इसमें रस, अलंकार, छंद आदि के साथ शिष्ट-जन-सम्मत भाषा का उपयोग किया गया है। इस काव्य का प्रधान लक्षण है रस। शब्दशक्तियों में अभिधार्थ की जगह इसमें लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ पर अधिक आसक्ति होती है।

देशी काव्य - इसमें कवि अपनी रूचि के अनुसार जन-रंजन के विषयों की चुनते हुए किसी भी घटना या कहानी को वर्ण्य विषय बना सकता है। जनता का मन-रंजन तथा परमार्थिक उपदेश इसका मुख्य उद्धेश्य होता है। लोक-प्रियता ही इन कवियों के छंद की शुद्धता मानी गई है। देशी काव्य की व्यंजना ताल, लय, मृदंग, भाव-भंगिमा पर आश्रित है।

मार्ग काव्य की दो धारायें - मार्ग काव्य की एक श्रेणी का नेतृत्व नन्नय ने और दूसरी का तिक्कना ने किया। नन्नय और उनके परवर्ती कवियों ने तेलुगु में अधिकृत और शिष्ट-जन-सम्मत शब्दों के साथ है। संस्कृत की शब्द संपदा का भी प्रयोग किया। इन्होंने तेलुगु के देशी शब्दों, छंदों के साथ संस्कृत के उपमानों, पुराण की प्रतीकात्मक कथाओं और अलंकारों का मणिकांचन प्रयोग किया। दूसरी श्रेणी के कवि तिक्कतना आदि ने संस्कृत के साहित्य-शास्त्र के सिद्धान्तों को पूर्णतः बहिष्कृत करते हुए देशी शब्दावली, देशी छंद और देशी उपमानों को काव्य में प्रमुखता दी। इस प्रकार देखा जाय तो आदिकाल से लेकर अद्यतन काल तक का तेलुगु साहित्य नन्नय भट्ट और तिक्कना की शैलियों का एक समान रूप से उत्तराधिकारी है।

मध्यम मार्ग - इन दानों परंपराओं से इतर कुछ तेलुगु कवियों ने छंद, अलंकारादि के संबंध में तिक्कना का और भाषा के संबंध में नन्नय भट्ट का अनुगमन किया। मध्यम मार्ग के प्रमुख कवि श्रीनाथ है।

तेलुगु साहित्य का प्रांरभिक काल और सामाजिक राजनीतिक परिस्थितियाँ - साहित्य अपनी समसामयिक परिस्थितियों की ऊपज होती है। हर्षवर्धन के पश्चात् की उत्तर भारतीय अराजकता और मुगलों का शासनारंभ समूल भारतीय आचार-विचार, परंपराओं पर व्यापक रूप से असरकारी था। ऐसे में आंध्रप्रदेश में सातवाहनों के बाद की राजनैतिक अस्थिरता चालुक्यों के उदय से दूर हो गयी थी। काकतीय राज्य के पतन और मुसलमानों के आगमन के समय उत्पन्न अस्थिरता विजयनगर की स्थापना से दूर हो गयी थी। ऐसे ही सुव्यवस्थित वातावरण में साहित्यादि कलाओं का पल्लवन हुआ। दसवीं शती से पूर्व आंध्र की जनभाषा का प्रयोग अत्यल्प ही हुआ किंतु दसवीं शती के पश्चात् राज्याश्रय पाकर तेलुगु भाषा साहित्य को मानों बल मिल गया गया हो।

विजयनगर साम्राज्य के पतन के पश्चात् आंध्र पराधीनता के दंश को झेलते हुए विखंडित होता गया। तेलुगु साहित्य का यह अंधकारपूर्ण युग था। अंग्रेजों के आगमन और नव्य ज्ञान-विज्ञान के परिचय से तेलुगु साहित्य की तंद्रा भंग हुई तो राष्ट्रीय आंदोलन के झोंके ने उसके आत्म-सम्मान को झकझोर कर रख दिया।

तेलुगु साहित्य के व्यस्थित अवलोकन हेतु चार भागों में बाँटा गया हैं, जो निम्नांकित हैं-

1. आरंभिक काल (सन् 1001ई. से 1150 ई. तक)
2. पूर्व-मध्य काल (सन् 1151 ई. से 1500 ई. तक)
3. उत्तरमध्यकाल (सन् 1501 ई. से 1700 ई. तक)
4. तृतीय काल (सन् 1701 ई. से 1850 ई. तक)

6.3.3 तेलुगु साहित्य का आरंभिक काल (सन् 1001 से 1150 तक)

इस काल में आंध्र पर चालुक्यों का व्यस्थित शासन स्थापित था। चारों ओर शांति, सुव्यवस्था का अलभग 450 वर्षों तक वातावरण बना रहा। इस काल में प्राकृत की जगह देशी भाषा तेलुगु का प्रयोग होने लगा था। चालुक्य नरेश राजराजा नरेन्द्र संस्कृत के राजा भोज की तरह तेलुगु में प्रसिद्ध है। कन्नड़ 'महाभारत' से प्रेरित होकर सर्वप्रथम तेलुगु में 'महाभारत' लिखने हेतु उन्होंने आदि कवि नन्नय भट्ट से प्रार्थना की । इस प्रकार तेलुगु की नियबद्ध और परिष्कृत पहली कविता तपोनिष्ठ, व्रती-महात्मा की साधना से मुखरित हुई।

नन्नय भट्ट - आंध्र के विस्तृत भाषा के सामान्य रूप को नन्नय भट्ट ने संस्कृत भाषा के ज्ञान और तेलुगु की प्रकृति द्वारा स्थिर किया। नन्नय भट्ट को 'महाभारत' की रचना में नारायणभट्ट की सहायता प्राप्त हुई। जिन्हें वे महाभारत के कृष्ण की भांति मानते हुए स्व्यं को अर्जुन माना है। उनकी इस पंक्ति में यही लक्षित हुआ है- ''पायक पाकशासनिकि भारत घोररणंबनंदु नारायणभट्लु''। नन्नय भट्ट ने संस्कृत औद देशी छंदों को अपनाते हुए लोकसाहित्य परंपरा को अपनी कृति में यथोचित स्थान दिया।

इस काल में इन धर्मों का प्रभाव शिथिल हो चुका था। महाभारत के प्रणयन द्वारा वर्णाश्रम धर्म की पुरस्थापना तथा वेदशास्त्रसार द्वारा हिन्दू आस्थाओं को दृढ़ता प्राप्त हुई। नन्नय ने जैमिनी और कुमारिल की मान्यताओं की पुष्टि कर्मकांड की पुनर्स्थापना द्वारा की । नन्नय भट्ट की मूल भावना शुद्ध साहित्यिक सर्जना से ही प्रेरित थी। आंध्र में पंडित-परिश द की प्राचीन परंपरा रही है। पंडित का घर गुरूकुल की तरह होता था। इन परिश दों में नये काव्यों के गुण-दोषों का विवेचन किया जाता था। पंडित-परिश द नन्नय के महाभारत से पूर्व संस्कृत काव्यों पर चर्चा करते हुए उपयोगी कृतियों को अध्ययन-अध्यापन का माध्यम बनाती थी। किन्तु नन्नय के 'महाभारत' सभी विद्वानों ने 'रमणीय' माना, यह कवि की समन्वयात्मक बुद्धि का परिचायक है। आदिकवि नन्नय ने महाभारत के कई प्रसंगों को छोड़ा भी है, उन्होंने मानव-प्रकृति विश मताओं और अंतर्द्वद्वों को सुन्दररतापूर्वक चित्रित किया है। तेलुगु में उन्होंने कुछ नये काव्य-सिद्धान्तों को गढा़ है। काव्य के प्रारंभ में और आश्वास के अंत में छः पंक्तियों में अपने आश्रयदाताओं का गुण-विवेचन किया है। नन्नय भट्ट ने तेलुगु साहित्य का श्रीगणेश चंपू काव्य से किया। यथा अवसर गद्य-पद्य के प्रयोग से कविता प्रवाहमान बनी रही। नन्नय के पश्चात् तिक्कना ने भी 'महाभारत' को चंपू शैली में पूर्ण किया। इस प्रकार आदि कवि ने साहित्य सर्जना के द्वारा उनके लिए भी मार्ग प्रशस्त कर दिया जो कवि न थे किंतु साहित्य सेवा के आकांक्षी थे । कुछ विद्वान नन्नय को

''आंध्र भाषा वागानु शासनुडु'' (आंध्र भाषा के अनुशासक) उनकी व्याकरण कृति 'आंध्र शब्द चिन्तामणि के आधार पर मानते हैं।

नन्नेचोड़ - तेलुगु साहित्य में नन्नय भट्ट की परंपरा से इतर देशी शब्दों और देशी उपमानों को बढ़ावा देने वालों में नन्नेचोड़ का प्रमुख स्थान है। यह शैली तेलुगु साहित्य में वर्तमान काल तक प्रयुक्त हो रही है। नन्नेचोड़ के 'कुमार सम्भव' कृति को कुछ विद्वान महाभारत से पूर्व की कृति मानते हैं। नन्नेचोड़े ने संस्कृत काव्य-लक्षणों के स्थान पर आंध्र की लोक -शैली को अपनाया है। इन्होंने क्षेत्रीय तथा स्थानीय शब्दों, मुहावरों और लोकोक्तियों का अधिकाधिक प्रयोग 'कुमार संभव में किया। इस प्रकार भाषा, भाव और शेली की देशी परंपरा तेलुगु साहित्य में तब तक चलती रही जब तक कि सोमनाथ ने 'बसवपुराण' नहीं लिखा।

वेमुलवाड़ भीम कवि - इस युग की तीसरी काव्य-धारा के प्रवर्तक इन्हे ही माना जाता है। 'राघव पांडवीय', 'शत कंठ रामायण' और 'नृसिंह पुराण' के प्रवर्तक भी कवि को श्लेषालंकार शैली में रामायण और महाभारत को एक ही कृति में प्रस्तुत करने के कारण प्रसिद्धि मिली। लेकिन इनकी चाटुकारिता की प्रवृत्ति से इन्हें साहित्यिक आदर न मिल पाया। इस काल में पावुलुरू ग्राम के पटवारी मल्लन्ना की 'गणित सार संग्रह' कृति को गणित की उल्लेखनीय रचना मानी गयी है। ईसके अलावा भी कुछ अन्य पुस्तकें लिखी गयी। नन्नय भट्ट की मृत्यु के साथ ही इस युग का अवसान होता है।

6.3.4 तेलुगु साहित्य का पूर्व मध्यकाल (सन् 1151 से 1500)

राजराजा नरेन्द्र की मृत्यु के पश्चात् चालुक्य साम्राज्य विखंडित होने लागा। ऐसे समय में अंतिम चालुक्य नरेश भूलोकमल्लु को मार कर उसका सेना पति विज्जल पश्चिमी चालुक्य साम्रात्य का शासक बना। विज्जल काकतीय साम्राज्य का संस्थापाक तथा वीरशैवमत का प्रचारक था। विज्जल के मंत्री वसवेश्वर ने इस मत का खूब प्रचार किया। किंतु भंक्ति आंदोलन के प्रचार से यह मत रूद्ध हो गया।

मल्लिकार्जुन - पूर्व मध्यकाल का सूत्रपात द्राक्षाराम के मल्लिकार्जुन पंडित ने किया। इनकी प्रमुख कृति देशी छंद 'कंदमु' में लिखी गयी। 'शिवतत्व-सार' है।

पाल्कुरिकि सोमनाथ - सोमनाथ कृत 'बसवपुराण' धर्म ही नहीं साहित्यिक दृष्टि से भी एक महत्त्व पूर्ण रचना है। तेलुगु के 'द्विपद' छंद में लिखी गयी शिवभक्ति की तथा शिवभक्तों की अन्यतम प्रस्तुति इसमें हुईं है। तेलुगु के सहस्त्रों अप्रयुक्त शब्दों को इस ग्रंथ में स्थान प्राप्त हुआ है। यद्यपि आकस्मिक घटना के परिपाक में कवि सफल नहीं हो पाये तथापि प्रस्तुति का संक्षेपीकरण कवि की कुशलता को स्पष्ट करती है। पाल्कुरिकि सोमनाथ ने इसके अतिरिक्त 'पंडिताराध्य चरित्र', चेन्नमल्लु सीसमुलु,' 'वृषाधिप शतकम्' 'अनुभव सारम्', 'बसवोदाहरणम्', 'बसव रागड़', आदि तेलुगु में तथा संस्कृत में सोमनाथ 'रूद्रभाष्य' की रचना की। वीरशैव कवियों की देशी परंपरा से भाषा को निखार प्राप्त हुआ। ग्रामीण कवियों की तरह उच्चकोटि के साहित्यकार भी स्त्रियों हेतु गीत सर्जना करने लगे थे। प्रकार शैवकवियों द्वारा

लोकसाहित्य को खूब बढ़ावा दिया गया। यहाँ तक कि मार्ग कवि भी लोक परंपरा का अनुसरण करने लगे।

रंगनाथ रामायण - रंगनाथ ने अपने रामायण में लिंगायतों के द्विपद छंद में वाल्मीकि रामायण का अनुकरण किया है। कवि द्वारा इसमें लोककथाओं का भरपूर प्रयोग किया गया है जिससे सामान्य जनता में यह खूब लोकप्रिय हुआ। इस प्रकार तेलुगु में रामायण की परंपरा कवि रंगनाथ के द्वार शुरू हुई।

सुमति शतक- तेलुगु के शतक साहित्य के प्रणेता कवि बद्धेना ने 'सुमति शतक' की रचना की। बद्धेना कवि महामण्डलेश्वरों में स्थान पाते हैं। इनकमे 'सुमति शतक' के बिना बालकों की शिक्षा अधूरी मानी जाती थी।

प्रोलराजू द्वारा निर्मित काकतीय साम्राज्य के प्रथम आंध्र राजा प्रतापरूद्र देव (प्रथम) ने **1158** ई. से **1195** तक शासन किया। इनकी मृत्यु के बाद इनके भाई महादेवराज ने चार वर्ष तक शासन किया और फिर गणपतिदेव के शासन काल में आंध्र पुनः एकसूत्र में बंध गया। गणपतिदेव के बाद उनकी पुत्री रूद्राम्बा और रूद्राम्बा के पश्चात् उनका पुत्र प्रतापरूद्रदेव (द्वितीय) ने शासन की बागडोर संभाली। सन् **1140** से सन् **1321** ई. तक के तीन सौ वर्षों के काकतीय शासन व्यवस्था में तेलुगु साहित्य में सतत् निखार हुआ। बल्लभामात्य कृत 'क्रीडाभिराममु' में काकतीय शासन के ओरूगल्लु के शिल्पियों का जीवन दृष्टव्य है। गणपतिदेव के मंत्री शिवदेवय्या (द्वितीय) की रचना 'शिवतत्व सार' और यथावाक्कुल अन्नय्या की कृति 'सर्वेश्वर शतक' में तेलुगु की जातीयता देखी जा सकती है। इनके अलावा भास्कर, कवि भल्लट, कवि राक्षस, तिक्कना, गोनबुद्धारेड्डी, रूद्रदेव, अय्यलार्य, मंचेना, बद्धेना, रंगनाथ, शिवदेवय्या, मल्लिकार्जुन भट्ट, मारना, केतना, अथर्णव प्रभृति ने सरस्वती की प्रचुर अराधना की । अथर्णव आंध्र व्याकरण के 'कात्यायन' माने जाते हैं। काकतीय साम्राज्य की समुन्नत शिल्पकला को आज भी रामय्या देवालय और सहस्त्र स्तंभ मंडप के रूप में देखा जा सकता है।

महाकवि तिक्कना - कवि तिक्कना और उनके भाई खड्ग-तिक्कना नेल्लूर जनपदवासी थे जो साहित्य, राजनीति, धर्म, युद्ध, सामाजिक विश यादि के क्षेत्र में प्रसिद्ध थे। तिक्कना हरिहर के उपासक एवं दर्शनशास्त्र के प्रकांड पंडित थे। उन्होंने 'ध्रमाद्वैत' सम्प्रदाय की स्थापना के द्वारा शिव और विष्णु की एकता का प्रतिपादन किया। वे राजा मनुमसिद्धि के मंत्री एवं दरबारी कवि थे। उन्होंने अपनी 'निर्वेचनोन्तर रामायण' कृति मनुमसिद्धि को समर्पित की । तिक्कना ने नन्नय भट्ट के 'महाभारत' के ढाई पर्व के बाद की अधूरी कृति को पूर्ण करने का दायित्व लेते हुए पन्द्रहवर्षों की रचना की । नन्नय और तिक्कना के बीच सैकडो़ वर्षों के अंतराल में तेलुगु साहित्य और भाषा के क्षेत्र में कई परिवर्तन हुए। तिक्कना के आश्रयदाता राजा मनुमसिद्धि अपने ही सामंत काटमराजु से युद्ध में पराजित हो गये थे। ऐसी स्थिति में तिक्कना ने काकतीय राजा गणपतिदेव से ओरूगल्लु में पहुँचकर अपनी कृति 'महाभारत' सुनाकर प्रभावित किया, जिससे उन्होंने अपनी सेना भेजकर पुनः मनुमसिद्धि को राज्य दिलाया। इस घटना के बाद से

तिक्कना 'कवि-ब्रह्म तिक्कना के रूप में समूचे आंध्र में प्रसिद्ध हो गये । तिक्कना के समय के कवियों ने बहुजन हिताय का लक्ष्य लेकर संस्कृत के शब्दों का तेलुगूकरण किया।

तेलुगु महाभारत में कई प्रसंग ऐसे आये हैं जहाँ कवि के पात्र निजी स्थिति से असंतुष्टि व्यक्त करते हैं वहाँ कवि की वाणी आग उगलने लगती है। घटनाओं का क्रमिकविकास, पात्रों का सूक्ष्मतिसूक्ष्म चरित्र-चित्रण और कल्पना के समन्वय से कवि की भाव-प्रवणता हृदयहारी बन पडी़ है। समस्त भारत में रामायण को महत्त्व मिला है, किंतु आंध्र में महाभारत को नन्नय एवं तिक्कना ने महत्त्व पूर्ण बना दिया। आधुनिक समीक्षकों की कसौटी पर कसकर ही 'कवि-ब्रह्म' के रूप में तिक्कना प्रसिद्ध हुए है। नन्नय भट्ट की भाषा की समस्या तिक्कना के समय में नहीं थी। नन्नय की समस्त शक्ति भाषा के स्थिरीकरण में लग गयी थी। तिक्कना के समय में ही आंध्र मनीषी प्रबंध-काव्य शैली में रचना करने लगे थे। उत्तर मध्य काल में चलकर यह प्रवृत्ति 'हत प्रबंध काव्यों के युग' के रूप में प्रसिद्ध हुई।

कवि केतना - तेलुगु में प्रबंध काव्य परंपरा की नींव केतना के 'दशकुमार चरित्र' से पडी़। मूल दशकुमार चरित' गद्य को केतना ने पद्य में ढाल कर ' अभिनव दण्डी' की उपाधि पंडित समाज से प्राप्त की । केतना ने अपने गुरू तिक्कना को अपनी कृति समर्पित की। जहाँ तिक्कना की पुराण शैली 'महाभारत' में लक्षित हुई है वहीं 'दशकुमार चरित्र' में महाकाव्यात्मक शैली को केतना ने प्रमुखता दी है। केतना ने याज्ञवल्क्य की स्मृति को 'विज्ञाननिश्वरीयम्' नाम से लिखा है। उनका 'आंध्र भाषा-भूश ण' नामक व्याकरण ग्रंथ भी उल्लेखनीय है।

भास्कर रामायण - भास्कर रामायण' की कवि भास्कर के अतिरिक्त अप्पलार्युडु, मल्लिकार्जनभट्ट, प्रभुसुत और कुमार रूद्रदेव आदि ने पूर्ण किया। यह अलग-अलग कवियों की एक उत्तम कृति है।

कवि मारना की वस्तु कविता - मारना की कविता को 'वस्तु कविता' के नाम से अभिहित किया जाता है। इसमें तदभव और देशी शब्दों तथा तेलुगु की लोकक्तियों और मुहावरों का संवादात्मक शैली में कथा को प्रस्तुतिकरण दिया गया है। इसमें प्रयुक्त भाषा को 'जानु तेलुगु' कहते हैं।

मारना के अतिरिक्त चिम्मपूडि अमरेश्वर और राविपाटि त्रिपुरान्तक का नाम उल्लेखनीय है। त्रिपुरान्तक की देशी कविता मार्ग शैली में 'त्रिपुरान्तकोदाहरण' और अंबिका शतक नामक कोमलकांत पदावली युक्त रचना है। इस प्रकार पूर्वमध्यकाल की कई प्रवृत्तियों को इन वाक्यों में देख सकते हैं-

1. वीरशैवतमत का प्रचार तथा आंध्र में सामाजिक धार्मिक क्रांति का का साहित्य पर प्रभाव अवलोकनीय है।
2. काकतीय साम्राज्य ने तेलुगु साहित्य संवर्धन में योगदान दिया।
3. तेलुगु के मौलिक शब्दों, कहावतों, मुहावरों का साहित्य में अत्यधिक प्रयोग होने लगा।
4. तेलुगु कवियों द्वारा देशी परंपरा में लक्षण ग्रंथों की रचना की गयी।
5. कवि तिक्कन्ना द्वारा नव्य साहित्यिक परंपरा का सूत्रपात हुआ।

6. 'दशकुमार चरित्र से प्रबंध काव्य शैली का विकास हुआ।

7. काव्य का विश मुख्यतः 'महाभारत', 'रामायण' तथा 'पुराण' ही रहा।

8. काव्य में प्रसाद गुण युक्त कोमलकांत पदावली को महत्त्व मिला।

9. काव्य के साथ ही व्याकरण, लक्षण-ग्रन्थ , स्मृति ग्रंथादि की रचनायें भी हुई।

इस प्रकार तेलुगु साहित्य में यह काल 'प्रबंध युग' के नाम से प्रसिद्ध है।

6.3.5 तेलुगु साहित्य का उत्तर मध्यकाल (सन् 1501 से 1700)

काकतीय साम्राज्य के पराभव तथा विजयनगर साम्राज्य की स्थापना के मध्य तेलुगु साहित्य पनपता रहा। विजयनगर के अतिरिक्त तीन और छोटे राज्य थे जो कृष्णा और पेन्ना नदी के मध्य भाग में स्थित थे। औरूगल्लु से श्रीशैलम तक रेचर्ल था, जिसकी राजधानी राचकोंडा में थी। कोंडवीडु सीमा की राजधानी अंद्दकि रेड्डी वंश द्वारा शासित थी। तीसरा 'विद्यानगर' राज्य था। काकतीय शासन के पतन के बाद राचकोणा के गजपति नरेश ने दोनों राज्यों को अपने राज्य में विलीन कर लिया।

ऐसी राजनीतिक उठापटक में भी तेलुगु में उत्कृष्ट साहित्य रचे जाते रहे । रेचर्ल राजा वेलमवंशी संस्कृत के प्रकाणड पंडित थे। उन्हें 'सिंगम नायुडु', 'सर्वज्ञ', की उपाधि प्राप्त थी। कवि माधवरायुडु इन्हीं के दरबारी कवि थे, जिनकी 'श्रीमद्रामायण' कृति उल्लेखनीय है कुमारगिरि रेड्डी कृत 'वसंतराजीयम्' नाट्यशास्त्र की अद्भुत रचना है। कुमारवेमा रेड्डी की 'अमरूक' की टीका तथा उसको साले काढय वेमारेड्डी ने कालिदास के तीनों नाटकों की टीकायें लिखीं। विजयनगर के शासक हरिहर और बुक्काराय के समय सायन माधवाचार्य थे। स्वामी विद्यारण द्वारा वेद भाज्य इसी समय लिखा गया था। इस युग में अनेक धार्मिक व सामाजिक परिवर्तन हुए। काकतीय वंश का पतन शैव मत के पराभव का कारण बना। नन्नय भट्ट की शैली पुनः इस युग में पनपने लगी। तेलुगु - संस्कृत में समन्वय की प्रवृत्ति इस युग में खूब विकसित हुई। इ काल में तेलुगु में नाट्यशास्त्र का प्रादुर्भाव हुआ। कवि पोतना की 'भागवतम्' तेलुगु की अमूल्य निधि है। 'हरिवंश,' 'महाभारत', 'मार्कण्डेय पुराण' इस युग की पौराणिक शैली का विकसन करती है।

स्वर्णयुग - यह युग तेलुगु साहित्य के चहुमुखी विकास के कारण स्वर्णयुग कहा जा सकता है। इस युगमें तेलुगु साहित्य शरद ऋतु सदृश था। समस्त आंध्र प्रदेश भाव-पुष्प से सुवासित हो उठा था तथा साहित्य - गोष्ठियों और विद्वत्परिश दों को विजयनगर नरेशों को पूर्ण सम्मान प्राप्त था। इस युग के चार प्रमुख कवि नाचन सोमना, एर्राप्रेगडा, श्रीनाथ और पोतना आदि ने अपने निराले शैली में वाक्य-विन्यास किया।

काव्य में वृत्तियाँ, रीति, शैली और भाषा-चयन का अत्यधिक महत्त्व होता है। आरंभिक काल के युगकवि नन्नयभट्ट और पूर्वमध्यकाल के युगकवि तिक्कना की शांति उत्तर मध्यकाल में शैली की नवीनता और अभिनय प्रणाली के आधार पर श्रीनाथ को युग कवि माना

जा सकता है। विजयनगर साम्राज्य की राजधानी कर्नाटक में भी जिससे तेलुगु और कन्नड़ साहित्य के विकास को समान गति मिली।

भक्ति आंदोलन - तेलुगु साहित्य का यह काल भक्ति आंदोलन के साथ शुरू होता है। विष्णु-भक्ति और भागवत भक्ति की प्रेरणा से अनेक उत्कृष्ट रचनायें हुई, जिनका उल्लेख निम्नतः किया जा सकता है।

नाचन सोमना (उत्तर हरिवंश)- सोमना की कृति उत्तर हरिवंश से इस युग की शुरूआत होती है जो संक्षिप्त होकर भी कृष्ण के जनरंजनकरी रूप के कारण जनप्रिय बनी। इस प्रकार सोमना द्वारा विष्णुतत्व की अद्भुत महानता कृष्णरूप में प्रकट करने के कारण ही उन्हें 'नवीनगुण सनाथ' तथा 'संविधान चक्रवर्ती की उपाधि मिली। सोमना ने अलंकारों के पोश ण हेतु 'कृष्णन्वय', उक्तिवैचित्र्य' की सर्जना की।

एर्राप्रेगडा - इस काल के एक अन्य कवि एर्राप्रेगड़ा संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे। 'महाभारत' के ढाई पर्व नन्नय और शेष पन्द्रह पर्व तिक्कना द्वारा लिखे गये। ऐर्राप्रेगड़ा ने शेषांश अरण्य पर्व की रचना की। कवित्रय की भाषा-शैली के आधार पर ही तेलुगु व्याकरण की रचना हुई है। ऐर्रन्ना को शब्दों पर अद्भुत अधिकार होने के कारण ही 'शब्द ब्रह्मवेता' की उपाधि मिली थी। ऐर्रन्ना ने भाषा में नन्नय का और शैली में तिक्कना का अनुसरण किया। अरण्य पर्व के शेषांक के अतिरिक्त ऐर्रन्ना ने 'हरिवंश' और 'नृसिंह पुराण' ने नयी शैली का प्रयोग हुआ है। उनकी कृतियों में नित नयी शैली के प्रयोग देखे जा सकते हैं। पद्य-रचना क्लिष्ट, सरल, गंभीर, सुकुमार आदि कई शैलियों में की गई है। ऐर्रन्ना की बची कसर को श्रीनाथ और पोतना ने पूरी कर दी। इनमके अतिरिक्त अन्य कवियों में पिल्लमर्रि पिनवीर भद्रन्ना, जक्कना, अनंतामात्य, दुग्गुपल्लि दुग्गन्ना तथा 'विष्णु पुराण' के प्रणेता वेन्नलंकंटि सूरनार्थ गौरना, आदि उल्लेखनीय तेलुगु कवि है।

पिनवीर भद्रन्ना - तेलुगु साहित्य में भद्रन्ना 'ब्रह्म के अवतार' माने जाते हैं। भद्रना ने ''जैमिनी महाभारत'' हेतु उत्तर कुरू में यज्ञाश्व की घटना को मुख्य रूप से चुना है। भाषिक प्रौढ़ता युक्त यह रचना सहज बोधगम्य है। कवि ने मार्ग काव्य की विशेषताओं को अपनाते हुए भी लोक साहित्य के जनप्रिय तत्वों का समावेश किया है। पिनवीर भद्रन्ना ने महाकवि कालिदास के नाटक की शकुतला पात्र को काव्य का आधार बनाया। भद्रन्ना ने कालिदास की कहानी में किंचित परिवर्तन किया है। उन्होंने महर्षि व्यास कृत 'महाभारत की शकुंतला का अंश ग्रहण करते हुए एक अद्वितीय काव्य ग्रंथ 'शकुंतला' का प्रणयन किया। जिसे विद्वानों ने ससम्मान अपनाया।

महाकवि श्रीनाथ - तेलुगु साहित्य में श्रीनाथ की अपूर्व प्रतिभा उस काल से आज तक विद्वत्समाज के लिए आश्चर्यमिश्रित कुतूहल बना हुआ है। श्रीनाथ वेमारेड्डी नरेश के शिक्षाधिकारी थे। वे बचपन में 'मयूर' के 'सूर्यशतक' एवं मुरारि कृत 'अनर्घराघव' को कंठस्थ कर चुके थे। विजयनगर के डिंडमभट्ट को शास्त्राथ्र में पराजित कर उन्होंने भट्ट के समस्त सम्मान को अपने नाम कर लिया। आजीवन साहित्य साधना करने वाले श्रीनाथ का साहित्यिक अवधान इन रचनाओं में दृष्टव्य है। 'पंडिताराध्य चरित्र,' 'श्रृंगार नैशध', 'काशीखंड', 'भीमखंड', 'हरिविलास', 'शिवरात्रि माहत्म्य' एवं 'पलनाटि वीर चरि.' आदि।

'क्रीड़ाभिराम' कृति को कुछ विद्वान श्रीनाथ की मानते हैं तो कुछ वल्लभामात्य की यह तेलुगु के दशरूपकों में वीथी रूपक के रूप में प्रसिद्ध है। इसमें काकतीय साम्राज्य के पतन के बाद ओरूगल्लु के शिल्पियों की जीवनचर्या को मर्मांतक रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्रीनाथ अपनी रचना में परिष्कृत, प्रांजल भाषा के साथ समासिकता को अपनाते हैं। इनकी शैली नन्नय के अधिक निकट है। उन्होंने अपने सीसपद्य के चरणान्त में तेलुगु के क्रिया पदों का प्रयोग किया है। श्रीनाथ की कृति 'श्रृंगार नैश ध' में मूल 'नैश ध चरित्र'' की दुरूहता न होकर परिष्कृतता औा ग्राह्यता देखी जा सकती है। श्रीनाथ की कृति ''पलनाटि वीर चरित्र' में कुक्कुट युद्ध की वीरगायात्मक शैली में वर्णन हुआ है। दो मुर्गों की लडाई को लेकर आंध्र के नरेश दो दल में बंट गये थे। श्रीनाथ के शिव में शील, सौंदर्य और सामर्थ्य की त्रिवेणी बहती थी, जिनमें कवि का लक्ष्य विशवत्व पर केंद्रित रहती थी।

भक्त पोतना - भक्त पोतना को पाकर तेलुगु साहित्य धन्य हो उठा। पोतना एक साधारण किसान थे। कविता पोतना का साधन नहीं अपितु साधना थी। उन्होंने अन्य कवियों की तरह अपनी रचनायें किसी राजा को समर्पित नहीं की। पोतना की कृति 'भागवत' तेलुगु साहित्य की अमूल्य नीधि है। पोतना का सरल व्यक्तित्व भागवत के तुलना की भी अनुमति नहीं देता। भागवत में अंत्यानुप्रास के कारण माधुर्य भाव का प्राचुर्य है। पोतना की भक्तिगंगा से सिक्त होकर तेलुगु जनता भक्तिरस में डूब गयी। भागवत का दशम स्कंध , जो कृष्णलीला से संबद्ध है उसे पोतना ने सरल वाणी में प्रस्तुत किया है।

अन्नमाचार्य - ये एक कीर्तनकार के रूप में जाने जाते हैं। इसी युग में कई शतक साहित्य लिखे गये। जैसे- 'सुमतिशतक' (बेद्धेना), 'वृषाधिप शतक' (सोमनाथ) 'वेंकटेश्वर शतक' (अन्नमाचार्य) आदि। इनके वंशज चिन्नन्ना भक्त त्यागराज से पूर्व के महान् संगीतज्ञ थे। इस काल के अन्य कवि है जक्कना, (विक्रमार्कचरित्र), अनन्तामात्य, (भोजराज चरित्र), दुग्गना (नाचिकेतोपाख्यान), तथा नंदि मल्लय्या और घंट सिंगय्या ने मिलकर 'प्रबंध चंद्रोदय' की रचना की। यूबगुंट नारायण कवि का 'पंचतंत्र' भी इस काल की उल्लेखनीय रचना है। इस काल तेलुगु साहित्य की मधुरता को देखकर ही यह उक्ति प्रसिद्ध हुई कि- '' तेलुगु भाषा मधु से भी अधिक मधुर है।''

कृष्णदेवराय - तेलुगु को कृष्णदेवराय की अनुपम देन है। कृष्णदेवराय ने कहा था,'देश भाश लंदु तेलुगु लेस्स'। (तेलुगु सभी देशी भाषाओं में उत्तम है) कृष्णदेव राय ने चारों ओर से राज्य को बढाया ही नहीं अपितु सुव्यवस्थित भी किया। सन् 1515 से इन्होंने साहित्य-गोष्ठी का आयोजन शुरू कर तेलुगु, संस्कृत, कन्नड़ आदि सभी को समादृत किया। अपनी साहित्यिक प्रतिभा-प्रेम के कारण इन्हें 'आंध्र भोज'' की उपाधि प्राप्ति हुई। कृष्णदेवराय की सभा में 'अष्ट- दिग्गज' थे। वसन्तोत्सव के आयोजन द्वारा साहित्य और भी संपुष्ट होता था। विजयनगर के शासक वैष्णव थे। कन्नड़ साहित्य से शैव तथा तमिल साहित्य से बैष्णव मत का तेलुगु साहित्य में समन्वय हुआ।

आमुक्तमाल्यदा - कृष्णदेवराय साहित्यकारों के आश्रयदाता ही नहीं अपितु साहित्य के मर्मज्ञ भी थे। उनकी कृति 'आमुक्तमाल्यदा' को 'विष्णुचिन्तीयमु' भी कहते हैं। चुस्त भाषा और प्रबन्ध

शैली में लिखी गयी इस काव्य में प्रकृति की छटा, उत्प्रेक्षा, रूपक का समुचित प्रयोग काव्य के श्रेष्ठता में चार चाँद लगाते हैं।

अष्ट दिग्गज - कृष्णदेवराय के राजसभा के अष्ट दिग्गजों की ख्याति तेलुगु साहित्य में विशेष रूप से है। ये है- अल्सानि पेद्न्ना, नंदि तिम्मना, धूर्जटि, अय्यलरातु रामचन्द्र कवि, रामराजभूश ण, संकुसाल नृसिंह कवि, कंसालि रूद्रदेव एवं तेबलि रामकृष्णय्या प्रभृति।

अल्लसानि पेद्दना - कृष्णदेव राय के इस महान कवि को इनकी उत्कृष्ट प्रतिभा हेतु 'आन्ध्र कविता पितामह' की उपाधि दी गयी है। स्वयं कृष्णदेवराय ने इनके पाँव में 'गंडपेंडेरम्' पहनाकर पालकी में बैठाया था तथ अपने कंधे पर पालकी उठाया था। कविता या तो व्यंजना युक्त होती है अथवा लक्षणा। तेलुगु साहित्य में लक्षणा काव्य का प्राधान्य है। नन्नय भट्ट के बाद पेद्दना ने व्यंजना शैली अपनाते हुए 'स्वारोचिश मनुचरित्र' महाकाव्य की रचना की। पेद्दना के इस मनु पात्र का जन्म एक अप्सरा से हुआ था। इस अप्सरा ने मानव और दवे के बीच तुलना कर मानव को अपना स्नेह-पात्र बनाया था। पेद्दना अपनी लेखनी के द्वारा परमार्थ भाव को पोषित करते हुए सृष्टि के आरंभ की कथा प्रबंधात्म्क शैली में प्रस्तुत करते हैं। प्रायः रसपारिपाक के लिए कवि ने शैली विविधता को अपनाया है। पेद्दना के पदों की व्यंजकता तथा समासयुक्त पदावली उनकी रचना को लोकप्रिय बनाते हैं।

भट्टमूर्ति - इनका वास्तविक नाम रामराज भूश ण है। ये भाट वंशज संगीतज्ञ थे, इसीलिए उन्हें 'संगीत रहस्य कलानीधि' के नाम से जाना जाता है। इनकी कृति 'वसुचरित्र'' का कथानक 'शुक्तिमति नदी' और कोलाहल पर्वत' के प्रेम सम्बन्धों से उत्पन्न कन्या का वसुराज के साथ विवाह से संबंधित से उत्पन्न कन्या का वसुराज के साथ विवाह से संबंधित है। इस कृति की गेय-पद्यात्मकता एवं गद्यात्मकता को तेलुगु के पिंगल शास्त्री भी किंचित जानते होंगे या नहीं यह कहा नहीं जा सकता किंतु कृति में शब्द और अर्थ के स्थान पर लय और स्वर ने विजय पायी है।

नंदितिम्मना - नंदि तिम्मना कृष्णदेवराय की पत्नी चित्रमांबा के साथ दहैत के रूप में विजयनगर आये थे। इनकी कृति 'पारिजात पहरण' कृष्ण-रूक्मिणी-सत्यभामा ढंग से बुना गया है। नारदमुनि स्वर्ग से पारिजातपुष्प लाते हैं, जिसे कृष्ण को देते हैं। कृष्ण वह पुष्प रूक्मिणी के देते हैं, जिसे सत्यभामा की दासी देख लेती है। सत्यभामा इस बात से नाराज हो जाती है और फिर कृष्ण द्वारा सत्यभामा को मनाने की प्रक्रिया की कहानी है। 'नाक' के संदर्भ में इनका एक पद लालित्य देखते बनता है- 'चंपा पुष्प के पास भँवरा नहीं आता था अतः दुःखी होकर पुष्प ने तपस्या की तो वह नाक और उसके दोनों ओर आँख भँवरा बनकर हमेशा के लिए रहने लगे। इस पद को अपने काव्य में प्रयोग करने हेतु भट्टमूर्ति ने मूल्य देकर इनसे लिया था। 'पारिजातापहरण' के अंत में सत्यभामा ने नारदमुनि को कृष्ण का दान कर दिया। इस तरह यह एक नाट्यात्मक पद्य भी बन जाता है।

धूर्जटी - धूर्जटी अपनी भाषा की मधुरता और मृदुलता के साथ ही भाव-सौष्ठव के लिए भी प्रसिद्ध है। कृष्णेदेवराय वैष्णव थे, किंतु शैव कवियों के भी आश्रयदाता थे। धूर्जटी एक शैव भक्त

कवि थे। वे शिव के ज्ञानमय रूप की उपासना करते हुए भी राजसेवा की निंदा करते हैं। इनकी कृति 'फालहस्ति महात्यम्' तथा 'काल हस्तीश्वरशतकम्' उपलब्ध है। दक्षिण के द्राक्षाराम, श्रीशैलम्, अमरावती, पेदकल्लेपल्ली और कालहस्ति आदि शैव तीर्थ दक्षिण काशी कहलाते है। उनके 'कालहिस्त महात्यम् ' से भक्ति रस का प्रवाह तीव्र हुआ । श्री-काल-हस्ति का शब्दार्थ है- मकडी़, सर्प, हाथी, इन तीनों के मोक्ष की कथा धूर्जटी ने कलात्मक ढंग से इसमें प्रस्तुत की है।

पिंगलि सूरचना - तेलुगु साहित्य में अब तक धार्मिक-पौराणिक रचनायें होती रही, किंतु पिंगलि सूरना से तेलुगु साहित्य में कल्पना आधारित रचनाओं को मान्यता मिली जिस काल में सूरना ने लिखा, उस समय उन्हें वह ख्याति न मिली। किंतु वीसवीं शती के आरंभ में इन्हें खूब यश प्राप्त हुआ। इनकी प्रमुख कृतियां राघव पाण्डवीयमु', कलापूर्णोदयमु' पाश्चात्य काव्य - कल्पना की विशेष ता लिये हुए हैं, उस समय पश्चिमी देश यहाँ आये भी न थे। इसमें श्रृंगार रस की प्रधानता हैं कलापूर्णोदय में सुगात्री-शालीन (पत्नी-पति) की श्रृंगारिकता का मनोवैज्ञानिक वर्णन है। सुगात्री की श्रृंगारिकता शालीन को विरक्त करती है जबकि उसकी सादगी से अनुरक्त शालीन स्वयं को नियंत्रित नहीं कर पाता है। 'प्रभावती प्रद्युम्नमु' में प्रद्युम्न का प्रभावती के प्रति रति-भाव प्रकट हुआ है।

संकुसाल नृसिंह कवि - अष्टदिग्गजों में नृसिंह कवि का विशेष महत्त्व है। इनकी कृति 'मांधता चरित्रमु' 'कविकर्णरसायनमु' के नाम से लिखा गया था। प्रबंध शैली में प्रौढ़ भाषा एवं शैली में लिखा गया यह महाकाव्य पाठकों के कर्ण के लिए रसायन का काम करता है। इन सबके अतिरिक्त कंदुकूरी रूद्रया, तेनालि रामकृष्ण तथा मादय्यगारि मल्लना आदि अन्य उल्लेखनीय कवि है। कन्दुकूरि रूद्रय्या इब्राहीम कुतुबशाह का दरबारी कवि था। इनकी कृतियां हैं- 'निरंकुशोपाठयानमुं', 'जनार्दनाष्टकमु', 'सुग्रीव विजयमु' आदि।

तेनालि रामकृष्णा - अकबर-बीरबल की तरह तेनालि रामकृष्णा एवं कृष्णदेवराय की कई कहानियाँ प्रचलित है। इनकी कृति 'पांडुरंग महात्म्यमु', 'उद्भटाराध्य चरित्रमु' मानी जाती है। महाराष्ट्र के बारकरी संप्रदाय विष्णु को 'पाण्डुरंग' के रूप में पूजती है। तेनालि की वक्रोक्ति शैली इनकी कृति को अनोखा रूप प्रदान करतीहै। तेनालि की संस्कृतनिष्ठ तेलुगु उन्हें अन्य कवियों में अग्रगण्य बनाती है। तेलुगु साहित्य में सोमना, कृष्णदेवराय, तेनालि इन तीनों के छंदों में परिष्करण और आकर्षण का उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। तेनालि रामकृष्ण के पश्चात् प्रबन्ध काव्यों का युग लगभग सामपप्त प्राय हो गया।

अय्यलराजु रामभद्र - इन्होंने तेलुगु के मूल शब्दों द्वारा तिक्कना की शैली को पुनर्जीवित करते हुए 'रामाम्युदयमु' की रचना की मधुर तथा प्रांजल भाषा में सुकुमार ढंग से इसकी प्रस्तुति को पाठक सहज ही अपना लेते हैं।

मोल्ल - मोल्ल नामक कवयित्री कुंभार के घर में जन्मी थी। इन्होंने 'रामायण' को अत्यंत संक्षिप्त प्रबंधात्मक रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार यह युग साहित्य सर्जना में उच्च-निम्न वर्ग के

भेदभाव से परे था। स्त्री-पुरूश की ज्ञान क्षेत्र में सहभागिता स्वस्थ समाज की भावना को प्रदर्शित करता है।

तारिगोंड बेंकमाम्बा - इनका नाम शक्त कवियों में सम्मान के साथ लिया जाता है। बेंकमाम्बा बाल-विधवा थीं। इनकी कृतियाँ हैं- 'वेंकटेश्वर माहत्म्यमु', 'राजयोगसारमु' और 'योग वाशिष्टम', आदि में क्रमशः श्रृंगार भक्ति वर्णन और ईश्वर, जीव एवं प्रकृति का विवेचन किया गया है।

तिम्मक्का - भक्त अन्नमय्या की पत्नी तिम्मक्का ने 'सुभद्रा कल्याणमु' ग्रंथ की रचना की थी।

एलकूचि बाल सरस्वती - इन्होंने 'राघव, यादव, पाण्डवीयम्' ग्रंथ की रचना की। इसमें राम, कृष्ण और पाण्डवों का एक साथ वर्णन है। इसके अतिरिक्त 'आंध्र शब्द चिन्तामणि' नामक व्याकरण की टीका भी इन्होंने लिखी थीं।

मादय्यागरि मल्लन्न कृत 'राजशेखर चरित्रमु', चरिकोंडा धर्मन्ना ने 'चत्रि-भारतमु', की रचना की तथा तेलुगु 'शतावधान' काव्य परंपरा का श्रीगणेश किया। शतावधान में सौ व्यक्तियों को क्रम से बिठाकर कवि प्रसेक को पृथक-पृथक् पद्य की एक-एक पंक्ति लिखाता है। पुनः नयी पंक्ति और पद का क्रम करते हुए चार चरण पूरे कराता है, जिससे प्रसेक के पास एक-एक स्वतंत्र पद तैयार होता है। अंत में शतावधानी से छप्पनवाँ पद सुनाने का आग्रह करते हुए श्रोता की इच्छानुसार किसी भी संख्या का पद सुनाने का आग्रह किया जाता है।

कुमार धूर्जटी - ये धूर्जटी के पौत्र थे। इनकी कृति 'कष्णराय' विजयमु' तेलुगु साहित्य के ऐतिहासिक रचनाओं में गिनी जाती है। इनके अतिरिक्त कई अन्य कवि भी है जिनकी रचनायें उल्लेखनीय बन पडी है इनमें अद्दंकि गंगाधर (तपती संवरणमु), पिडुपर्ति सोमनाथ (बसव पुराणमु) तेनालि अन्नय्या (सुदक्षिण परिणयमु'), तरिगोप्पुल मल्लना (चंद्रमानु चरित्रमु), शंकर (हरिश्चन्द्रोपाख्यानमु), सारंगु तम्मय्या (वैजयंती विलासमु') हरिभट्ट (वराह पुराणम्) आदि प्रमुख हैं।

लक्षण ग्रंथ और व्याकरण - इस काल में कई लक्षण ग्रंथ एवं व्याकरण भी लिखे गये। भट्टुमूर्ति की 'नरस भूपालीयमु', यादवामात्य की 'लक्षणशिरोमणि', तिम्मना की 'सुलक्षण सार', मुद्दराज रामना की 'कवि संजीवनी', वेल्लंकि तातम् भट्टु की 'कवि चिंतामणि', अप्प कवि की 'अप्पकवीयमु' आदि उल्लेखनीय लक्षण एवं व्याकरण रचनायें हैं।

इस प्रकार इस काल की कई प्रवृत्तियाँ देखी गयी है। प्रबंध काव्य, व्याकरण-लक्षण ग्रंथ , राजा-प्रजा की धार्मिक साहिष्णुता, धनवान सामंत, शतक परंपरा का निरूपण आदि उल्लेख्य है। शतककवि, कवि के साथ-साथ राजदूत भी होते थे।

वेमना - वेमना ने देशी शैली की कविता से शब्दावली तथा शास्त्रीय कविता है छंद लेकर भाव-व्यंजना में नवीनता का अनुसरण किया। वेमना ने साहित्य को रस, छंद, अलंकार तक ही नहीं बल्कि समाजोपयोगी बनाने की कोशिश की। इन्होंने कविता का विषय सामाजिक रूढ़ियों का खंडन तथा धर्म का सामान्यीकरण अपने छोटे-छोटे पदों के द्वारा किया है। उनके पद आधुनिक समाज-सुधारकों के लिए किसी अस्त्र से कम नहीं है।

कंचेर्ल गोपन्ना - तालीकोट युच्छ (**1565**) के बाद आंध्र का अधिकांश भाग गोलकोण्डा कुतुबशाही के अधीन हो गया। कुतुबशाही वंश के अंतिम तानाशाह शासक अबुल हसन के राज्य के कवि कचेर्ल गोपन्ना (रामदास) ने राजस्व में मिली अपनी संपति धर्म-कार्य में खर्च कर दिया था। यह समाचार सुनकर तानय्या (अबुल हसन) ने उन्हें गोलकोण्डा में बन्दी बना लिया। इनकी महत्त्व पूर्ण कृति 'दशरथी शतकमु' रामभक्ति का अजस्त्र सागर है।

संधिकाल - तालिकोट युद्ध के बाद आंध्र का अधिकांश भाग मुस्लिम शासकों के अधीन हो गया। किंतु पेनुकोंडा और चंद्र गिरि में सन् **1650** ई. तक विजयनगर के उतराधिकारी शासन करते रहै। तंजौर और मुदुरा दोनों तेलुगु राज्य थे। तंजौर साहित्य कला का केंद्र था तो मदुरा राजनीतिक दाँव-पेंच का । मदुरा के राजा तिरूमल नायकने मयदानव के सभा- भवन के आधार पर 'महासभा भवन' बनवाया था। इन राज्यों पर पांण्डय और चोल राजाओं का अधिकार था। तंजौर के रघुनाथ नायक और विजय राघव नायक कवियों के आश्रयदाता एवं स्वयं अच्छे कवि थे। रघुनाथ ने ही वीणा वाद्य को विकसित किया था। रघुनाथ ने अपने पिता की जीवनी को पद्यवद्ध किया था तथा उनके पुत्र विजय राघव ने 'रघुनाथाभ्युदयमु' नामक यक्षकाव्य की सर्जना की। वंश परंपरा केअनुसार विजय राघव के पुत्र मन्नारदास नेअपने पिता की जीवनी को साहित्य रूप दिया। सरस्वती महल' नामक विशाल पुस्तकालय इन्हीं नायक राजाओं की देने है।

चेमकूर वेंकटकवि - चेमकूर वेंकटकवि तंजौर के कवि-शिरोमणि कहै जाते हैं, इनकी 'विजय विलासमु' में अर्जुन की तीर्थयात्रा का वर्णन किया गया है। उलूपी, चित्रांगदा, सुभद्रा के साथ अर्जुन के विवाह कथानक को श्लेश शैली में भाषा की सहजता के साथ दिखाया गया है। इस काव्य का यमक - सौंदर्य इस पद्य में दृष्टव्य है-:

'मीरदंदु नरूगा नरूगानरूगा' (आप लोग कही-कहीं पहुँचने पर अर्जुन को देय नहीं सकेंगे) वेंकट कवि की 'सारंगधर चरित्रमु' कृति भी उल्लेखनीय है। इनका प्रत्येक शब्द सुगंधित तथा मीठी प्रतीत होती है।

दीक्षित कवि - रामभद्र दीक्षित की कृति 'जानकी परिणयमु', (नाटक), लीलाशुक का 'कृष्ण कर्णामृतम्' आदि रचनाएँ दीक्षित कवियों की संस्कृतनिष्ठता को व्यक्त करती है।

विजय राघव नायक - इनकी कृतियाँ रघुनाथ नायकाभ्युदयमु' (नाटक), 'कालीयमर्दन' (नाटक), प्रह्लाद चरित्र, पूतना हरण, विश्रनारायण चरित्रमु' (काव्य) आदि महत्त्व पूर्ण है। विजय राघव इतना गर्व करता था कि स्वयं को महाकवि मानकर अपने पैर में 'गण्डेपेण्डेरमु' पहनता था। इनके दरबारी कवि चेंगल्व काल ने 'राजगोपाल विलासमु' काव्य की सर्जना करते हुए तेलुगु में नायिका भेद आरंभ किया। इसमें कृष्ण की आठ रानियों का शिख वर्णन है।

रंगाजम्मा - आठ भाषाओं की ज्ञाता रगाजम्मा का नाम 'पसुपुलेटि' था। इनकी कृतियाँ 'मन्नारूदास विलासमु', ऊषा परिणयमु, 'रामायण-संग्रह', 'भारत संग्रह' और 'भागवत संग्रह' आदि है। इनकी कृतियाँ साहित्य भारती की कर्पूरवर्तिका आरती सदृश है।

यक्षगान - 'वीधी' नाटकों को तेलुगु में 'यक्षगान' कहा जाता है। आगे चलकर 'यक्षगान' और 'बुर्रकथा' के रूप में वीधी नाटक प्रचलित हुए। यक्षगान में लय के साथ तोहरलु, कीर्तन, पद्य,

गद्य का समावेश होता गया। इस प्रकार तंजौर शासन काल में तेलुगु साहित्य, संगीत, नृत्य का चहुँमुखी विकास हुआ। तेलुगु साहित्य का संक्रमण काल इन्हीं के कारण महत्त्व पूर्ण बना रहा।

6.3.6 तेलुगु साहित्य का तृतीय काल (सन् 1701से 1850)

ग्यारहवीं शती से लेकर सत्रहवीं शती तक चालुक्य, काकतीय, विजयनगर साम्राज्य में तेलुगु साहित्य खूब फला-फूला। इसके बाद की राजनीतिक विश्रृंखलता के बाद शासन तंजौर, मदुरा तक सीमित हो गयी। मदुराराज्य में विजयरंग चोक्कानाथ के समय समुखमु वेंकट कृष्णप्पनायक ने 'जैमिनी भारतमु' नायक गद्य रचना की। मैसूर राज्य के सेनापति कुलवे वीरराजु ने 'महाभारत' को गद्य में लिखा। आंध्र राजा अनेक छोटे-छोटे शासन केन्द्रों में विभाजित था। राजमहैन्द्रवरम, पेद्दपुरम, विजयनारम् बोब्बिली, पिठापुरम् आदि चार सामंत राज्यों में तेलुगु साहित्य विकसित होता रहा। तृतीय काल के प्रमुख कवियों और उनकी रचनाओं का अवलोकन इस संदर्भ में अपरिहार्य है।

कूचिमंचि तिम्मकवि - इन्होंने कई शतक, दण्डक एवं प्रबंध काव्यों की रचनायें की। इनकी रचनाओं में 'नीला सुंदरी परिणय, 'राजेश्वर विलास', रसिक जन मनोभिराममु', 'सर्वलक्षण सार संग्रह' 'अच्च रामायण' आदि महत्पूर्ण है। अच्च का तेलुगु अर्थ ठेठ होता है, जिसमें पकार, शकार का प्रयोग नहीं होता है। तिम्मकवि की प्रतिभा से अभिभूत होकर विद्वानों ने इन्हें 'कवि सार्वभौम' की उपाधि दी थी। भाषा, छंद, अलंकार पर पूर्ण अधिकार रखते हुए भी भावाभिव्यंजना में ये चूक गये हैं। उन्होंने कंद नामक छंद में परिवर्तन कर उसे प्रभावशाली बनाया।

कंकंटि पापराजु - पापरातु ने तिक्कना के 'उत्तर रामा यणमु' को अपनी वैदर्शी शैली में पुनः लिखा। तेलुगु भाषा का जो रूप प्रारंभिक काल तथा मध्यकाल में निखरा था वह कुतुबशाही जैसे मुस्लिम शासकों के समय बदल चुका था। जिसे पुनर्गठित करने की आवश्यकता थी। भाषा में फारसी, अरबी, के कई शब्द प्रवेश पा चुके थे। इसीलिए तृतीय काल के विद्वानों ने लक्षण ग्रंथों, निघंटु (आंध्र भाषा सर्वस्वमु) आदि का प्रणयन किया। आचार-व्यवहार के क्षेत्र में धर्मग्रंथों का पुनर्प्रणयन किया गया। आंध्र पर मुसलमानों के आक्रमण के समय परशुराम पंतुलु लिंगमूर्ति ने आंध्र में योगविद्या का प्रचार किया। लिंगमूर्ति ने 'सीतारामांजनेय संवादमु' कृति की रचना करके इसका महत्त्व प्रतिपादित किया।

लिंगमूर्ति के पुत्र राममूर्ति ने 'शुक चरित्र' की रचना कर अपने पिता के विचारो का संवर्धन किया।

श्रृंगारिक रचनाएँ - पद्यनायक वंश के राजा वैष्णव थे। इनके उपास्यदेव कृष्ण थे। अतः कुछ कवियों ने आश्रयदाता की प्रशंसा में कृष्ण की रसिक रूप व्यंजना की है। सर्वज्ञसिंह भूपाल कृत 'रत्नपंचाशिका' रूपक नाटकों में शिखर पर गिनी जाती थी। तंजौर के कई अन्य कवियों ने भी श्रृंगारिक रचनाएँ की। मुद्दुपलनि कृत 'राधिका सान्त्वनमु', कामेश्वर की 'सत्यभामा सांत्वनमु', समुखमु वेंकट कृष्णप्प नायक के 'अहल्या संक्रदनीयमु' और शेश मु वेंकटपति के

'ताराशांकमु', अज्जपुर पेरियालिंग की 'तोडयानंवि विलास' आदि श्रृंगार रचनायें कही-कहीं अश्लीलता की सीमा लाँघ गई है। बिल्हण की कहानी को तेन्नूरू शोभानाद्रि ने 'पूर्ण चंद्रोदय', चेल्लपल्ली नरसकवि का 'यामिनीपूर्णलिका विलास', शिवराम कवि का काम कला निधि' आदि कामशास्त्र का विवेचन ही प्रतीत होता है।

जग्गकवि - इस काल के कूचिमंचि, जग्गकवि का श्रृंगार वर्णन में नाम लिया जा सकता है। जग्गकवि ने राजा की रखेली चन्द्ररेखा पर 'चन्द्ररेखा विलास' की रचना की । किन्तु राजा के तिरस्कार से दुःखी होकर यह कृति उन्होंने जलाकर 'चन्द्ररेखा विलाप' की रचना की।

दिद्दकवि नारायण - इनके 'रंगराय चरित्र' में बोब्बलि के युद्ध का ऐतिहासिक वर्णन है। भट्टप्रभु की 'कुचेलोपाख्यान', 'सुरामडेश्वर' कृति को खूब प्रसिद्धि मिली। इस काल में श्रृंगारिक काव्य के अतिरिक्त शतक साहित्य, प्रशंसात्मक कविता (चाटु कविता) का भी खूब विकास हुआ।

चौडप्प शतक - इस शतक में मात्र 'कंद' छंद (संस्कृत के 'आर्य' छंद का परिवर्तित तेलुगु रूप) का प्रयोग किया जाता है। चौडप्पा ने छंद की पोतन्ना शैली को अपनाया।

इन्होंने नीति काव्य के साथ-साथ निन्दा काव्य की भी रचनायें की।

गोगुलपाटि कूर्म - इन्होंने सीस छंद में 'वेणुगोपाल शतकमु' , 'सिंहाद्री नारसिंह शतकमु' की रचना की है। इसकी काल में 'कालुवाय शतकमु', 'मदनगोपाल शतकमु', 'लावण्य शतकमु', 'इंदुशतकमु (इसमें पति वियोग में मुग्धा नायिका चन्द्रमा से कृष्ण और गोपियों की कुशल पूछती है।) आदि श्रृंगारिक काव्य भी लिखे गये।

कासुल पुरूषोत्तमकवि - इनकी रचना 'आंध्रनायक शतक' का प्रत्येक पद व्याजनिंदा से भरा हुआ है। व्यावहारिक भाषा में सटीक अभिव्यक्ति इस रचना की विशेष ता है।

चाटुकविता - इस काल के कुछ कवियों ने प्रबंध काव्य और लक्षण काव्य के साथ चाटु कवितायें भी लिखी। लेकिन कुछ ऐसे भी कवि हैं जो मात्र चाटुकविता के आधार पर ही प्रसिद्ध हुए, इनका उल्लेख प्रासंगिक होगा।

अडिदमु सूरकवि - इन्होंने 'आंध्र चन्द्रालोकमु', 'आंध्र नाम शेश मु', 'कवि संशय विच्छेदमु' आदि लक्षण-ग्रंथ तथा 'कवि जनरंजन' नामक तीन आश्वासों वाला काव्य लिखा है। चाटुकविता के क्षेत्र में इनको खूब प्रसिद्धि मिली।

पिंडिप्रोलु लक्ष्मण कवि - इनकी 'रावण दम्भीय' अथवा 'लंका विजय' नामक कृति इनके नीजी जीवन से जुडी है। जमींदार द्वारा रूष्ट होकर इनका खेत छींन लिया जाता है, फलतः उक्त दत्यर्थि काव्य सर्जना करते हैं। मृत्युंजय कवि की धरात्मजा परिणयमु में कही भी ओष्ठ्य अक्षरों का प्रयोग नहीं किया गया है। लक्ष्मण कवि ने अपने काव्य हेतु इतिहास, पुराण और सामाजिक घटनाओं को चुना है जो इनकी कृति को कालमुक्त प्रसिद्ध देती है।

पद अथवा कीर्तन - क्षेत्रय्या कवि के भक्ति पूर्ण श्रृंगार रसपूर्ण काव्य जयदेव की समानता करते हैं। इनकी कृति 'मुब्ब गोपाल पद' में मछलीपद्दनम् के गोपाल स्वामी की स्तुति के साथ -साथ नायिक भेद पर प्रकाश डाला गया है।

आंध्र के कुछ ब्राह्मण नियोगी और वैदिक कहलाते थे। नियोगी ब्राह्मण राजाओं के प्रधान मंत्री पदों पर कार्यरत थे जबकि वैदिक ब्राह्मणों की वेदोच्चारण के क्षेत्र में विशेष प्रसिद्धि थी। ऐसे वैदिक ब्राह्मणों में पंडितराज जगन्नाथ को कौन नहीं जानता। तृतीय काल के कई कवि नियोगी ब्राह्मण थे। इस काल के कुछ वैदिक ब्राह्मणों ने तेलुगु में लिखने का प्रयत्न किया था। शिष्टु कृष्णमूर्ति शास्त्री, पिठापुरम् के राजा के समय के विद्वान थे। इन्हें 'चाटुकवि चक्रवर्ती' की उपाधि चाटुकवियों ने दी थी। इनकी कृति 'राजगोपाल विलास काव्य' है। वैदिक ब्राह्मणों को राज्याश्रय न मिलने के कारण उन्हें अपने भरण-पोषण के लिए अन्य दिशाओं में भी प्रयत्न करना पड़ा।

निन्दात्मक कविता - निन्दात्मक कविता, चाटुकविता की पूरक है। वेमुलवाड़ा भीम कवि, रामराज भूषण, मेधावी भट्ट, तुरगा राम आदि कवियों की निन्दात्मक काव्य प्रस्तुति ने बड़े-बड़े राजाओं को झुका दिया। आंध्र में यह लोकोक्ति प्रसिद्ध हो गयी कि पेद्दापुराम का नाश कवियों के कुछ होने से हुआ।

भर्तुहरि के शतक और वाल्मीकि रामायण - ने भर्तुहरि के श्लोकों का तथा गोपीनाथ ने वाल्मीकि रामायण को 'गोपीनाथ रामायण के नाम से तेलुगु अनुवाद किया उत्तर मध्य काल में तेलुगु गद्य की गति अत्यंत धीमी थी,जो इस काल में खूब विकसित हुई।

तृतीय काल की विशेष ताएं - इस काल के कवियों का ध्यान भाव की अपेक्षा भाषा पर केन्द्रित था। वर्ण्य-विषय को छोड़ दें तो कल्पना, शैली, भाषा, छंद, और अलंकार की दृष्टि से यह काल महत्त्व पूर्ण है। एक तरह से काव्य का विकास बाह्य रूप में हुआ किंतु आंतरिक पक्ष उपेक्षित रहा। नन्न्य भट्ट ने ही तेलुगु गद्य का आरंभ कर दिया था, किन्तु उसका विकास तृतीय युग में खूब हुआ। इस समय का साहित्य यथार्थ के करीब था।

कुछ आलोचकों ने सन् 1710 ई. से सन् 1800 ई. तक के समय को अंधकार युग का नाम दिया है।

मुसलमानी प्रभाव - काकतीय शासन के समय मुसलमानों ने आक्रमण किया था, लेकिन वे यहाँ के साहित्य और समाज पर विशेष प्रभाव नहीं डाल पाये। तृतीय काल में आंध्र पर मुसलमानों का पूर्ण अधिकार स्थापित हो चुका था। तेलुगु भाषी सामंत इन्हीं मुसलमान शासकों की कृपा कर निर्भर थे। आंध्र में इन शासकों के कारण उत्तर भारतीय हिन्दी की बोलियों का प्रवेश हुआ, इनकी भाषा को 'तुरकल माटा' (तुर्की की भाषा) कहा जाता था। अरबी, फारसी मिश्रित हिन्दी साहित्य के मंगलाचरण और राजप्रशंसाओं का अनुकरण अब तेलुगु साहित्य में भी होने लगा था। तेलुगु साहित्यकार अपनी भाषा, शैली, छंद की विशुद्धि हेतु नानाविध साहित्य प्रयोग करने लगे थे।

6.3.7 तेलुगु गद्य साहित्य का विकास (नन्नय से सन् 1850 ई. तक)

तेलुगु गद्य - शिलालेखों के आधार पर तेलुगु गद्य नन्नय से पूर्व ही प्रचलित था। आंध्र देश में सन् 625 ई. में पूर्वी चालुक्यों के शासन काल में शिलालेख पाया गया है, जो गद्य रूप में है।

तत्कालीन बोलचाल की भाषा में प्राकृत के कई शब्द मिश्रित थे। जयसिंह बल्लभ के 'विघटटु' और मंगियुवराज के लक्ष्मीपुरम् वाले शिलालेख पूर्वी चालुक्यों के समय के है। चालुक्य भीम के 'कोरवि' के शिलालेख में मधुर संभाश ण शैली का प्रयोग हुआ है।

जब कोई भाषा रंजक शैली में सरस पद्धति में उत्तम भावभिव्यक्ति करने लगे तो उसे काव्य कहते हैं। काव्य में छंद, लय, तुक, अलंकार होता है, किंतु जब इन सबसे मुक्त स्वछंद भाषा रूप की रसपूपर्ण भावाविव्यक्ति हो तो गद्य कहलाती है तथा गद्य और पद्य मिश्रित रचना चंपू कही जाती है। भारतीय भाषाओं में तेलुगु तीसरी सबसे अधिक बोले जाने वाली भाषा है जो हिन्दी और बंगला के बाद आती है। तेलुगु अपनी मधुरता के कारण ही पाश्चात्य विद्वानों द्वारा ''इटलियनल ऑफ दी ईस्ट' (पूर्व की इतालवी भाषा) कही जाती है।

नन्नय भट्टारक -

चालुक्य - वंश के चक्रवर्ती राजा राजराज नरेन्द्र के प्रोत्साहन पर नन्नय भट्ट ने चंपू शैली के 'संस्कृत 'महाभारत' का आंध्रीकरण किया। यह रचना शब्द- चयन, सरस शैली में कवित्रय (नन्न्य, तिक्कना, एर्राप्रेगड़ा) द्वारा पूर्व हुई। प्रायः तेलुगु भाषी शब्दालंकार प्रिय होते हैं। यहीं कारण है कि ऐसे शब्दालंकार और पद-रचना के नियमों से पूर्व भाषा विश्व- वाड्मय में दुर्लभ है। संस्कृत में यति और प्रास का नियम नहीं है, जबकि अंग्रजी में Rhyme (अंत्यनुप्रास) है। नन्नय से लेकर चेमकूर वेंकटकवि तक (सन् 1020 से सन् 1620 तक) केवल चंपू काव्य ही अधिक लिखे गये। नायक राजाओं के समय में गद्य की महत्त्व को समझते हुए इसे अपनाया। नन्नय का गद्य व्याख्यात्मक, भावपूर्ण, है। नन्नेचौड़ की गद्य रचना चमत्कारपूर्ण है। तिक्कना रचित भारत - सावित्री' नामक गद्यग्रंथ का आंध्र नारियों द्वारा नित्य पठन किया जाता है।

18वीं शती गद्य रचना का स्वर्णयुग कहा जाता है। तेलुगु ही नहीं अंग्रेजी, फ्रेंच, आदि के लिए यह युग स्वर्णिम था। मैसूर के चिक्कदेवराय के सेनापति कलुवे वीरराजु ने 'महाभारत' को गद्य में लिखा। श्री तुपाकुल अनंतभूपाल ने 'भीष्म पर्व', 'विष्णुपुराणे, 'रामायण-, का सुंदरकांड' गद्य में लिखा था। श्री नारायणय्या का 'शांतिपर्व' जीवंत गद्य ग्रंथ प्रतीत होता है। 'रामायण' को श्री श्याम कवि, शिंगरातु', दत्तात्रेय, पैडिपाटि पायय्या ने तो 'भागवत' को वेंकट सुब्बय्या, पुष्पगिरि तिम्मना ने गद्य में भाषांतरित किया। नंदरातु का 'हालास्य महात्म्य', श्रीविजयरंग चोक्क भूपाल ने 'श्रीरंग महाकाव्य', कामेश्वर ने 'धेनुमहात्म्य', वेंकट कृष्णप्पै ने 'जैमिनी भारत' आदि को गद्य रूप में ही प्रस्तुत किए।

भक्ति वचन - भक्ति पूर्ण पद्यशतकों की तरह 105 वचनों की माला बनाकर इष्टदेवता को समर्पित करने की परंपरा इस काल में खूब प्रचलित थी। प्रमुख वैष्णववचन है- 'वेंकटेश्वचन', 'शतकोटिविन्नपमुलु', 'कृष्णमाचार्य कीर्तन,' 'चूर्णिक', आदि। 'शैवचूर्णिक' आदि उल्लेख है।

इतिहास - श्री कृष्णदेवराय का इतिहास 'रायवाचक', काकतीय राजवंशावली का 'प्रतापचरित्र', हैदर टीपू सुल्तान का 'सारंगधर चरित्र' आदि प्रमुख इतिहास ग्रन्थ इस युग को धरोहर है।

कथाएँ - ब्राउन साहब का 'ताताचार्युलु कथल्लु', शुकशहराती, 'तोते की कथाएँ, कीर बहत्तरी कथाएँ, हंस विंशाति, 'पंचतंत्रकथलु', 'छाविंशति', 'सालभंजिका कथाएँ, परिश त्पादुषा कथलु, विनोद कथलु, गोलकोंड नवाब कथुलु', आदि के अतिरिक्त 'चन्द्रहसा चरित्रमु' आदिउल्लेख कथाएँ हैं।

यात्रा वृत्तांत - तेलुगु साहित्य में यात्रावृत्तांत की परंपरा भी खूब पायी जाती है। कुछ प्रमुख यात्रा वृतांत हैं ।- 'नीलगिरि यात्रा चरित्र' (कोला शेषाचल कवि), 'काशीयात्रा चरित्र (श्री एनुगुल वीरामय्या) आदि।

तेलुगु साहित्य को मेंकेंती और ब्राउन महाशय की देन - चौथे मैंसूर युद्ध में टीपू सुल्तान को हराकर मैंकेंजी ने कन्याकुमारी से चिलका झील तक पाँच वर्षों तक पर्यवेक्षण किया। उन्होंने प्रमुख घटनाओं विशेषताओं तथा इतिहास का संग्रह कर मद्रास प्राच्य पुस्तकालय में सुरक्षित किया। ब्राउन ने तेलुगु सीख कर जिला गजेट और मद्रास राज्य का गज़ेट तैयार कराया जो महत्त्व पूर्ण है।

6.3.8 तेलुगु साहित्य के विविध काव्य रूप

तेलुगु कवियों ने वर्णनात्मक रचना हेतु पद्य तथा विवरणात्मक हेतु गद्य का प्रयोग करते हुए गद्य का भंडार संविर्धित किया। इसके अतिरिक्त तेलुगु काव्य के विविध रूप हैं, जिन्हें इन चरणों में विश्लेषित किया जा सकता है।

शतक साहित्य - शतक साहित्य प्रबंध युग के बाद की तेलुगु की मौलिक विधा है।शतक साहित्यकारों की सरल, स्वाभाविक प्रस्तुति अपढ़ व्यक्ति के लिए भी इसे वोधगम्य बना देती है। यह साहित्य लोक साहित्य और शास्त्रीय साहित्य की बेजोड़ प्रस्तुति है। विन्नकोटि पेद्वना ने सर्वप्रथम इसे 'क्षुद्र' साहित्य की संज्ञा देते हुए शतक साहित्य को साहित्य की श्रेणी में रखा। आधुनिक युग के स्वर्गीय है बंगूरि सुब्बाराव ने शतक साहित्य की वृहद् समीक्षा की। शतक साहित्य तथा अंग्रेजी के प्रगीत-मुक्तक (लिरिक) में पर्याप्त साम्य हैं । क्योंकि दोनों में काव्य के अंतर्पक्ष की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई है। शतक् साहित्य के लिए विषय की कोई सीमा नहीं है। नीति, भक्ति, श्रृंगार, हास्य आदि कोई भी विषय शतक के लिए लिया जा सकता है।

तेलुगु के कुछ शतकों का दशकों में वर्गीकरण हुआ है जैसे'- नारायण शतक (नाम दशक, आदिदशक ज्ञानविंशति, अवतार दशक) , मन्नारूकृष्णशतक (दाससंग दशक, गोपालन दशक) रामचंद्र शतक आदि।

तेलुगु भाषा के शतक से पहले संस्कृत, प्राकृत भाषा में समृद्ध शतक परंपरा रही हें 'अवदान' नामक शतक प्राकृत भाषा में पाया गया है जो बौद्ध-धर्म से सम्बन्धित है। संस्कृत का 'दिव्यवदान शतक 'गद्यनिष्ठित, समासयुक्त शैली में लिखा गया है। इस अवदान की कुछ कथाओं को चुनकर 'कल्प ध्रमाब्दन माला' नामक ग्रंथ का प्रणयन हुआ। इसी तरह 'अशोकावदानमाला' और ' रत्नावदान माला' भी है। शिव और विष्णुस्तोत्र की भांति बुद्ध सम्बद्ध कई स्त्रोत संस्कृत में मिले हैं। जैसे- 'कल्याणपंच विशतिका, 'सुप्रभांत स्तवन'', 'परमार्थ

नाम संकीर्तन', लोकेश्वर शतक', आदि में शक्यमुनि बुद्ध और बोधित्वों की स्तुति की गयी है। अवलोकितेश्वर की पत्नी तारादेवी से संबंधित स्तोत्र 'आर्य धारा स्त्रग्धरा स्तोत्र' कवि सर्वज्ञ मित्र द्वारा लिखा गया है। एक ब्राह्मण को यज्ञपशु बनने से बचाने हेतु कवि सर्वज्ञ रक्षा की। चन्द्रगोमि वे भी 'तारासाध' नामक शतक लिखा था तथा तिब्बती भाषा में भी **62** स्तोत्रों का अनुवाद प्राप्त होता है। 'अमरूक', 'श्रृंगार तिलक', 'भर्तृहरि सुभावित', 'मूक पंचशति, आदि महत्त्व पूर्ण शतक काव्य है। शंकराचार्य का 'शिवानंद लहरी', सौंदर्य लजहरी'', मयूर कवि का 'सूर्य शतक' तथा कुलशेखर का 'मुकुन्दमाला' आदि शतक काव्य कहै जाते हैं। संस्कृत में 'पंचक', (पाँच पंक्ति के श्लोक), अष्टक (आठस पंक्ति के श्लोक), 'शतक' (सौ पंक्ति की श्लोक कविता) आदि। इस प्रकार संस्कृत में धर्म, नीति, श्रृंगार और वैराग्य की उत्तम शतक रचनाओं की परंपरा रही है। तेलुगु का शतक साहित्य भर्तृहरि के शतकों से प्रभावित है। तेलुगु शतक साहित्य के प्रत्येक पद में कवि ईश्वर के साथ स्वयं को भी संबोधित किया गया है। हिन्दी में मीरा के पद में 'मीरा के प्रभु गिरिधर नागर' यह चरण आया है। तेलुगु में इसे 'मुकुट' कहा जाता है। इन मुकुटों के आधार पर 'शतकों' का नामकरण किया गया है। तेलुगु में पाल्कुरिकि सोमनाथ का 'वृषाधिप शतक' 'मुकुट' परंपरा का बेजोड़ नमूना है। यह शतक 'जानु तेलुगु' (विशुद्ध तेलुगु) में लिखा गया है। अन्नमय्या का 'सर्वेश्वर शतक' भी इस संदर्भ में उल्लेख है। 'सुमति शतक' के रचयिता का नाम सिद्ध नहीं हो पाय है। वेमना शतक से मेल के कारण वेमना की रचना मानी जाती है। बेन्नेलकंटि जन्नय की 'देवकीनंदन शतक', अय्यलरातु त्रिपुरांतक की 'ओटिमेट्ट रघुवीर शतक', धूर्जटि की 'श्री कालहस्तीकश्वर शतकमु', तथा ताल्लपाक अन्नमाचार्य की 'श्रृंगारवृत्त पद्य शतक', 'वेंकटेश्वर शतक' आदि महत्वूपूर्ण शतक है।

चौडप्पा का चौडप्प शतक (श्रृंगारिक शतक), गोपन्ना का 'दाशरथी शतक' तथा अज्ञात कवि कृत 'भास्कर शतक' आदि उल्लेखनीय है। सत्रहवीं शती में अप्प कवि के 'बज्रपंजर', 'मरूनंदन' का उल्लेख तो है किंतु यह उपलब्ध नहीं हो सका है। गणपवरमु वेंकटकवि का 'यंमक' तथा 'कठिनप्रास' शतक, लक्षण ग्रंथकार अप्प कवि का 'श्री नागधि शतक' अब तक नहीं मिल पाया है। अठरहवीं शती तथा उसके बाद के कई शतक प्राप्त हुए हैं.

यक्षगान - 'यक्ष' शब्द का अपभ्रंश रूप है- जक्कु। यक्षगान दृश्य काव्य तेलुगु में प्राचीन समय से ही प्रचलित था, किन्तु इसका लिखित रूप सर्वप्रथम कवि रूद्रय के 'सुग्रीव विजय' से प्राप्त होता है। इसके रचना का समय सन् 1050 ई. है। प्रोलुगंटि चेन्नकवि ने प्रियद छंद में 'गद्य भारत' 'नरसिंह पुराण', आदि की रचना कर 'अष्टभाषा पंडित' की उपाधि पायी।

तंजौर शासकों ने प्रायः यक्षगान रचयिताओं को ही आश्रय दिया। दक्षिणान्ध्र युग मानो यक्षगान हेतु स्वर्ण युग बन गया है। आदिवासी कुरवंजे नृत्य ने धार्मिक यात्रा (जातरा) का अनुकरण कर गीतिनाट्य का रूप धारण कर लिया। वनवासी कुरब, चेंचु जातियों द्वारा गाँव एवं नगर में वस्तुओं को बेचने के साथ ही नृत्य, मनोरंजन भी किया जाता था। ग्रामीण नृत्य और अभिनयकर्ताओं की जाति 'जक्कुल' ने गीति-नाट्य का रूप दिया (धीरे-धीरे गीतिनाट्य में नृत्य का अंश कम होते-होते यह 'यक्षगान' कहा जाने लगा) धर्मोपदेश के साथ मनोरंजन का मेल

होने से जनता का आकर्षण, धर्म के प्रति बढ़ने लगा। प्रारंभिक मूकाभिनय आगे चलकर यक्षगान' का रूप धारित करने लगा। साहित्य संगीत, नृत्य के समन्वय से 'यक्षगान' या 'जक्कुलु' और 'पाटा' का उद्भव हुआ। पुराणों में यक्षों का उल्लेख मिलता है। प्राचीन यक्षगान 'द्विपद छंद' में लिखे जाते थे। कुछ विद्वान संस्कृत की द्विपदिका से इसकी उत्पत्ति मानते हैं। द्विपद के चार चरण होते हैं शब्द, खण्ड मात्रा और सम्पूर्ण आदि। सोमना कवि ने देशी छंद में काव्य सर्जना कर यक्षगान का मार्गदर्शन किया। तमिल के उलाप्रबंध पद्धति पर तेलुगु यक्षगान की रचना मानी जाती है। यक्षगान का नाटक से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसके साथ ही संस्कृत नाटकों के प्रभाव से अछूता भी नहीं है तेलुगु यक्षगान । तलजराज के 'शिवकाम सुंदरी परिणय' में नाटकों की तरह 'नांदी' और प्रस्तावना दानों ही है। विजय राघव का 'पूतना हरण' मातृभूतन का 'परिजातापहरण' आदि नाटकों के अंक प्रणाली का अनुसरण करता है।

अंगंजर के - आपेरा' और संस्कृत के 'उपनाटकों' से यक्षगान' पर्याप्त साम्य रखता है।

यक्षगान की रचना तेलुगु 'रगड़ा' नामक देशी छंद में की जाती हैं । इसमें छंद के छोटे-छोटे भेद पाये जाते हैं, जैसे- ईललु, जोललु, सब्बाललु, आरतुलु धव्वमुलु, चंदमामा सुद्तुलु, विलालि पदमुलु, वेन्नेल पदमुलु, त्रिपदलु, चौपदलु, शट्पदलु, मंजुरूलु, जक्कुलु, रेकुलु आदि। कुछ यक्षगानों में काव्यों वाले छंद प्रयुक्त हुए हैं। जैसे- सुग्रीव विजय में सीसमु, तेटगीति, उत्पलमाता, त्रिपुट , जंपे, कुरूचजंपे, आट एकतालमु, एललु, धबलार्थ, चन्द्रिकलु, द्विपदलु आदि। यक्षगान में पात्रों के प्रवेश करने और कथा की रंधि -सूचनार्थ गद्य का प्रयोग हुआ है। श्री कंकटि पापरातु का 'विष्णुमाया विलासमु', अक्कणामात्य का 'कृष्ण विलास-, 'भीमसेन विजय,' श्री वेंकटाद्रि का 'वासंतिका परिणयम', 'विष्णुमाया विलास', विजयराघव का विप्रनारायण चरित्र' आदि महत्त्वपूर्ण यक्षगान है।

हास्य रस - इसमें हास्य रस की प्रमुखता होती है। ब्राह्मणों और ग्वालों के सम्भाषण द्वारा हास्य रस उत्पन्न किया गया है। कलापमु में 'विदूषक' को 'माघविगाडु' कहा गया है। क्योंकि वह सत्मभामा की सखी का वेश धारण करता है। 'गोल्लकलाप में सन्कुरी रंगय्या का हास्य गुदगुदाता अवश्य है।

प्रथम यक्षगान 'सुग्रीव विजय' के बाद कई यक्षगान लिखे गये, जिसमें प्रोलुगंटि चेन्नकवि का 'सौभरि चरित्र' उल्लेखनीय है। चेन्नकवि को 'अष्टभाषा कवि' की उपाधि मिली थी। तंजौर के नायक राजाओं के बाद मराठा शासकों ने भी यक्षगान को बढावा दिया। पुरूषोत्तम दीक्षित के 'तंजापुरान्नदान महानाटक', मन्नारदेव के हैमाब्ज नायिका स्वयंवर' महत्त्वपूर्ण यक्षगान है।

विजयराघव के मृत्यु के 17वर्षों बाद तंजौर पर मराठी शासक एकोजी के पुत्र शाहजी (प्रथम) का शासन स्थापित हुआ। शाहती के 21यक्षगान प्राप्त हुए, वे हैं- जलक्रीड़ाएँ, किरात विजय, कष्णविलास, सतीदान शूर, सीता कल्याण, सती पतिदान विलास शांता कल्याण, विष्णु पल्लकी, सेवा प्रबंध, शंकरपल्लवी सेवा प्रबंध, शचीपुरंदर, बल्ली कल्याण, विघ्नेश्वर कल्याण, रूक्मिणी- विनोद चरित्र, पार्वती परिणय, रतिकल्याण, रामपट्टाभिश क, गंगा पार्वती संवाद, द्रौपदी कल्याण, त्यागराज विनोद चरित्र आदि। शाहजी के दरबारी कवि गिरिराज ने राजकन्या

परिणय, राजमोहन कोरवंजि, लीलावती कल्याण, वादजय नाटक, सर्वांगसुन्दरी विलास, शाहैन्द्र विजय, कवि सुब्बन्ना का 'लीलावती', शाहजीय, शेषा चलपति का शाहराज विलास, सरस्वती कल्याण, तुकडोजिराजा, का 'शिवकामसुन्दरी परिणय', आदि लोकप्रिय यक्षगान है। मदुरा के तिरूमल कवि का 'चित्रकूट महात्म्य', मैसूर के कवि गोगुलपाटि कर्मनाथ का 'मृत्युंजय विलास' तथा अज्ञात कवि का चिक्कदेवराय विलास', ओबयमन्त्री का 'गरुड़ाचल' (चेचु नाटक) अक्क प्रधान का 'कृष्ण विलास', 'भीमसेन विजय', चेंगस्वनराय का 'गोल्ल कथा', सूरय्या का 'विवेक विजय', कृष्ण मिश्र का 'प्रबोध चन्द्रोदय' आदि उल्लेखनीय यक्षगान है, जो तेलुगु साहित्य को समृद्ध बनाते हैं।

लोकगीत परंपरा अथवा तेलुगु गीति साहित्य - प्राचीन काल से लेकर अब तक मानव मनोभावों की अभिव्यक्ति छंद तथा गीत के माध्यम से करता रहा है। प्रकृति के प्राणियों में मनुष्य की सौंदर्य पिपासा और आत्म-विकास की प्रवृत्ति, उसे नित -नये प्रयोग हेतु प्रेरित करती है। उसके मनोभाव ध्वनि के माध्यम से गीतों के रूपम में प्रकट हुए हैं। तेलुगु में लोकगीतों की स्वस्थ परंपरा रही है। तेलुगु के लोकगीतों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है। सर्वप्रथम वे लोक गीत है जिनका किसान, चरवाहा, बैलगाड़ी हांकने वाला, चक्की पीसनेवाली आदि के द्वारा प्रयोग किया जाता है, इन लोकगीतों का विभाजन इस प्रकार किया है-

कोत गीतमु (फसल का गीत), ऊतगीतमु (मजदूर का गीत), बालेशुपदमु (मजदूर का गीत), पर्वतपदमु (पहाडी़ गीत), रोकटि पाट (धान कूटते समय गाया जाने वाला गीत), वेन्नेल पाट (चाँदनी का गीत,) पेंड़िल पाट (विवाह का गीत), जाजर पाट (स्त्रियों का गीत), आदि में समय के साथ -साथ परिवर्तन होता रहा। इन गीतों में क्षेत्रीयता, स्थानीय भाषा की प्रचुर मात्रा पायी जाती है। दूसरे प्रकार के लोकगीत लिखित रूप में पाये गये हैं, जो वीर पुरूषों के चरित्र, प्रेम कथाओं और हास्य-विनोद के रूप में प्राप्त होत हैं। तीसरे प्रकार के लोकगीत ईशभक्ति से संबंद्ध हैं इन गीतों को तेलुगु में कीर्तन कहते हैं। तेलुगु में **12**वीं शती से लिखित लोकगीत प्राप्त होते हैं। सोमनाथ के 'बसवपुराण' में भी कुछ लोकगीतों का उल्लेख है - संगर माया स्तवमुलु, प्रभात पद, पर्वत पद, तुम्मेद पाटलु, आनन्दपद, शंकर पद, निवालिपद, छालेशु पद, गोब्बिललु पाटलु, वेन्नेलपद, सज्ज पद आदि बढे, बालकों और युवा के लिए लिखे गये लोकगीत है। तेलुगु में द्विपद कंद, तेटगीत, आटबेलदी, सीसमुलु, तरूवोजुलु आदि छंद गेय होते हैं। तेलुगु में बालक से लेकर वृद्ध तक के लिए गीतों की परंपरा रहीं है जैसे- लोरियाँ, गोपी गीत, ओखली गीत, कालीय मर्दन, जलक्रीडा देवर भाभी, कुशलव कथा, मिलन गीत, सुमंगली गीत, नाविक गीत, धान की रोपाई के गीत , रूई की धुनाई आदि के गीत अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

श्रीनाथ कृत 'पल्नाटि वीर चरित्रमु' में साहित्यिकता का पर्यापत पुट है। विस्तृत कथानक को गीत के रूप में पिरोना स्चयं में महत्पूर्ण घटना है। श्रीनाथ के बाद अठारवहवीं शती में 'बोब्बिलि कथा' का उल्लेख मिलता है। इसमें बोब्बिलि वेलमा लोगों की ओर से रंगारायुडु वेंगलरायुडु तांड्र पापय्या और मल्लम देवी के शौर्य की गाथा है। तेलुगु में बुर्रकथाओं' का पर्याप्त प्रचार रहा है। उत्तर भारत की रामलीला, रासलीला की तरह यह आंध्रवासियों से प्रचलित थी।

बुर्रकथाओं में श्रृंगार, वीर, हास्य, शांत आदि रसों का प्रयोग किया जाता था। प्रमुख बुर्रकथायें हैं- कामम्म कथा, चिन्नम्म कथा, कम्मवारि पडति कथा, लक्ष्मम्म कथा, वीरम्म पेरंटालु आदि। इन बुर्रकथाओं में सती, पतिव्रता, संतति हेतु कठिन तप करने वाली स्त्रियों का उल्लेख है। बुर्रकथाओं की उदान्त भावना के कारण ही यह आधुनिक काल में भी प्रचलित है।

तेलुगु में प्रेम काव्यों का संयुक्त परिवार की दृष्टि से खूब महत्त्व रहा हें देवर-भाभी, पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका साली-जीजा आदि के प्रेम कई बार इन गीतों में वासनात्मक रूप भी धारण कर लेते हैं। उदाहरण के लिए एक युवती का प्रेमी मर जाता है। लेकिन शर्म के कारण वह अपने आँसू को रोके रहती है लेकिन संयागे से उसके घर का बछड़ा मर जाता है तो वह उसके माध्यम से अपना दुःख विगलित करती है। 'चल मोहन-रंगा' लोकगीत की एक पंक्ति का अर्थ है- ''मेरे मोहन, ऐसा कोई नहीं जिसे हम अपना कह सके। अतः नदी के तट पर जीवन मधुर बनायेंगें लेकिन मेरे आंसुओं से ही मेरी गगरी भर गई हैं''.....। इस प्रकार लोकगीतों में प्रकृति चित्रण भी जीवंत हो उठा है। भजन-कीर्तन आदि की परंपरा भी लोकगीतों के रूप में रही है।

तेलुगु का संगीत - कीर्तन साहित्य - त्यागराज ने कहा था- प्राण और अनल के संयोग से प्रणव सप्त स्वरों में व्यक्त हुआ है। वे कहते हैं'- ''न नादने बिन, गीतमु, न नादेन बिना स्वरम् न नादेन बिना रागम् तस्मान्नादात्मकम् जगत् है।'' कीर्तन के विकास में जनपद गेयों का बहुत महत्त्व है। तेलुगु भाषा की सहज मधुरता, प्रसाद गुण संगीत को और अधिक हृदयग्राही बना देती है। तेलुगु संगीत के लिए कर्णाटक शब् का प्रयोग किया जाता है। महाकवि श्रीनाथ और कृष्णदेवराय ने तेलुगु के लिए 'कर्णाट' शब्द का प्रयोग किया है। तेरहवीं शती में कीर्तिन गीत के लिखे जाने का उल्लेख है। जानपद गीतों में अर्थ की अपेक्षा शब्द का महत्त्व होता है। जबकि कीर्तन में स्वर ही अर्थ में हो जाते हैं। कीर्तन में अनुस्वार का अभाव तथा अन्त्य मुद्रा का प्राचुर्य होता है।

कृष्ण कवि - ताल, स्वर मिश्रित गीतों के रचनाकारों में कृष्ण कवि का नाम अग्रगण्य है। इनकी कृति 'सिंहगिरि वचन, 'तरूगंधि वचन' आदि में राग और ताल तो है किंतु 'पल्लवि (संचारि 'अनुपल्लवि' (अनुस्वर) और 'चरण' (स्वर) का विभाजन नहीं हैं।

ताल्लपाक अन्नमाचार्य - (सन् 1424 ई. से 1502 ई.) इनके कीर्तन की जनप्रियता ने ही इन्हें 'पद कविता पितामह' और 'संकीर्तनार्चा की उपाधि दिलाई। तिरूपति के गुफा में ताम्र पत्र पर इनकी रचना और मूर्ति दस वर्ष पूर्व प्राप्त हुई है। इन्होनं 32 हजार पदों की रचना थी, जिसमें 12 हजार ही प्राप्त हुए हैं। तिरूपति के अधिष्ठाता भगवाम वेंकटेश्वर और उनकी पत्नी अलिवेलुमंगम्मा के परस्पर प्रेम को उन्होनें अपने पदों में दिखाया है। कर्णाटक के संगीतकारों में अन्नयमय्या अग्रणी है। कन्नड़ में भक्त पुरंदरदास इनकी शेली का अनुसरण करते हैं। अन्नमय्या ने तेलुगु में 'कीर्तन लक्षण' ग्रंथ लिखे थे। जिसे श्री राल्लपल्ली अनन्त कृष्ण शर्मा ने अन्नमय्या के कुछ पद स्वर'लिपि प्रकाशित किया है।

क्षेत्रय्या - आंध्र के मुव्वा गांव में जन्मे क्षेत्रय्या ने अपने आधिकांश पद ग्रामदेवता गोपाल को समर्पित किए। इन्होंने 40 रागों में 18 देवताओं से सम्बन्धित गीत लिखे है। अन्नमय्या, क्षेत्रय्या

की शैली में कई अन्य कवियों ने भी संगीत लिखे हैं - शोभनगिरि, बोल्लवरमु, गट्टपल्ले, धन सीनय्या, वेणंगि, सरांगपाणि आदि। सीनय्या का 'शिवदीक्षापरूरालतु' आज भी गाया जाता है।

भद्राचल रामदास - रामदास अथवा कंचेर्ल गोपन्ना ने गोलकोण्डा नरेश द्वारा कैद किए जोने के बाद कारावास में अपने आराध्य की स्तुति मार्मिक शब्दों में की है।

सुब्रह्मण्य और उनके कीर्तन - इनके कीर्तन गीत 'आध्यात्म रामायण कीर्तन' के नाम से संकलित किया गया है। यह कीर्तन पार्वती की जिज्ञासा पर शिव द्वारा कही गया रामकथा पर आधारित है।

त्यागराज - गायक - शिरोमणि त्यागय्या का जन्म् 1759 में तिरूवैयार ग्राम में हुआ था। कर्णाटक संगीत का पूर्ण विकास इन्हीं के कारण हो पाया। किंवदंती है कि स्वयं नाद मुनि ने इन्हें संगीत की शिक्षा दी थी। उन्होंने अनेक धुन लेकर पद-गीत लिखे हैं । उन्होंने संगीत में साहित्य को भी उचित अवसर दिलाया। इनकी रचनाएँ आध्यात्मिकता से भरपूर है। 'कोबर पंचरत्न', पंचरत्न', 'धनराग पंचरत्न' विशेष रूप से उल्लेखनीय हें

श्याम शास्त्री - इन्होंने दवी मीनाक्षी 'नव रत्न मालिक', कीर्तन लिखा। आनंद भैरवी राग में ये सिद्धहस्थ थे। कांभोज राग, शंकरा भरण राग का 'सरोजदल- नेत्र' और कल्याणी राग का 'तल्ली निन्ने नेर नम्मिनानु' गीत महत्त्व पूर्ण है।

इनके अतिरिक्त कई अन्य कीर्तनकार और उनके कीर्तन महत्त्व पूर्ण है। मुतैय्यास्वामी, वीण कुप्पयर (वेंकटेश्वर पंचरत्न, जगदभिराम, कोनियाडिन, नापै'' पंत पराड्मुख मिले, कालहस्तीश आदि) सुब्बराम शास्त्री (जननी नितु बिना, निनु सेविंचिति) स्वाति तिरूनाल (पाट्टिपार्वती, सरस साभिदान') आदि। तमिल कवि श्रीनिवास अय्यंगार की 'विजय गोपाल', सामज वंरदा, (सावेरि राग) नेरम्मित (कानड़ राग) सरगनु पालिंच (केदार गोल राग) तथा पल्लवि शेश य्या की 'एदुरूगा', (खमाज राग), इकनन्नु ब्रोव ' (भैरवी राग) 'अलनाडु विन्नपंबु (तोडी़ राग), महात्रिपुर आदि महत्वूपर्ण कीर्तन गीत है।

कीर्तन के कई भेद होते हैं, जो उनकी उपयोगिता को बोधगम्य बनाते हैं- समुदाय, कीर्तन, उत्सव कीर्तन, नवार्ण-नवग्रहपंचलिंग कृति, देवी स्तोत्र, शतरत्न मालिका, कालहस्ती वेंकटेश्वर पंचक, मणिप्रवाल शली कीर्तन आदि।

आधुनिक समय में अनेक लेखक न कवि है जो और उनके कीर्तन विविध रागों में कीर्तन-रचना करते हैं। प्रमुख कीर्तनकार हैं - पट्नम् सुब्रह्मण्य अय्यर (समयनिदे) निप्नदास वरदा, नीपदमुले, निन्नजूचि धन्युडैति आनय्या, चेंगल्व राय शास्त्री, रामस्वामि शिवन्न, कुंडुकुडि कष्णराय्या, पापनाशि शिवय्या, मुतैय्या भागवतार (नीमीद चल्लंग), मैसूर वासुदेवाचार्य (ब्रोचे बारेवरूरा) करिगिर राम, कवि कुजर भारती, चिन्नि कृष्णदास, तचूरि सिंगराचार्य (देवी मीनाक्षी), रामनाथ शास्त्री, तिरूपति नारायणय्या (पराकेल सरस्वती), वेंकटेश शास्त्री, सरस्वती शेश शास्त्री, लिंगरातु दोरस्वामी (श्रृंगार लहरी), कुप्पुस्वामी प्रभृति। **19**वीं शती के प्रमुख कीर्तनकार हैं - श्री पुलुगुति लक्ष्मीनरसमाँबाने (मंगल हारति) सर्व श्री परंकुशदास बिटठ रामदास, तारिगोंड बेंकमांबा (श्री लक्ष्मी स्थितांग चिद्रप चिन्मया शिवनुत शुभांग), पुलिमेल राघवार्य, काकिनाडा

पद्यानाभदासु , एल्लुरि मल्लिकार्जुन, सरस्वतुल सुब्बारायडु, मद्धालि वेंकट नरसिंहहुडु, वीर भद्रय्या, अल्लूरि रंगारावु, मैलवरपु रामय्या आदि।

अचल बोध – संप्रदाय इस आस्था को मानने वाले पूजा, संध्या जैसे नित्य कर्मों को उपेक्षा करते हुए हह योग क्रियाओं का समर्थन करते हैं। अचल बोध या अचलर्द्धेत संप्रदाय के संस्थापक हैं - पातुलूरि वी ब्रह्मम्। इनके कई शिष्य, प्रशिष्य हुए जिनमें सिद्दय्या और नासरय्या मुस्लिम थे तथा अन्य शिष्यों में कालव कोदय्या, तिरूमलेसिद्धकोटय्या, पोकल शेश चल नायडु, इर्रि नारायुडु, सातानि कृष्णय्या (शूद्र जाति) चीराल वीरम्मा, वेदान्तम कोटम्मा, शिवराम भागवतुलु आदि मुख्य है। इन कवियों का आमजनता से धनिष्ठ सम्बन्ध था।

तेलुगु - व्याकरण, **छंद**, **कोश** -

व्याकरण - व्याकरण विद्या के द्वारा भाषा के शब्दों, रूपों और प्रयोगों का ज्ञान होता है। यह शब्दों की व्युत्पत्ति, अर्थ तथा प्रयोग-पद्धति को स्पष्ट करने वाला विवरण है। इसके कई भ हैं, जैसे- अनुशासनिक, वर्णनात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक, एकदेशी, विद्यार्थी व्याकरण आदि। तेरहवीं, शती में आंध्र भाषा – भूषण' व्याकरण ग्रंथ की रचना कन्नड़ के नागवर्मा कृत 'कर्नाटक भाषा – भूषण' के आधार पर की गयी। इसके बाद के सभी व्याकरण ' सिद्धान्त कौमुदी' के आधार पर लिखे गये। तेलुगु का प्रथम व्याकरण नन्न्य भट्ट कृत 'आन्ध्र शब्द चिन्तामणि' को कुछ विद्वान मानते हैं। जबकि **13**वीं शती प्राप्त केतना कृत 'आंध्र भाषा भूषण' को बहुत से विद्वान तेलुगु का प्रथम व्याकरण मानते हैं। केतना ने तेलुगु भाषा के शब्दों के तत्सम, तद्भव, शुद्ध तेलुगु, देशज, ग्राम्य आदि भागों में बाँटा है। इसमें कुल **190** पद है। दोनों वैयाकरण ग्रन्थ एक दूसरे की पूरक प्रतीत होती है।

विन्नकोट पेद्दना - 14वीं शती में पेदन्ना द्वारा लिखा गया ग्रंथ 'काव्यालंकार चूड़ामणि; में अलंकार शास्त्र का विवेचन है। इसमें संज्ञा, अजन्त, हलन्त, संधि, विभक्ति, समाज, तद्धित, क्रिया आदि का संक्षिप्त उल्लेख हैं। 1435 ई. में अनंत की 'छन्द' नामक कृति में छंद, छंदोभंग, विसन्धि, पुनरूक्ति, संशय आदि दशविध दोषों का उल्लेख हैं। संधि-भेद, समास, क्रिया-विशेष , विशेश णादि पर भी प्रकाश डाला गया है। इन्होंने तेलुगु में अप्रयुक्त अव्ययों को वृथ ' कहा है। 1480 में वेल्लंकि तातम भट्ट ने। कवि चिन्तामणि' के चार में से दो अधिकार व्याकरण से संबद्ध है। मुद्दरातु रामना की कृति कविजन संजीवनी' (1550ई.) की प्रथम तरंग छंद तथा शेश तीन तरंगों में शब्द समास और संधियों की व्याख्या की गई है। रघुनाथय्या की 'लक्षण दीपिका' अथवा 'सर्वलक्षण सार संग्रह' (1600ई.) में रेफ पर चर्चा की गई है। त्रिलिंग शब्दानुशासन' को कुछ विद्वान मंडलक्ष्मीनरसिंह कवि की रचना मानते हैं तो कुछ तेरहवीं शती के अथर्वण की रचना मानते हैं। 'त्रिलिंग शब्दानुशासन' में कण्व, पुष्पदन्त, रावण, सोम आदि को वैयाकरणों के रूप में उल्लेख किया गया है। गणपवरमु वेंकट कवि कृत 'सर्वलक्षण शिरोमणि' एक विशाल ग्रन्थ है। इसमें छंद, अलंकार, कोश आदि के बारे में लिखा गया एक विषय ग्रंथ के समान है। सिद्धान्त कौमुदी के आधार पर इसका 'आंध्र कौमुदी' नाम रखा गया है। 1700ई. में गालि नरसय्या ने इसका अनुकरण कर कवि शिरोमणि' भाष्यकृति की रचना की। इसमें व्याकरण के

सूक्ष्मतिसूक्ष्म बातों की व्याख्या की गयी है। 'कविशिरोमणि' को अहोबल पंडितीय' भी कहते हैं। नरसय्या ने 'विकृत' विवेक' संस्कृत में लिखा।

पट्टाभिराम शास्त्री ने **1825** ई. में 'आंध्र व्याकरण' (पद्दाभि राम पंडितीय) की रचना की । धातु माला' इनकी दूसरी व्याकरण कृति है। राविपाटि गुरूमूर्ति शास्त्री ने **1852** में प्रश्नोत्तरान्ध्रव्याकरण' प्रश्नोत्तर शैली में लिखा तथा **1856** में वेंकटमरमण शास्त्री ने 'लघु व्याकरण' सूत्र पद्धति पर लिखा। तेलुगु का सर्वांगीण और व्यस्थित व्याकरण परवस्तु चिन्नरासूरि ने लिखा। इनकी कुद आठ व्याकरण ग्रंथ हैं, जिसमें 'बाल व्याकरण' को छोड़ सभी अधूरी कृतियाँ है जैसे- 'आन्ध्र शब्द शासन-, 'संस्कृत सूत्रांध व्याकरण','आंन्ध्र शब्द चिन्तामणि की व्याख्या', 'शब्द लक्षण संग्रह', 'पद्यान्ध्र व्याकरण', आन्ध्र धातुनाममाला, विभक्ति बोधिनी' आदि। बाल व्याकरण के अनुकरण पर बहुजनपल्ली सीतारामाचार्य ने 'पौढ़ व्याकरण' की रचना की। ये दोनों एक दूसरे की पूरक भी कही जा सकती है। प्रौढ़ व्याकरण' को 'त्रिलिंग लक्षण शेष' भी कहा जाता है। संस्कृत में व्याकरण,अलंकार को काव्य-प्राण माना गया है। जबकि तेलुगु में छंद ही काव्य प्राण है। छंद शास्त्र की रचना पद्य रचना के साथ ही होता था। तंजौर के सरस्वती महल (प्राचीन पुस्तकालय) में पिंगल पुस्तकें, सुरक्षित संग्रहित हैं।

कस्तूरि रंग कवि (1740ई.) ने तथा उनसे 250 वर्ष पूर्व काचनस बमवना ने 'कवि सर्प गरूड़' में नन्नय के 'लक्षण सा' का उल्लेख किया है। छंद शास्त्र के लेखकों में नन्नय के बाद मल्लिय रेचना का नाम आता है। रेचना की कृति 'कवि जनश्रय' (छंद ग्रंथ) की रचना में भीमना के जेष्ठ पुत्र वाचकाभरण ने सहयोग दिया था। अथर्वणाचार्य को महाभारत के विराट पर्व का अनुवादक माना जाता है। 1520-60 के मध्य 'अथर्वणस छंद' प्राप्त हुआ, जिसमें शुभ-अशुभ अक्षरों के परिणाम, यति, प्रास का विवेचन हुआ है। तिक्कना कृत 'कवि बाग्बंध' में अक्षरों के कुल,गुण गणों के स्वरूप, गणाधिदेवता, वर्णाधिदेवता, गणराशि, राशि अधिपति, अक्षरों का शत्रु और मित्र, यति, प्रास आदि की विवेचना हुई है।

1320 ई. में श्रीधर का 'श्रीधर छंद' **1380** ई. में 'कवि राक्षस छंद' (अप्राप्त ग्रंथ), विन्नकोट पेद्दना 'कात्यालंकार चूड़ामणि' के नौ में से छ उल्लास अलंकारों से तथा दो छंदों से तथा एक व्याकरण से संबद्ध उल्लास है। **1480** ई. में वेल्लंकि तातम भट्ट का 'छंदोदर्पण', अनंतकवि का 'छदोदर्पण' (अनन्तामात्य छंद) आदि के छंद से संबंधित कई ग्रन्थ हैं। अन्य छंद ग्रन्थ निम्नतः दृष्यमान है-

	पुस्तक	लेखक	समय
1	कवि गजाकुश (कविराज गजांकृश)	भैरव	**15**वीं शती
2	लक्षण दीपिका	गोरना	**15**वीं शती
3	कवि सर्प गरूडमु (अपूर्ण उपलब्ध)	काचन बसवना	**1470**ई.
4	प्रयोगसार (अपूर्ण उपलब्ध)	काचन बसवना	**1470** ई.
5	कवि वर्णामृत (कुकवि कर्णकठोर)	कौलूरि आंजनेय कवि	**1590** ई.
6	कवि कंठाभरण (अपूर्ण प्राप्त)	काचन वासना	**16**वीं शती

7	लक्षण विलास (यति प्रास विलास)	वनुमूर्ति वेंकटाचार्य	**17**वीं शती
8	लक्षण दीपिका	रघुनाथय्या	**16**वीं शती
9	वादांग चूड़ामणि (अपूर्ण प्राप्त)	मल्लना	**17**वीं शती
10	लक्षण चूड़ामणि	कस्तूति रंग कवि	**1740** ई.
11	कवि लक्षण सार संग्रह	रत्नाकर गोपाल कवि	**17**वीं शती
12	कवि संशय-विच्छेदमु	आडिदमु सूचना	**1760** ई.
13	कृष्ण भूपालीयम	चंद्र कवि	**1819** ई.
14	वीर भूपालीयमु	तिम्म कवि	**18**वीं शती
15	सरलान्ध्र वृत्तरत्नाकर	वेल्लूरि लिंग मन्त्री	**19**वीं शती
16	सकल लक्षण सार	अद्दनूरि रामदास कवि	**19** वीं शती
17	सर्व लक्षण सार	रंग कवि	**19** वीं शती
18	सुकविजन मनोरंजन	कुचिमंचि वेंकटराय	**19** वीं शती
19	कविता लक्षण सार	ओरूगटि रामय्या	**19** वीं शती
20	कवि चिंतामणि	वेल्लंकि तातम भट्ट	**1480** ई.
21	छंदोवर्पण	वेल्लंकि तातम भट्ट	**1550** ई.
22	लक्षण सार संग्रह	कवि पेद्दना	**1560** ई.
23	सुलक्षण सारमु	लिंगमगुंट कवि	**1560** ई.
24	बालबोध छंदमु	लिंगमगुंट कवि	**1560** ई.

इस काल के श्रेष्ठ छंद शास्त्रियों में अप्प कवि, गणपलरमु वेंकटकवि का नाम श्रेष्ठ छंद शास्त्रियों में लिया जाता है। इनकी कृति 'सर्वलक्षण शिरोमणि' में अक्षर तथा गण, यति, वृत प्रास, यक्षगण चाटु संद्दलि, पद्दलि, कल्याण, विरूदावलि आदि की विवेचना है। 19वीं शती में नडिमेंटि वेंकटपति ने 'चित्रबन्ध दर्पण' में चित्र बन्ध के सम्बन्ध में लिखा है। आधुनिक युग में बोब्बिलि राज्य के कवि मंडपाक पार्वतीयशम शास्त्री ने 'प्रबंध संबंध बंध निबंधन' नामक लक्षण ग्रंथ की रचना करके इस कमी को पूरा किया।

अलंकार- तेलूगु साहित्य में अलंकार पर बहुत ही कम स्वतंत्र ग्रन्थ प्राप्त है। 12वीं शती में प्राप्त कवि जनाश्रय कृति में छंद के साथ अलंकारों की विवेचना की गयी है। 1402 ई. में पेद्दना कृत 'काव्यालंकार चूड़ामणि' के नौ में से छः उल्लासों में अलंकार विवेचन है। अनन्त कवि कृत 'रसाभरण' (रसालंकार) में काव्यप्रकाश (मम्मट,साहित्य दर्पण (विश्वनाथ पंचानम) प्रताप रूद्र भूश ण (विद्यानाथ) के मुख्य बातों को लिय गया है। गौरना की 'लक्षण दीपिका' में लक्षण सहित अलंकारों का विवेचन है। वेल्लंकि तातम भट्ट की 'चिन्तामणि' **1480** ई. में लिखा गया। भट्टुमूर्ति का 'काव्यालंकार संग्रह' **16**वीं शती का प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। लेखक द्वारा इसे राज्याश्रयदाता को समर्पित करने के कारण 'इसे नरस भूपालीय' भी कहते हैं। इसमें **18** श्रृंगार चेष्टाओं का उल्लेख है। चिन्न कवि पेद्दना ने सर्पप्रथम 1550 ई. में 'लक्षण सार संग्रह' में नाटक के लक्षणों का उल्लेख है। कवि रघुनाथय्या ने 1600 ई. में लक्षण दीपिका में नांदी, कवि,

नायक, महाकाव्य, खंडकाव्यादि पर विचार किया है। गणपवरमु वेंकट कवि ने 1676ई. में 'सर्व लक्षण शिरोमणि' में अलंकार से संबंधित अध्याय को 'आन्ध्र प्रताप रूद्र यशोभूश ण नाम दिया गया है। इसके अतिरिक्त रस, छंद की विस्तृत व्याख्या की गयी है। 1700ई. में गुडिपाटि कोदण्ड कवि ने भानुमित्र के संस्कृत में 'रस मंजनी' को तेलुगु में प्रस्तुत किया है। **1750** ई. में नारायण कवि ने श्रृंगार ग्रंथ 'रंस मंजरी' का प्रणयन किया। अडिदमु सूरना ने **1760** ई. में 'चन्द्रालोक' की रचना की। कटिकनेनि राम कवि ने 'कुवलयानंद प्रकाशिका' का प्रणयन अप्पय दीक्षित के 'कुबलयानंद' के आधार पर किया। इस प्रकार संस्कृत के मार्ग से तेलुगु साहित्य प्रौढ़ता को प्राप्त करती रही।

कोश - 1550 में 'सीस पद्य निघंटु' कृति लिखकर चौडप्पा ने प्रथम तेलुगु कोश तैयार किया। किंतु गणपवरमु 'सर्वलक्षण संग्रह' का द्वितीय उल्लास 'बेंकटेशान्ध्र' तेलुगु का प्रथम पर्यायवाची शब्दकोश माना गया है। नुदुलपटि वेंकटतार्य के 'आन्ध्र भाषार्णवमु' में शब्दों का विभाजन कर प्राचीन शब्दों को अर्थ ग्राही बनाया गया है। पैडिपाति लक्ष्मण कवि का 'आन्ध्र नाम संग्रह' आन्ध्र नाम कोश की रचना 'आंध्र नाम संग्रह' के आधार पर की । **18**वीं शती में कस्तूरि रंग कवि की 'सांब निघंटु', सन्यासी कवि के 'सर्वान्ध्र सार संग्रह' 1840 में बूरप राजु के 'आन्ध्र पदाकर' आदि में संस्कृत के अमर कोश का अनुकरण किया गया है।

अंग्रेजों के कोषों का अनुकरण करते हुए तेलुगु में प्रथम कोश मामिडि वेंकय्या के द्वारा अकारादि क्रम में 'आन्ध्र दीपिका' (अपूर्ण) की रचना की जिसमें गद्य में अर्थ दिया गया है। कैंपबेल नामक अंग्रेज ने 'कैपबेल डिक्शनरी' , 'ब्राउन ने 'ब्राउन कोश ' या 'ब्राउन डिशनरी' की रचना कर तेलुगु भाषेतर लोगों हेतु तेलुगु ग्राह्य बनाया। कर्कबाडि निघुंटु के लेखक का नाम अज्ञात है। 1875में श्री परवस्तु चिन्नयसूरि ने निघंटुओं के शब्दों का अकारादिक्रम से प्रस्तुति का काम शुरू किया जिसे उनके शिष्य श्री बुडानपल्लि सीतारामाचार्य ने 'शब्द रत्नाकरमु नाम से पूर्ण किया।

ओगिराल जगन्नाथ कवि का 'आन्ध्र पदपारिजातम् महंकालि सुब्बरामशास्त्री का शब्दार्थ चंद्रिका', कोट लक्ष्मीनारायण का 'लक्ष्मीनारायणीय', शिरेभूश णमु रंगाचार्युलु का 'शब्द कौमुदी', नादेल्ला पुरूषोत्तम का 'पुरूषोत्तममीयमु', कोटश्यामल कामशास्त्र का 'आन्ध्र वाचस्पत्यम्' कनुमर्ति वेंकट्रामश्री विद्यानंदनाथ का 'संख्यार्थ नाम प्रकाशिका', संख्यावाचक', चिंतासुंदर शास्त्री का 'संस्कृत शब्दरूप रहस्यदर्शन आदि उल्लेखनीय शब्दकोश हैं। पीठापुर रियासत के महाराज ने कई विद्वानों के द्वारा वृहत् शब्दकोश तैयार करवाया। श्री मोरेपल्लि रामचन्द्र शास्त्री का 'नुडिकडवि' (अपूर्ण) में शब्दों की उत्पत्ति पर प्रकाश डाल गया है। इस प्रकार तेलुगु कोश की समृद्ध परंपरा का विकास समय के प्रवाह के साथ होता रहा।

धर्मशास्त्र - भारत जैसे धर्मप्राण देश में दक्षिण भारत अत्यधिक धार्मिक प्रांत माना जाता है। अचल वेदांत के बाद परशुरामपंतुल लिंगमूर्ति की कृति 'सीतारामांजनेय संवाद' में साख्य योग तथा वेदांत के तत्वों का विवेचन हुआ है। सुब्रह्मण्यम् का 'आध्यात्म रामायण', श्री नागेश्वर राव पंतुलु का आंध्र बाड्मय चरित्र, 'नारद परमेष्ठि संवाद आदि उल्लेखनीय धर्मशास्त्र कृति हैं।

वेगिनाटि कोंडय्या कृत 'निर्णय सिंधु', मूलघटिक केतना का 'विज्ञानेश्वरीयमु', 'स्त्री धनाध्याय', परमानंद तीर्थ का 'ब्रह्म विद्या सुधार्णवमु', आदि महत्त्व पूर्ण धर्मशास्त्र है।

गणित - पावुलूरि मल्लनार्य का गणित शास्त्र - तेलुगु का प्राचीनतम गणित शास्त्र माना जाता है। 'दशविध गणित' को विद्वान वीराचार्य के संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद मानते हैं । कई हस्तलिखित प्राच्य पुस्तक भण्डार में संग्रहित है। कोडूरू बल्लभामात्य का 'लीलावती गणित, पिंगली वेंकटाद्रि का 'क्षेत्र गणित' आदि महत्वूपर्ण हैं।

ज्योतिष - तेलुगु में फलित ज्योतिष का अत्यधिक महत्त्व रहा है। कोंटिकलपूड़ि कोदंडराम सिद्धांती का 'आर्यभट्ट सिद्धान्त व्याख्यानमु' महत्त्व पूर्ण ज्योतिष ग्रंथ प्राच्य पुस्तक भण्डार में सुरक्षित है। धर्म, गणित, ज्योतिष के अतिरिक्त आयुर्वेद, धनुर्विद्या, आयुध आदि पर भी ग्रंथ लिखे गये। मनुमंचि भट्ट का 'अश्वलक्षणसार' बहुत पुराना गंथ है। आयुध परीक्षा', 'धनुर्विद्या विलास' 'तुपाकि शास्त्र (बंदूक से सम्बन्धित) आदि भी महत्त्व पूर्ण है। पेरूमाणमुल गणपयामात्य का 'वास्तुसार संग्रह' वास्तु शास्त्र का उत्तम ग्रंथ है। अभिनय दर्पण' को 'दुग्गिपाल गोपाल कृष्णय्या 'डाक्टर आनंद तथा के0 कुमार स्वामी ने इंग्लैण्ड से प्रकाशित किया था। 'अभिनय लक्षण', 'नाट्य लक्षण' भी उल्लेखनीय है। गुन्नमार्य का 'मन शिल्प शास्त्रमु', शिल्प कला का उत्तम ग्रंथ है।

विज्ञान ग्रंथ (1850-1925) - अंग्रजी शासन काल के समय अन्य भाषा-भाषियों की तरह तेलुगु के लोगों में भी जागृति आई। स्व0 कंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु ने तेलुगु का युग प्रवर्तन किया। आयुर्वेद संबंधी ग्रंथों पर इन्होंने विशेष ध्यान दिया। स्वर्गीय कोमर्राज वेंकट लक्ष्मणराव पंतुलु ने 'विज्ञान चन्द्रिका ग्रन्थ माला', आयुर्वेद मार्तण्ड गोपालाचार्य का 'आयुर्वेदाश्रम ग्रंथ माला तथा चरक', सुश्रुत रस प्रदीपिका', जैसी प्राकृतिक चिकित्सा से संबंधित ग्रंथों का प्रणयन हुआ। प्राकृतिक धर्म-परिषद की स्थापना हुई। 'प्रकृति चिकित्सा सार' और 'सूर्य किरण चिकिसकों इस परिश द के द्वारा ही प्रकाशित हुआ। स्वर्गीय उमर अलाशा तथा हकीम रहमतुल्ला वेग का 'इलाजुल-गुल्फा' युनानी चिकित्सा से सम्बंधित ग्रंथ है । कबूतरम् श्रीराम शास्त्री का 'पार्थिव पदार्थ चिकित्सा', श्रीमाडू गणपतिराव का 'सारूप्यौशध शास्त्रमु', 'होमियोषैथी से सम्बन्धित ग्रंथ है। चिल्लीरगे श्रीनिवास राव का 'आंग्लेय वैद्य चिन्तामणि', उल्लेखनीय एलोपैथी ग्रन्थ है। उप्पुलुरू पट्टाभिरामा राव एवं वी.वी.एन. आचारी का ग्रन्थ समस्त चिकित्सा शास्त्र के एकीकृत एवं तुलनात्मकता के लिए महत्त्वपूर्ण है। येजेंड्ल श्री रामुलु चौधरी का 'अनुभव पशु वैद्य चिन्तामणि', मुहम्मद कुतुबुद्धीन का 'अश्व चिकित्सा सार', अडवि सांबशिवराव का 'अश्व लक्षण सार संग्रह' महत्त्व पूर्ण है। नारायण मंत्री का 'सहदेव शास्त्र (**1885** ई. महत्त्व पूर्ण) पशुचिकित्सा ग्रंथ है।

आयुर्वेदिक निघंटु में बाबिल्ल वेंकटेश्वर शास्त्री का 'वस्तुगुण महोदवि' उल्लेखनीय है। फलित ज्योतिष पर लिखित ग्रंथ 'बृहजातक' के लेखक का नाम अज्ञात है। इसके अतिरिक्त 'ज्योतिषार्णव नवीनत'', 'सूर्य सामुद्रिक शास्त्र' महत्त्व पूर्ण है।

दर्शन - धार्मिक ग्रंथों में कामशास्त्री का 'धर्मसिंधु , रामचन्द्राचार्य का गोत्र प्रवर संग्रह', कनुपर्तिम, मार्कण्डेय शर्मा ने पाराशर स्मृति', को अनुदित किया। नारायण भट्ट का याक्षवल्व्य स्मृति', विज्ञानेश्वर की 'मिताक्षरी' को, आदिनारायण शास्त्री ने बौद्ध धर्मसूत्रों पर भाष्य लिखा। कंदार्ड शेषाचार्य ने रामानुजाचार्य के श्री भाष्य' का अनुवाद किया। पुराणपंड मल्लव शास्त्री ने 'शंकर भाष्य' तथा हांडे रामराव ने 'माध्वाचार्य के भाष्य का अनुवाद प्रस्तुत किया। भारतीय दर्शन का दर्शन 'केवल्य नवनीत-, विचार सागर- ग्रंथ में देखा जा सकता है। गोरि सुब्रह्मण्यम शास्त्री ने तिलक का 'गीता रहस्य', तेलुगु में अनुदित किया। वीरेशलिंगम पंतुलु का 'तर्क संग्रह' उल्लेखनीय दर्शन ग्रन्थ है।

तेलुगु दैनिक 'आन्ध्र पत्रिका', मासिक 'शारदा भारती' के द्वारा कई लेखक अवतीर्ण हुए। मल्लादि वेंकटरत्नम् का 'प्लेटो राजनीति शास्त्रमु-, गोपालय्या का 'सुलभ पाक शास्त्र' बुलुम रामजोगिराव का 'योग व्यायायमु', नर सिंह नायुडु का 'शिल्पशास्त्रमु', गुरूनाथ शास्त्री, सरय्या शास्त्री का 'वास्तु शास्त्रमु', जोगिराजु पिंगलि वेंकय्या का 'कृषि शास्त्रतु', चल्ला लक्ष्मी नृसिंह शास्त्री का 'खिलांगलि शास्त्रमु', पसुमर्ति यज्ञ नारयण का 'नट प्रकाशिक-, सूरिशास्त्री का 'नाट्योत्पलमु पुराणं', आदि तेलुगु साहित्य को समृद्ध करते हैं। 'इण्डियन पीनल कोड' का अनुवाद तेलुगु में किया गया। डाक्टर चिलुकूरि नारायणराव ने तेलुगु को आर्य कुलीय सिद्ध करते हुए 'आंध्र भाषा चरित्र' (दो भाग) ग्रंथ की रचना की।

तेलुगु का साहित्यिक इतिहास - गुरूजाड़ श्रीराममूर्ति और वीरेशलिंगम् पंतुलु आदि ने नये-नये विषयों को व्यक्त करने के लिए हजारों नये पारिभाषिक शब्द बनाये। भाषा की सर्वतोमुखी उन्नति का प्रयत्न किया गया।

अर्थशास्त्र और राजनीति - प्लेटों के 'पॉलिटिक्स' का अनुवाद तेलुगु में अनुवाद किया गया। आत्मकूरि गोविन्दाचार्य को 'भारतीय अर्थशास्त्रमु' तथा भारतीय राज्योग शास्त्रतु' जैसी कृतियों की रचना कर अर्थशास्त्र और राजनीतिशास्त्र के लिए नये पारिभाषिक शब्द गढे।

दंडक रचनाएँ - तेलुगु साहित्य की एक विधा 'दंडक' है। दंडक रचनायें संस्कृत में भी है। तेलुगु साहित्य में तीन प्रकार की दंडक रचनायें है। उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार देखा जा सकता है।

भक्ति दंडक - सर्वप्रथम तेलुगु में नन्नय के 'शिवदंडक' का उल्लेख होता है। 'किरातर्जुनीय कथा' में हय दंडक प्रयुक्त हुआ है। **14**वीं शती में जक्कना ने अपने विक्रमार्क चरित्र में 'देवी दंडक' लिखा। श्रीनाथकवि का 'काशी दंडमु' की रचना की है। इस प्रकार इसका प्रयोग काव्यों में समय के अनुसार होता रहा।

श्रृंगार दडंक - अम्मेर पोतनामात्य का 'भोगिनी दंडक', श्रृंगार दंडकमु' (ताल्लपाक पेद तिरूमला पार्युलु 1530 ई. में) , श्रीकालहस्तीश्वरी दंडकमु (धूर्जटीकवि **1500** ई. में) 'विद्यावती दंडकमु गणपवरमु' (वेंकट कवि, 1670 ई. में), मोहिनी दंडकमु' (मोहनी, 1650 ई.,बृहन्नायिका दंडकमु') नदुरूमाटि वेंकन्ना, 1730 ई. में चन्द्रानना दंडकमु' (साम्बशिव कवि, 1800 ई. में) चन्द्रानना दंडकमु (चिदंबर कवि, **1830** ई.) आदि उल्लेखनीय श्रृंगार दंडक हैं।

प्रकीर्णक दंडक - ताल्लपाक के 'अष्टभाषा दंडकमु' में संस्कृत, प्राकृत, शौरसेनी, पैशाची, मागधी, प्राची, अवन्ती, सर्वदेशी आदि भाषाओं में श्री वेंकटेश्वर की स्तुति की गयी है। जबकि आधुनिक दडंक व्यंग्य रचना (पैरोडी) के रूप में लिखी जाने लगी है। जिन्हें प्रकीर्णक दंडक भी कहते हैं, जैसे तंबाकू, सिगरेट आदि को लेकर लिखी जाने वाली दंडक। इस तरह तेलुगु साहित्य सैकडो़ दंडकों से भरी हुई है। कलुगोडु अश्वत्यनारायणराव का 7000 पंक्तियों वाला 'दंडक रामयण' आज विलुप्त है। किंतु तेलुगु भाषी 'सूर्य दंडक' से दिन की शुरूआत करते हुए 'प्रसन्नांजनेय दंडक' तक अपने दिन को विराम देते हैं।

(1) अभ्यास प्रश्न -

(क) 'हाँ' या 'नहीं' पर यह निशान लगाकर उत्तर दीजिए।

1. तेलुगु का आदिकाव्य 'महाभारत' है। (हाँ/नहीं)

2. तेलुगु में 'शतक साहित्य का अभाव है। (हाँ/नहीं)

3. तेलुगु में यक्षमान की समृद्ध परंपरा रही है। (हाँ/नहीं)

4. तेलुगु में चंपू काव्य रचनाओं का अभाव रहा है। (हाँ/नहीं)

5. तेलुगु के आदिकवि तिक्कना है। (हाँ/नहीं)

6. तेलुगु साहित्य में चलचित्र गीत लेखनकार नहीं हैं। (हाँ/नहीं)

7. तेलुगु में पर्याप्त कीर्तिन साहित्य लिखे गये हैं। (हाँ/नहीं)

8. तेलुगु में हेतुवादी साहित्य प्रचुरता के साथ लिखे गये हैं। (हाँ/नहीं)

2 - निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर उसीक संख्या कोष्ठक में लिखिए।

1. तेलुगु के आदिकवि कौन है?

1- तिक्कना

2- नन्नय भट्ट

3- एईन्ना

4- श्रीनाथ

2. नन्नय-तिक्कना-एईन्ना ने किस ग्रन्थ की रचना की?

1- रामायण

2- महाभारत

3- भागवत

4- शंकुतला नाटक

3. तेलुगु नाटक के शेक्सपियर कौन है?

1- चिलकमूर्ति नरसिंहम

2- पनुगंटि लक्ष्मीनरसिंहम

3- धर्मवरम रामकृष्णमाचर्युलु

4- गुरजाड़ा अप्पाराव

4. आमुक्त माल्यदा' किसकी रचना है?

1- तिम्मना

2- श्रीकृष्ण देवराय

3- अल्लसानि पेद्दना

4- वेमना

5. 'मनुचरित्र' प्रबंध काव्य के कवि कौन है?

1- कंदुकूरि बीरेशलिंगम पंतुलु

2- काशी कृष्णाचार्य

3- अल्लसानि पेद्दना

4- श्रीनिवासाचार्य

6. तेलुगु की प्रसिद्ध साहित्यिक-साहित्येŸ◌ार विधा कौन सी है?

1- दंडक रचनायें

2- अवधान

3- शतक काव्य

4- यक्षगान

7. 'प्रबंध परमेश्वर' की उपाधि किसे प्राप्त है?

1- तिक्कना

2- एर्रना

3- तिक्कना

4- नन्नयभट्ट

6.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के पश्चात आप –

- ❖ तेलुगु साहित्य के क्रमबद्ध विकास का परिचय प्राप्त कर चुके होंगे
- ❖ तेलुगु साहित्येतिहास के विभिन्न कालों का ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे
- ❖ तेलुगु काव्य-साहित्य के क्रमवार विकास को समझ चुके होंगे
- ❖ तेलुगु साहित्य के विविध काव्य-रूपों का परिचय प्राप्त कर चुके होंगे

6.5 शब्दावली

- ❖ तंद्रा - आलस्य, नींद
- ❖ अवसान - अंत होना, खत्म होना
- ❖ अनुसरण - पीछे-पीछे चलना
- ❖ संवर्धन - विकास, उन्नति
- ❖ अवलोकन - देखना

- ❖ अग्रगण्य - आगे रहने वाला , श्रेष्ठ
- ❖ संस्थापक - स्थापना करने वाला, बनानेवाला

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

(क) 'हाँ' या 'नहीं' पर यह निशान लगाकर उत्तर दीजिए।

1. हाँ
2. नहीं
3. हाँ
4. नहीं
5. नहीं
6. नहीं
7. हाँ
8. हाँ

2 - निम्नलिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनकर उसीक संख्या कोष्ठक में लिखिए।

2- नन्नय भट्ट

2. नन्नय-तिक्कना-एईन्ना ने किस ग्रन्थ की रचना की**?**

2- महाभारत

3. तेलुगु नाटक के शेक्सपियर कौन है**?**

2- पनुगंटि लक्ष्मीनरसिंहम

4. आमुक्त माल्यदा' किसकी रचना है**?**

2- श्रीकृष्ण देवराय

5. 'मनुचरित्र' प्रबंध काव्य के कवि कौन है**?**

3- अल्लसानि पेद्दना

6. तेलुगु की प्रसिद्ध साहित्यिक-साहित्येतर विधा कौन सी है**?**

2- अवधान

7. 'प्रबंध परमेश्वर' की उपाधि किसे प्राप्त है**?**

2- एर्रना

6.7 उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. तेलुगु साहित्य का इतिहास - प्रो**0** के लक्ष्मी रंजनम् (सं)
2. सहस्त्र वर्षों का तेलुगु साहित्य - आचार्य यार्लगड्डालक्ष्मीप्रसाद (संपादक)
3. आन्ध्र कवित्य चरित्र - बसवरातु अप्पाराव
4. नत्यान्ध्र साहित्य वीथुलु- कुरूगंटि सीतारमय्या

5. आन्ध्र कबुल चरित्रमु (दो भाग)- निडदबोलु वेंकटराव
6. विजय नगर साम्राज्यान्ध चरित्रतु - ठेकुलमल्ल अच्युतराव

6.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. नन्नय भट्ट के साहित्यिक अवदान को स्पष्ट कीजिए।
2. तेलुगु साहित्य के अष्टदिग्गजों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. शतक साहित्य परंपरा पर प्रकाश डालिए तथा साथ ही तेलुगु के आधुनिक गद्य विधाओं की विवेचना कीजिए।

इकाई 7 तेलुगु साहित्य का आधुनिक काल (गद्य साहित्य) (सन् 1850 से अब तक) – 2

इकाई की रूप रेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 तेलुगु कहानी का विकास
7.4 तेलुगु उपन्यास का विकास
7.5 तेलुगु नाटक, एकांकी का विकास
7.6 तेलुगु की पत्रिकाएँ एवं समीक्षा
7.7 तेलुगु निबंध का विकास
7.8 तेलुगु साहित्य में चलचित्र गीत लेखन
7.9 तेलुगु का अवधान साहित्य
7.10 सारांश
7.11 शब्दावली
7.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
7.13 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

एम0ए0एच0एल – 204 की यह सातवीं इकाई है । पिछली इकाई में आपनें तेलुगु साहित्य के पद्य का अध्ययन किया है । इस इकाई में हम तेलुगु साहित्य के गद्य साहित्य का अध्ययन करेंगें । तेलुगु का साहित्य का आधुनिक काल- गद्य साहित्य (1850 ई. से अब तक) तेलुगु में आदिकाल से आधुनिक काल तक प्रचुर गद्य लिखे गये किन्तु आधुनिक युग में अन्य भारतीय भाषाओं की तरह तेलुगु गद्य विधाओं की इन्द्रधनुषी छटा साहित्य को मानो पर ही लगा देती है। गद्य विधा के विकास में विदेशी संपर्क एवं छापेखाने, प्रेस के अविष्कार ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नवीन ज्ञान-विज्ञान को पद्य की अपेक्षा गद्य में अधिक सुगमता से व्यक्त किया जा सकता है। तेलुगु साहित्य-'निर्माण में साहित्यिक भाषा और बोलचाल की भाषा का साहित्यिक रूप बहुत महत्वपूर्ण है।

7.2 उद्देश्य

एम0 ए0 एच0 एल – 204 की यह सातवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- तेलुगु उपन्यास साहित्य से परिचित हो सकेंगे।
- तेलुगु कहानी साहित्य के इतिहास का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- तेलुगु के नाटक एवं अन्य गद्य विधाओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- तेलुगु साहित्य के प्रमुख पत्र – पत्रिकाओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- तेलुगु गद्य की प्रमुख विशेष ताओं को समझ सकेंगे।

7.3 तेलुगु कहानी का विकास

आरंभिक गद्य उन्नायाकों में परवस्तु चिन्नयसूरि (1806-1862) कोक्कोंड वेंकट रत्नम् पंतुल, (1842-1915), और कंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु (1858-1919) आदि त्रिमूर्तियों का महत्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि तेलुगु साहित्य में आरंभ से ही गद्य विधा का (चंपू काव्य) का प्रयोग हुआ है। 19 वीं शती का उत्तरार्द्ध आंध्र साहित्य का गद्य युग कहा जाता है। तेलुगु गद्य साहित्य के विकास में सहायक कारकों का परिचय निम्नतः दृष्टांकित है-

चिन्नयसूरि - चिन्नयसूरि ने 'नीति-चंद्रिका' नामक अपनी कृति को फोर्ट सेंट जार्ज कालेज के सेंक्रेटरी ए0जे0 अवेथनार को समर्पित की पंचतंत्र पर आधारित यह ग्रन्थ अपूर्ण (मित्र-लाभ, मित्र भेद) रूप में ही विख्यात हो गया। चिन्नयसूरि के असमय देहांत तेलुगु साहित्य के लिए एक बडी़ क्षति सिद्ध हुई।

चार्ल्स फिलीपब्राउन- ब्राउन ने 1882 में ताताचार्य नामक व्यक्ति से कहानियाँ सुनी थी, जिसे उन्होंने अंग्रेजी में लिखा था। ब्राउन तेलुगु की दोनो भाषाओं का आदर करते थे। उनके द्वारा अंग्रेजी को तेलुगु सिखाने की प्रक्रिया छोटी-छोटी कहानियां के माध्यम से अपनायी गयी, जो प्रशंसनीय है। गिडुगु सममूर्ति पंतुलु का 'गद्य-चिन्तामणि (1899 ई. में प्रकाशित) के पृ0 92, 293,240,256 आदि पृष्ठों में तेलुगु भाषा को दुरूह बनाने की प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है। मध्यकाल में संस्कृत, प्राकृत से पद्य रूप में लिखी गयी रचनाओं को गद्य में अनूदित किया गया। हंसविंशती, शुक सप्तकी, ताताचार्य की कहानियाँ, 'परमानंदय्यागरि कथुलु' (1865 ई.) आदि की जरप्रियता स्वयंसिद्ध है। परवस्तु के रंगाचार्य की 1875 ई. पे 'परमानंदय्या शिष्युल कथा' जनभाषा में लिखी उत्कृष्ट कृति है।

ईसाई धर्म प्रचार - अंग्रेजों ने ईसाई धर्म के प्रचारार्थ 1880 ई. में 'ओल्ड टेस्टमेंट कथुलु' तेलुगु में सी0वी0इ9 सोसाइटी की ओर से छपवाया, किन्तु बाइबिल की तेलुगु आमजनता के लिए अपनी न वन सकी।

चार दरवेश - 1893 ई. में एन0ए0 मूर्ति ने 'अरेबियन नैट्स कथलु' अंग्रेजी से अनुवाद किया जो लोगों द्वारा खूब पसंद की गई। अमीर खुसरों की 'चार दरवेश' नामक कहानी मीर उम्मन द्वारा 1801 ई. में फारसी में लिखा गया। 1811 ई. में स्मित-नामकक अंग्रेज ने इसे अंग्रेजों में अनूदित किया। इसके बाद 1856 में एर्रिमिल्लि मल्लिकार्जुन ने 'चार दरवेश ' नाम से इसे अनूदित किया।

तड़कमल्ल वेंकट कृष्णाराव (1825-1890) की कई कृतियाँ है। जिनमें 1879 ई. में 'श्रीमदान्ध्र कविता वर्धिनी विलासमु' कल्पित कहानी खूब प्रसिद्ध हुई। 19 वी शती के उत्तरार्द्ध में चंदलवाड़ सीताराम शास्त्री ने 'दक्कन पूर्व कथलु', 'दशकुमार चरित्र', 'संस्कृत नाटक कथलु' में सहज शैली अपनाते हुए 'जनविनोदिनी' पत्रिका का संपादन भी किया। श्री एनमचिंतल संजीवराय शास्त्री का 'दशकुमार चरित्र' (1886 ई.) तथा श्री वेदम वेंकटराय शास्त्री का प्रतापरूद्रीय नाटक कथलु (1888 ई.) सरस शैली की कृतियों का उत्तम उदाहरण है।

19 वीं शती के उत्तरार्द्ध के कुछ प्रमुख लेखक हैं, जिन्होंने ने तेलुगु गद्य साहित्य के विकास में महत्पूर्ण योगदान दिया। श्री दासु श्री रामुलु का 'अभिनवप गद्य प्रबंध' (1892 ई.), वेदम वेंकटशास्त्री का 'कथा सरित्सागर' (1881ई.), चिलकपाटि वेंकटरामनुज शर्मा का 'भोंज कालिदास कथुनु', 'चमत्कार कथा कल्लोलिनी' आदि उल्लेख कृतियां हैं। श्री मधिर सुब्बत्र दीक्षतुलु का 'काशीमजिली कथुलु (1895) भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है।

गुरूजाड़ श्रीराम मूर्ति - इन्होंने तेलुगु प्रबंध काव्य 'कला पूर्णादयमु' को 'कला पूर्णोदय कथा संग्रह' के रूप में तथा अरेबियन नाइट्स को 'चित्र रत्नाकरमु' के रूप में गद्यानुवाद प्रस्तुत किया। उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में काल्पनिक किंतु मौलिक कथाओं का प्रणयन तेलुगु साहित्य को खूब होने लगा। पनप्पपकम अनन्नचार्य का 'मजुवाणी विजयमु' (सन् 1892 ई.), कोमडूरि अनन्ताचार्य का 'पलूकनि पद्यावती कथा' (मूक पद्यावती को दो भागों में कहानी) 1899 ई. में प्रकाशित हुई। पी. श्रीनिवासाचार्य का 'सोमशर्माम्युदयमु' (1894 ई.) इमाम साहब तथा कस्तुरि रंगय्या ने 'गुल-बकावली' (दो भाग, 1895 ई.) आदि के द्वारा कथा साहित्य की वृद्धि की।

वीरेशलिंगम पंतुलु - वीरेशलिंगम पंतुलु आधुनिक युग के साहित्यिक और सामाजिक निर्माताओं में अग्रणी माने जाते हैं। उन्होंने गद्य के अन्य अंगों की तरह कथा साहित्य के विकास में योगदान दिया। वीरेशलिंगम ने 'विक्रमार्कुनि कथुल', 'पंचतन्त्र, 'काशी मजिली', आदि को साहित्यिक नहीं माना है। यद्यपि अपना साहित्यिक जीवन कविता से शुरू करने के पश्चात् भी उन्होंने गद्य विधा की श्रीवृद्धि की। चिन्नयसूरि की 'नीति चन्द्रिका' के तीसरे अध्याय 'विग्रह' (1874 ई.) को वीरेशलिंगम पंतुलु ने ग्रांथिक भाषा में पूरा किया। 1872 में ही प्रकाशित कर लिया था। कोक्कोड़ वेंकटरत्नम् और वीरेशलिंगम प्रारम्भ में अभिन्न थे, किंतु बाद में दोनों विरोधी बन गये । कारण यह राह कि वीरेशलिंगम समाज सुधारक विधवा विवाह के पक्षधर, एकेश्वरवादी थे जबकि वेंकटरत्नम रूढ़िवादी थे। भाषा-विषयक दृष्टिकोण भी दोनों के विपरीत थे। वीरेशलिंगम का भाषा विषयक दृष्टिकोण उनकी आत्मकथा में अभिव्यक्त हुआ है। वे भाषा की सरल, सहज शैली में प्रस्तुत करने के पक्षधर थे। शेक्सपियर ने नाटकों के अनुवाद में पात्रों के

नामों का भारतीय करण कर दिया। उन्होंने स्त्रियों में उच्चादर्श के स्थापनार्थ 'सत्यवती चरित्र' (1882 ई.), हरिशचन्द्र की पत्नी चन्द्रमती पर चन्द्रमीत कथा (1884 ई.), 'सत्यसंजीवनी' (1887 ई.) जैसी कहानियां लिखी।

बल्लंपाटि वेंकट सुब्बया कहते हैं, ''औद्योगिक सभ्यता द्वारा आधुनिक संसार को दी गई महत्वपूर्ण देन है'- कहानी।'' आधुनिक तेलुगु कहानी का जन्म् दीर्घ विराम के बाद हुआ। सन् 1819 में राविपाटि गुरूमूर्ति शास्त्री के 'विक्रमार्क कहानियों से सन 1990 के पनप्पाकम श्रीनिवासचार्युत्वु के 'भोजसुता परिणयम् तक तेलुगु कहानी अनुवाद, अनुकरण के रूप में ही विकसित होती रही। 20 शती में सन 1921 में पानुगंटि का 'कानुगचेट्टु', और गुरजाड़ा आप्पाराव के 'विद्दवाटु' (1910 ई.) से आधुनिक कहानी का श्रीगणेश होता है। सन् 1921 में चिंता दीक्षिततुलु का सुगाली कुटुंबमु', जी. रामकृष्ण का 'चिरंजीवी' (1947 ई.) आदि उल्लेखनीय प्रारंम्भिक कहानियां हैं।

सुधार युग - समाज सुधार आंदोलन के बयार को कहानीकारों ने बखूबी बपनी कहानियों में समेटा है। लंडारू अच्चामांबा की 'स्त्री-विद्या', 'धनत्रयोदशि', गुरूजाडा अप्पाराव का 'मी पेरेमिटि', 'पेद्दमसीदु' आदि समाज-सुधार से जुडी़ कहानियां हैं। अन्या प्रमुख कहानियां हैं; 'अरिकाल्ल किन्द मंटलु, 'इल्लु बट्टिन वेधवाडपडुचु', तल्लिप्राणमा', (श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री), 'शेश म्मा', वितंतुवु' (चलम), 'तेलिवि' कालम कल्पिन्येमार्पु', (मुद्दुकृष्णा), पश्चात्त यपमु', (शिवरामय्या), 'द्वितीयम (कोडवटिगंटि कुटुंबराव), 'पडुचु पेल्लाम' (राघराव), 'ग्रहचारम' (यनमंड्र सांबशिवराव), 'राजय्या सोमयाजुलु' (बी श्रीनिवास शर्मा,) 'बालिका विलापमु', (नरसिंहाराव),' कलुपु मोक्कलु' (श्रीपाद), 'इलांटि तव्वाई वस्ते' (श्रीपाद), 'अय्योपापम,' (गोटटु मुक्कल मंगायम्मा) 'ईरय्या' (अश्व वेंकटस्वामी)', मादिगवाडु' (लीला सरोजिनी), 'ग्रुक्केडु नील्लु' (बंदा कनकलिंगेश्वर राव) 'धर्मतल्लि (चं ुडूरू रमादेवी) आदि प्रमुख समाज-सुधार विषयक कहानियां है।

देशभक्ति और तेलुगु कहानी - तेलुगु कहानियों में प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व स्तर पर व्याप्त मुद्रास्फीति को तेलुगु कहानियों में सजीवता के साथ बताया गया है। एसे कहानीकारों 'में' डिप्रेशन चेम्बकु' के लेखक वेलूरि शिवरामशास्त्री प्रमुख है। अन्य कहानीकार हैं- पेम्मराजु राजगोपाल (अक्रमविभागम) चितलपाटि श्रीरामुलु (अवि युद्धपु रोजुलु), क्रोब्बिडि लक्ष्मम्मा (विजयोत्सवमु,), त्रिपुरनेनि गोपीचंद (पिरिकिवाडु), चागंटि सोमयाजुलु (भल्लूक स्वप्नमु) आदि।

20वी शती के प्रारम्भ में देशभक्तिपूर्ण भावनाओं से युक्त रचनायें प्रचुर मात्रा में रची गयी। व्यक्तिगत हित की जगह देशहित की बात कहानियां में 'स्पष्टत' देखी जा सकती है। प्रमुख कहानी कार है।- मैदवालु पद्मावती (त्यागिनी), गुडिपाटि वेंकटाचलम (सुशीला), वेंकट राज्यलक्ष्मी (एवरिदद्रुष्टम) गुम्मदिदला दुर्गावाई (ने धन्यनैतिनि), ताडिनागम्म (कथकादु), करूण कुमार (सेवा धर्मम, आकलि मण्टलु, कोन्त चेप्पुलु, वेंकन्ना), चिंता दीक्षितलु (सुरासीती बें ीक जैलु प्रेवशमु, 'एकादशी', सूरि, सीति वंकि, दशमी (1940), बटीरावु कथलु आदि।

इस काल की अन्य महत्त्वपूर्ण कहानियां हैं-

'कुटीर लक्ष्मी' (कनपर्ति वरलक्ष्मम्मा), 'अनिर्वचनीय ख्याति' (जी0वी0 कृष्णा राव), 'नारी हृदयमु' (पेम्मराजु राजगोपालम)'प्रेवेदिकमीदा (चंद्रकला) 'नीवेणी' (रायसम वेंकटशिवुडु) 'मोदहि दाडि' (श्रीपाद) आदि।

तेलुगु कहानी और अभ्युदय (प्रगतिशील) आंदोलन-

मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर भारतीय ही नहीं अपितु विश्व साहित्य की दिशा परिवर्तित होने लगी थीं। ऐसे में तेलुगु साहित्य का यह परिवर्तन अभ्युदय युग के नाम से जाना जाता है। आर्थिक समानता, शोषण और जातिगत भेद भाव का खण्डन, युद्ध संस्कृति का विरोध, मजदूरों का हित, शांति की अभिलाषा और विश्व दृष्टि आदि अभ्युदय युग की रचनाओं की विशेषता है। वर्गीय मानसिकता और मानव-संबंधों पर अर्थ संस्कृति के प्रभाव कहानी विधा अछूती न रह सकी। प्रमुख कहानियाँ हैं- 'दासरि पाटा', 'सुगाली कुटुंबमु' (चिंता दीक्षितुलु) 'आमें त्यागम', ओ पुव्वु पूसिंदि', 'आरात्रि', 'जलसी' (चलम), 'कय्या कालुब', 'पशुबुल कोट्टम', 'पिल्लल मोलताडु', 'कोन्त चेप्पुलु' (करूण कुमार) 'नुव्वुलु तेलगपिंडि', 'इंतलो उन्दि', 'कुलद्वेश मु', कोन्त-जीवितमु', 'ट्यूटर' (कोडवटिगंटि कुटुंबराव) आदि। इन कहानियों के माध्यम से लेखकों ने यथार्थ सामाजिक परिवेश को चित्रित किया है। दलितों, कृश कों का शोश ण, व्यस्था के विरूद्ध विद्रोह को पात्रा नुकूल भाषा में कहानीकारों ने प्रस्तुत किया है। प्रमुख कहानीकार हैं- रावि शास्त्री (पिपीलिकम), राविशास्त्री (आरू सारा कथलु', बुक्कुलु') कोलकलूरि इनाक (ऊरूबावि, तल्लेनोडु, पिण्डीकृतशटि, आकलि) पेद्दिभोट्ला, सी.एस.राव (मुसलम्मा मरणम कल्लजोडु') तिलक (आशा किरणम), गोखले (बल्लकटु पापय्या) आदि । इन कहानीकारों ने कलम के माधम से समाज को प्रगतिगामी बनाया।

तेलुगु कहानी और तेलंगाना मुक्ति- आंदोलन- 4 जुलाई सन् 1946 को कडिवेंडि ग्राम में जमींदारों की सेना द्वारा आम लोगों पर गोली चलवाया गया। जिसमें बंधुवा मज़दूरी का विरोध करने वाले दोड्डि कोमरय्या की मृत्यु हो गयी। जिससे यह विद्रोह ज्वालामुखी बन गया। विद्रोह की आग को शब्दों का रूप देकर लेखकों ने उत्तम कहानी सर्जना की। प्रमुख कहानियां है- 'रहीम भाई' (पी.वेंकटेश्वरराव), नवजागृति (प्रयाग), अमर वीरूलु (के0 एल नरसिंह राव), मीरे गेलुस्ताक (तुम्मल वेंकट रामय्या) महाशक्ति (तेन्नेटि सूरि) मनमे नयम (कालोजी नारायण राव) आदि। इन कहानियों में तेलंगाना प्रांत के लोगों की जीवन- स्थितियों का चित्रण है।

तेलुगु कहानी एवं क्रांतिकारी आंदोलन-

तेलंगाना मुक्ति आन्दोलन को सन् 1951 में विराम मिला। उसके पश्चात् 1969 ई. में तेलंगाना आंदोलन नक्सल आंदोलन से जुड़कर अपने उग्रतम रूप में प्रकट हुआ। तेलंगाना मुक्ति चेतना को जागरूक करने वाली कई कहानियाँ लिखी गयी, जिनमें प्रमुख हैं- 1964 में कालीपट्णम रामाराव की कहानी 'यज्ञम', रावी शास्त्री की 'पिपीलिकम', कोलकलूरि का 'ऊरूबावी', आदि। सन् 1968 में जमींदारों के विरूद्ध सशस्त्र आंदोलन वेंकटापुसत्यम और आदि भट्ल कैलाशम के नेतृत्व में शुरू हुआ। जिसे कहानीकारों की लेखनी का पूर्ण समर्थन

प्राप्त हुआ। प्रमुख कहानियाँ हैं- 'मार्पु' (अल्लम राजय्या), 'मनुषुल बेटा' (किरण), 'पंचादि' (उप्पल नरसिंहा) 'भूमि' (उप्पल), पोक्किलि' (प्रकाश), राजु (अल्लम राजय्या), 'पिच्चोडु' (कार्मिका), 'बोग्गुपोरल्लो' (तुम्मेटि)' निवुरूगप्पिन निप्पु' (समुद्रुडु) आदि।

लेखकों ने क्रांतिकारी चेतना के साथ जन-जाति के लोगों पर कई कहानियाँ लिखीं। वी0एस0 रामुलु की अंडविलो वेन्नेल', तोडसंजन्गु', राजय्या की 'मनिषिलोपलि विध्वंसम', गोपी भाग्लक्ष्मी की 'जंगुबाई', तुम्मेटि की 'जाडा', आदि में मद्यनिषेध, जनजाति के शोषण को मुख्य रूप से चित्रित किया गया है।

तेलुगु कहानी और दलित वाद- तेलुगु प्रांत दलितों पर उच्च वर्गीय लोगों द्वारा अत्याचार को एक आंदोलन के रूप में विरोध किया गया है। सन् 1925 में 'प्रबुध्दांध्र' पत्रिका में श्रीपादा की 'पुल्लुम राजु' कहानी को प्रथम दलित कहानी माना जाता है। इसके बाद एक लम्बी परंपरा दलित कहानियों की है जो अब तक चल रही है। प्रमुख दलित कहानियाँ है- गोद्दिमुक्कल-मंगायम्मा की 'अय्योपापम' (1935), एंड्लूरि सुधाकर की मल्लेमोग्गल गोडुगु', सुंदर राजु की 'मादिगोड्ड', 'माऊरि मैसम्मा', पी0 कनकय्या की 'रदुरूचुपु', 'मोमिट्लुंडम', जाजुल गौरी की 'मट्टिबुव्वा'' कोकलसूरि इनका की 'अस्पृश्य गंगा', शांतिनारायण की 'उक्कुपादम', नन्नपुरेड्डि वेंकट रामिरेड्डी की 'अंटु' पी कनकय्या की 'एदुरूचुपु', वी0आर0 रासानी की होमम्', स्वामी की 'प्रशांव' आदि के द्वारा दलित साहित्य को नलये आयाम प्राप्त हुए हैं।

तेलुगु कहानी और स्त्रीवाद - तेलुगु कहानी ने स्त्री को वस्तुवादी दृष्टिकोण से ही प्रस्तुत करना शुरू किया। पिछले तीन दशकों में लेखिकओं द्वारा स्त्री की समस्याओं को स्त्रीवादी दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया जाने लगा। वोल्गा की 'प्रयोग' कोण्डेयूड़ि निर्मला की 'शत्रुस्पर्श' सी सुजात की 'थ्री इन वन', पी0 सत्यवती की 'इल्ललकगाने', अब्बूरि छत्रयोदेवी की 'तनमार्गम' मुदिगंटि सुजाता रेड्डी की 'विसुर्राई', फुप्पिलि पद्या की 'मसिगुडडा', वी0 प्रतिमा की 'जातरा', डॉ. भार्गवी राव का 'नूरेल्ल पंटा', आदि में नारी व्यक्तित्व को पूर्ण अभिव्यक्ति की गयी है।

तेलुगु कहानी और मुस्लिम वाद -

तेलुगु में मुस्लिमवादी कहानियाँ की सर्जना 6 दिसंबर, सन् 1992 के बाबरी मस्जिद की घटना के बाद से अधिक होने लगी। इससे पूर्व 1982 ई. में सत्यं का 'पाचिकलु' (संग्रह) लिखा जा चुका था। मुस्लिमों के मन से असुरक्षा के भाव को निकालने के लिए कई कहानियाँ लिखी गयी, जिनमें महत्वपूर्ण कहानियाँ है- नेल्लूरू काशवस्वामी का 'चारमीनार', गीतांजी की 'बच्चेदानी', 'पहचान', अली की 'हर एक माल', रहमतुल्ला की 'बा', मोहम्मद खादिर बाबू की 'दर्गामिट्टा', पप्पुजान की 'बुरखा और हराम', 'सिलसिला', 'खिब्ला', मौल्वी साहैब' तथा 'जमीन', 'पत्थर' आदि में मुस्लिम परिवार की विविध पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक विकृतियों का उल्लेख किया गया है।

तेलुगु कहानियों में क्षेत्रियतावाद- तेलुगु कहानियों ने सामाजिक संघर्षों को वाणी देने मे सहृदयता, ओजस्विता का पर्याप्त परिचय दिया। क्षेत्रीय विषयों को लेकर चंद्रलता के द्वारा 'रेगब्क्तिलु उपन्यास को 'ताना' से पुरस्कृत किया गया । क्षेत्रीयता से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण

कहानियां हैं- बी0 एस0 रामुलु की 'दक्षयज्ञमु', कालुव मल्लय्या की 'अव्वतोडुगिदि तेलंगाना' पुलुमुश्रीनिवास की 'संकर विन्तुलु', कासुल प्रतपा रेड्डी की 'मण्टलु', जूकंटि जगन्नाथ की 'वलसा', पुलिकंटि कृष्ण रेड्डी की 'बंगारू संकेत्लु', बी0वी0एस0 स्वामी की 'कंठनम', सभा की 'पाताल गंगा', सिंगमनेनि नारायण की 'अडुसु', शांति नारायण की 'दलारी', स्वामी की 'नील्लु', श्रीनिवास मूर्ति की 'मेडमीद वेलाडे कान्ति' आदि कहानियाँ आंध्र के विविध स्थानों के लोगों की जीवन शैली को उद्घाटित करते हैं।

अपनी ही जमीन पर परायेपन का अहसास क्षेत्रीयता को उग्र रूप प्रदान करती है। चिलुकूरि देवपुत्रा की 'समिधलु', 'आयुधवा'', दलितों की व्यथा कहती है तो 'वंशधारा कथलु', 'नागवल्ली कथलु', जझावती कथलु', आदि क्षेत्रीयतावाद को उजागर करती है। गंटेडा गेरूनायुडु की 'ओक रात्रि रेडुं स्वप्नालु', अट्टाड अप्पलनायुडु की 'प्रत्याम्नायम' में अपनी ही जमीन के मालिक से मजदूर बनते तेलांगाना जनता की व्यथा-कथा है।

1.8.2 जीवन चरित्र-

जीवन चरित्र पाठकों पर विशेष प्रभव डालते हैं। कवियों के जीवन-चरित्र लेखकों में वीरेशलिंगम पंतुलु, गुरूजाड़ श्रीराममूर्ति का नाम उल्लेखनीय है। वीरेशलिंगम पंतुल का 'कबुल चरित्र' (3 भाग 1887 ई.) उनके अध्यवसाय का प्रतिफल है। उन्होंने देश-विदेश के महापुरूषों की भी जीवनियां लिखी। 1913 में ईसामसीह का जीवन चरित्र लिखा। उत्तम चरित्र के विकास हेतु स्त्रियों के लिए 'उत्तम चरित्र के विकास हेतु स्त्रियों के लिए 'उत्तम स्त्री चरित्र' लिखा, जिसमें ' ग्रेसडर्लिंग गर्ल,' जोन आफ आर्क,' 'मेरी कार्पेटर', 'एलिजाबेथ लेडीजान' आदि का उल्लेख है। राजाराम मोहनराय पर आधारित जीवनी भी उल्लेखनीय है।

गुरूजाड़ श्रीराममूर्ति- इन्होंने 'कवि जीवितमुलु' 'वेंडपूडि अन्नय मंत्रि चरित्र (सन् 1896 में), 'तिम्मरूसु चरित्र' (सन् 18898 में), 'रायन भास्कर मंत्रि चरित्र' (सन् 1899 में) 'वैयाकरण अप्पय दीक्षित की जीवनी' सन् 1897 में आदि कवियों, मंत्रियों के जीवन पर आधारित है। आंध्र के कुछ राज्यों के इतिहास भी इन्होंने अपनी जीवनी कृति में दिया है। इनके अतिरिक्त के रामनुजाचार्य और वीर रंगय्या ने 1885 में 'चाणक्य चरित्र', वेंकट रंगय्या' ने कबुल चरित्र में प्राचीन कवियों की जीवनी लिखा।

तेलुगु कहानी और वैश्वीकरण- वैश्वीकरण की उड़ान में मुँह के बल गिरे विश्व अर्थव्यस्था ने स्थानीय समस्याओं की सदैव उपेक्षा की । ऐसे में बेरोजगारी, कारीगर, किसानों की आत्म हत्याएँ, शिक्षण संस्थानों का कुकुरमुत्ते की तरह फैलना, शिक्षा का स्तर गिरना आदि समस्याओं को लेकर कहानी -सर्जना की। प्रमुख कहानियाँ हैं- कुप्पिलि पद्या की 'इन्स्टेंट लैफ', मोहम्मद खदीर बाबू की 'खदर लेडु', 'न्यू बाम्बे टैलर्स', 'वेंडेम् शोड़ा शॉप', पेद्दिटि अशोक कुमार की 'कीलबोम्मलु', बोल्गा की' कोकाकोला', वी.चंद्रशेखर राव की 'गीताजंलि', विजन 2020', 'आत्महत्यल ऋतुवु', विश्वनाथ रेड्डी की 'विरूपम', पंजाल जगन्नाथम की 'व्यापार मृगम', स्वामी की 'तेल्ल देय्यम' आदि। इन कहानियों में वैश्वीकरण के दुष्परिणामों को मानव जीवन के

विविध कोणों से विश्लेषित किया गया है। एन0आर0आई. शादियों का दोश आरि सीतारमय्या के 'गट्टु तेगिना चेरूवु' में दृष्टव्य है। जी0 विजय-लक्ष्मी का 'स्वर्णान्ध्र', नग्न मुनि की 'विलोम कथुल' बी0आर0इन्द्रा की 'रावण ज्योस्यमु'आदि में नये प्रयोग हुए हैं।

इस प्रकार तेलुगु कहानी, उपन्यास विधा की तरह आशातीत वृद्धि विकास करती रही। सन् 1952 में 'गलिवाना' कहानी को अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिलने के बाद ऐसी सैकडो़ कहानियाँ लिखी गयी जो तेलुगु कहानी की उत्तरोत्तर प्रगति की घोतक हैं।

'भद्राचल रामदासु चरित्र' (1878 ई.) पी0 दक्षिणामूर्ति का 'पिंगलि सूरना चरित्र' (1893 ई.) राजा मृत्युंजय निःशंक बहादुर का 'कोंड जाति चरित्र' (1971 ई.) तथा भल्लनारायण चरित्र' (1897 ई.) महत्वपूर्ण जीवनियाँ है। श्री वेंकट शिवराव पंतुलु का 'काग्रेस संस्थ लघु चरित्र' (1897 ई.), पनप्पाकम श्री निवा साचार्युलु का 'महामना मदन मोहन मालवीय का जीवन चरित्र' (1894 ई.), भक्त वत्सल नायडू का 'काटम राजु का जीवन चरित्र' (1889) आदि प्रमुख जीवनी कृतियाँ है। वीरेशलिंगम के साहित्यिक सामाजिक औछात्य रूप को तोलेटि वेंकट सुब्बाराव ने 'वीरेशलिंगम कवि चरित्र' में दिखाया है। एन0 बेंकटराव कृत 'वेंकट महीपती गंगाधर राज चरित्र' (1871 ई.) मृत्युंजय राव का 'चैतन्य महाप्रभु की जीवनी (1893 ई.), श्री वेंकटरमणय्या' का 'शिवाजी चरित्र (1899) आदि तेलुगु साहित्य की जीवनी विधा के प्रौढ़तम उदाहरण हैं।

इस प्रकार जीवन-चरित्र के तीनों रूप तेलुगु साहित्य में विकसित हुए हैं। पहला-स्वीय चरित्र जो स्वयं की आत्मकथा होती है। दूसरा महापुरूषों, साहित्यिकों, सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं के जीवन वृत्त तथा तीसर- महापुरूषों की दैनंदिनी। वीरेशलिंगम के 'स्वीय चरित्र' को उत्तम आत्मकथा का स्थान प्राप्त हैं। टंगुटूरि प्रकाशम का 'ना जीवित यात्रा' उनकी निष्पक्ष राजनीतिक जीवन को रूपायित करती है। श्री केसरी का 'ना चिन्ननाटि मुच्चट्लु, वेटूरि प्रभाकर शास्त्री का 'प्रज्ञा प्रभाकरमु' बंडारू अच्चमांबा का 'अबला सच्चारित्र रत्नमाला' (1902 ई.) पालेपु सुब्बाराव का 'आन्ध्र पुरूषुल जीवितमुल' (1913ई.), वाविल्ल वेंकटेश्वर शास्त्री का 'अनिविसेंटु जीवन चरित्र', मल्लंपल्लिसोमशेबर शर्मा का 'देशोद्धारकुलु', चिलकमूर्ति लक्ष्मी नरसिंहमु का 'महापुरूषुल जीवितमलु' (1909ई.) आदि तेलुगु गद्य साहित्य की जीवन चरित्र विधा को सम्बर्धित करने वाली कृतियाँ है।

7.4 तेलुगु उपन्यास का विकास

तेलुगु उपन्यास साहित्य ने 1872 से 2013 तक के 141 वर्षों का दीर्घतम मार्ग तय करते हुए विकास के नये-नये आयाम को गढा़ है। तेलुगु उपन्यास साहित्य के विकास -क्रम को विभिन्न युगों में अवलोकित किया जा सकता है।

आरंभयुग (1872-1905) नरहरि गोपालकृष्णम शेट्टी का 'श्री रंगराज चरित्रमु' को तेलुगु का पहला उपन्यास माना जाता है, जो 'किववेकवर्धिनी', पत्रिका में धरावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ। इसे 'सोनाबाई परिणयम' तथा 'विवेक चंद्रिका' भी कहते हैं। कुंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु

के 'राजरोयर' उपन्यास में अंधविश्वासी ब्राह्मण राजशेखर के द्वारा सामाजिक रूढि की बखिया उधेडी़ गई है। वीरेशलिंगम का 'सत्य राजा पूर्वदेशी यात्रालु' तथा 'आडुमलयालम' भी उल्लेखनीय उपन्यास है। 1891 में न्यापति सुब्बाराव के साथ मिलकर वीरेशलिंगम पंतुलु ने 'चिंतामणि' पत्रिका के माध्यम से कई उपन्यास लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया। इनमें खण्डवल्लि रामचन्द्रुडु का 'धर्मवती विलासम', तल्लाप्रगड़ा सूर्यनारायण का 'संजीवराय चरित्रमु', चिलकमूर्ति का 'रामचन्रद विजयमु', गोटेटि कनकरातु का 'विवेक विजयमु', पी0 श्रीनिवास चार्युलु का 'सोमेश्वराभ्युदयमु', नंबूरू तिरूनाराधस्वामी का 'प्रणय महिमुमु' टेकुमल्ल राजगोपाल राव का 'त्रिविक्रम विलासमु', खण्डवल्लि रामचंद्रुडु का 'मालतीराघवमु', चिलकमूर्ति का 'हैमलता', खण्डवल्लि रामचंद्रुडु का 'लक्ष्मी सुंदर विजयमु आदि को 1892 से 96 के बीच प्रथम और द्वितीय पुरस्कार दिये गये। इन उपन्यासों समर्थन, मूल्य स्थापना के साथ ही अंधविश्वासोंका खंडन मुख्य विषय था।

अनुवाद युग- (1900-1920) उपन्यास के लिए यह समय कुछ विद्वानों केमत में ऐतिहासिक' तो कुछ की दृष्टि में 'अनुवाद युग' है। बंगाली, अंग्रेजी आदि के तेलुगु रूपांतरित उपन्यासों की दीर्घ परंपरा रही। बंकिम की 'कपाल कुण्डला ' को दोरस्पामय्या ने 1899 में तेलुगु अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त 'आनंद मठ' (1907), 'कमला कोमल' (1908) का भी इन्होंने अनुवाद किया। कनरूवल्ली भास्करराव का 'प्रफुल्ल मुखी' (1909), चिल्लरिग श्रीनिवास राव का 'कृष्णकातुनि मरणशासनम' (1910), तल्लाप्रगड़ा सूर्यनारायण का 'शैवालिनी चंद्रशेखरमु (1910), चागंटि शेषय्या का 'राधाराणी' (1910), 'दुर्गशनंदिनी' (1911), नवाबुनंदिनी (1915), वेंकट पार्वतीश्वर कविद्वय का 'जयसिंह' (1915) 'मुगांगुलीयकमु' आदि बंगला के उत्तम अनुदित तेलुगु उपन्यास है।

अनुदित के साथ ऐतिहासिक मौलिक उपन्यास भी लिखे गये। धरणप्रगड़ वेंकट शिवराज जी द्वारा शिवाजी पर 'कांचन माला', भोगराजु नारायण मूर्ति द्वारा चंद्रगुप्त मौर्य पर 'विमला देवी', वेंकट पार्वतीश्वर कविद्वय का 'वसुमति वसंतम', रत्नाकरम वेंकटप्पा और तुम्मगोण्डी केशवराव का 'सत्यबाई', वेंकट पार्पतीश्वर का 'प्रमदावनम', श्रीपादजी का 'आंग्लराज्य स्थापनलु', ताल्लाप्रगड़ा सूर्यनारायण का 'हैलावली' (1913), वेंकट पार्वतीश्वर कविद्वय का 'मात् मंदिरमु' (1918) आदि में सामाजिक अत्यवस्था और वर्ण-व्यवथा के विरूद्ध आवाज उठाई गयी है।

केतवरपु का 'रायचुरू' युद्धम' (1913), भोगराजु का 'आन्ध्र राज्पमु', दुग्गिराला राघवचंद्र चौधरी का 'विजयनगर साम्राज्यमु', चिलुकूरि वीरभद्रराव का 'कर्ण साम्राज्यमु' आदि इस युग की उल्लेखनीय उपन्यास कृतियाँ हैं।

विकास युगः (1920-1992)- इस युग राजनीतिक सामाजिक परिवर्तन उपन्यासों में स्पष्टः सलकता है। तेलुगु प्रदेश को इतिहास को लेकर तथा परिवार, सामज में होने वाल परिवर्तनों को उपन्यास का विषय बनाया गया हैं। इस युग के प्रमुख उपन्या एवं उनकी कृतियाँ निम्नतः दृष्टव्य हैं-

चिलकमूर्ति का 'कृष्णवेणी' और 'सुवर्ण गुम्मुडु', उन्नव लक्ष्मीनारायण का 'मालपल्ली', 'संघ विजयमु', विश्वनाथ सत्यनारायण का 'अंतरात्मा' (1918), 'एकवीरा' (1925), 'वोमिपडगलु, माबाबु, चेलियलिकट्टा,' बद्द्र सेनानी', 'धर्मचक्र आदि विविधमुखी उपन्यास है।

चलम की 'शशिरेखा;' (1918), देवमिच्चिन भार्या,' मैदानम', 'हंपीकन्यलु', 'जीवतादर्शम', ब्राह्मणीकम' आदि आधुनिक विचारों से युक्त उपन्यास है। बापिराजु का, 'हिमबिंदु', मोना गन्नारेड्डी', नारायणराव', कोनंगी', 'तूफान', रागमिल्का', 'जालिमल्लि' और 'सूरीड' आदि प्रमुख ऐतिहासिक सामाजिक उपन्यास है। विश्वनाथ सत्यनारायण, मोक्पाटि नपरसिंह शास्त्री, श्रीपाद सुब्रह्मण, मुनिमाणिक्यम नरसिंह राव आदि प्रसिद्ध उपन्यासकार है। मोक्कपाटि को 'बारिस्टर पार्वतीशम' (1925), एकोदरूलु' (1931) मुनिमाणिक्यम का 'कांतम कथलु', 'दीक्षितुलु', रूक्तल्लि, तिरूमालिग आद हास्य-व्यंग्य, करूण आदि विषयों पर आदि विषयों पर आधारित है।

मनौवैज्ञानिक युग (1941-1960)-फ्रायड के अनुसार तेलुगु कथा-वस्तु की संयोजना में कई परिवर्तन किए गये। बुच्चिबाबू , जी.वी0 कृष्णराव, गोपीचंद, राविशास्त्री आदि मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में अग्रणी है। बुच्चिबाबु का 'चिवरिकि मिगिलेदि' गोपीचंद का 'परिवर्तन', 'असमर्थुनि जीवन यात्रा', मेरूफुल मरकलु', 'पिल्लतिम्मेरा', पंडित परमेश्वरशास्त्री वीलुनामा', 'गडियपडनि तलुपुलु,' 'प्रेमोहपनुलु', शिथिलाल यम', धीकटि गदुलु', यमपाशम', जी0वी0 कृष्णराव का 'कीलुबोम्मलु', रावि शास्त्री का 'अल्पजीवी', बलिवाडा कांताराव का गोडमीद बोम्मा', 'बूचि' 'सुगुणा', भास्करभट्ला कृष्णाराव का 'युग संधि', 'विचित्र प्रणयम', आर0एस0 सुदर्शनम का 'मल्ली वसंलमु', नोरि नरसिंह शास्त्री का 'नारायण भट्डु,' 'रूद्रमा देवी', 'मल्ला रेड्डी' 'कवि सार्वभौमुडू', कविद्वयम', तेन्नेटि सूरि का 'चंगेजखाँ' आदि उक्त मनोवैज्ञानिक ऐतिहासिक उपन्यासों के बाद इस युग का सामाजिक उपन्यास भी महत्वपूर्ण है।

इस युग के प्रमुख सामाजिक उपन्यासों में हैं- रावूरि सत्यनारायण राव का 'नेलवंका', बोल्लिमुंत शिवरामकृष्णा का 'मुत्युजयलु', 'बट्टिकोट अल्वारू स्वामी का प्रजल मनिषि', पोतकूचि सांबशिव राव का 'उदयकिरणालु', आदि। इस प्रकार इस युग में कालजयी मनौवैज्ञानिक, ऐतिहासिक सामाजिक उपन्यास लिखे गये।

समकालीन युग (1960 से अब तक)- सन् 1958 के लगभग 'आंध्र पत्रिका' ने उपन्यास लेखन की पुरानी प्रक्रिया शुरू करते हुए प्रतियोगिता आयोजित किया। समय-समय पर आयोजित इन प्रतियोगिताओं का सुफल इन उपन्योसं के रूप में तेलुगु साहित्य को मिला।

	उपन्यास	**उपन्यासकार**	**विषय**
1	कोंत अल्लुडु	श्री कोडवटिगंटि कुटुंगबराव	विविध
2	कोंत कोडलु	श्री कोडवटिगंटि कुटुंगबराव	विविध
3	'अनुभव'	श्री कोडवटिगंटि कुंटुबराव	विविध
4	तिमिंगलम वेटा	,,	,,

5	गोडमिदि बोम्मा	,,	,,
6	सुगुणा	,,	,,
7	दगापडिन तम्मुडु	,,	,,
8	सखिया सुन्दरी	,,	,,
9	चंदुनिको नलुथोगु	पुराण सुब्रह्मण्यम	,,
10	विशाल नेत्रालु	पिलका गणपति	,,
11	कत्तुल वंतेना	महीधर राममोहन राव	राजनीतिक
12	ओनमालु	,,	,,
13	कोल्लायि गट्टितेनेमि	,,	विविध
14	स्वयंवरम	,,	वैवाहिक समस्या
15	मंचि-चेडु	श्रीमती इल्लिंदल सरस्वती	नारी-जीवन
16	अप्पस्वरालु	,,	,,
17	पंकुटिल्लु	कोम्मूरि वेणुगोपाल राव	सामाजिक
18	हाउस सर्जन	,,	,,
19	जीवन गमा	पुराणम प्रकाश राव	,,
20	मानेमनुश तु	,,	,,
21	मनंमिगिलां	कंदुकूरि लिंगराजु	,,
22	आदर्शलु - आंतर्यालु	सिंगराजु लिंगमूर्ति	,,
23	जारूडु मेट्लु	मंजुश्री	,,
24	स्वर्गारोहुन	,,	,,
25	नूरू शरन्तुलु	,,	,,
26	चीकटिलो चीलिकलु	गोलपूडि मारूतिराव	,,
27	सगटु मनिषि	आदि विष्णु	,,
28	मिथ्या	,,	,,
29	तोलि मजली	शीला वीर्राजु	,,
30	इद्दरू ओक्कटे	,,	,,
31	आदि प्रश्न इदि जवाबु	अवसराल रामकृष्ण राव	
32	इद्दम्मायिलु मुगग्गुरब्वायिलु	मुल्लपूडि वेंकटरमणा	

समकालीन युग में आंचलिक उपन्यास की भी श्रीवृद्धि हुई। प्रमुख आंचलिक उपन्यास है- दाशरथी रंगाचार्युलु का 'चिल्लर देवुल्लु', पोरंकि 'दक्षिणामूर्ति का 'मुत्याल पंदिरि' (तेलंगाना की बोलियों पर), 'वेलुगु वेन्नेल', 'गोदावरी' (पूर्वी प्रांत की बोलियों का प्रयोग), पालगुम्मि पद्यरातु का 'बतिकिन काले', नल्लरेगडि', कोंडमूदि श्रीराम- मूर्ति का 'करूणा',

पोलाप्रगड का 'संघ चेसिन मनिषि', 'कौसल्या', ताल्लूरि नागेश्वर राव का 'कोत्तियिल्लु', 'एदिगी एदगति पुब्बु', 'जीवन ज्योति' आदि।

यह युग महिला-लेखना का स्वर्णिम युग है। श्रीदेवी, बीनादेवी, मालती चंदूर, लता (पदविहीन, मोहनवंशी, महानगरंलो स्त्री), कोडूरि कौसल्यादेवी (चक्रवाकम, चक्रनेमि) मुप्पाल रंगनायकम्मा (बलिपीठं, पेकमेडलु, स्वीट होम), द्विवेदुल विशालक्ष्मी (वैकुण्ठ पाली, ग्रहणम विडिचिंदि ,वारदिमारिन विलुवलु), यद्दनपूडि सूलोचना रानी (सेक्रटरी, विजेता), डॉ. सी0 आनंदरामं (संपंगि पोदलु, 'आत्मबलि, चिकटि कडुपुन कांति) उन्नव विजयलक्ष्मी, निर्मला प्रभावती, ए0 श्यामला देवी, कोलपाक राममणी, डी0 कामेश्वरी, पावनी, परिमला सोमेश्वर आदि।

दाशरथि ने गोदिगपुलु', 'जनपद' उपन्यास में तेलंगाना के लोगों की समस्याओं को उकेरा है। सीतादेवी वासिरेड्डी ने 'समता' में राजनीतिक भ्रष्टाचार की बखिया अधेडी है। साथ ही 'मट्टिमनिषि', 'मरीचिका' में नक्सलवाद के दुष्परिणाम को बताया है। बीनादेवी का 'हैंग भी क्विक', राविशास्त्री का 'रातु महिषि', 'गोवुलु वस्तुन्नायि', 'रन्तालु-रांबाबु', नवीन का 'मुल्लपोदलु', चीकटि रोगुलु', पसुपुलेटि मल्लिकार्जुन 'पक्षुल' आदि में विविध समस्याओं का जीवंत चित्रण हुआ है।

प्रयोगधर्मी तेलुगु उपन्यासों में नवीन का 'अंपशय्या', विनुकोंण्डा का 'ऊबिलो दुन्ना', महीधर राममोहन राव का 'रथचक्रालु', 'कन्तुल बंतेना' आदि में राजनीतिक समस्या को समाविश्ट किया गया है। एन0 आर0 नंदि का 'नैमिशारण्य', बलिवाड़ा कांताराव का 'दगा पडिन तम्मुडु', गोल्लपूडि मारूति राव का 'चीकटिला चीलिकलु', पालगुम्मि पद्मरातु' बतिकिन कालेज', 'नल्लरेगडि' आदि विशिष्ट उपन्यास कृतियाँ हैं। रूसी उपन्यासों को लेकर गोरा जी ने समरं-शांति', 'अन्ना केरेनिन' नाम से अनुवाद किया। रवीन्द्र के उपन्यासें को 'नौका भंगम', 'तपोवन', 'ईटा-वयटा' नाम से रूपांतरित किया गया। कोमरमु भी का 'सरिहटु' (1970), यंडमूरि का 'मरणमृदंगम', राक्षसुडु, नल्लंचु तेल्ल चीरा', 'तुलसीदल', काश्मोरा' जैसे सूडो साईस उपन्यासों की रचनाये हुई।

दलित उपन्यासों में डॉ. केशवरेड्डी का 'क्षुद्रदेवता' (1976), 'स्मशान दुन्नेरू' (1971), 'चिवरिगुडिसे' (1999) मापल्ले (1974), रावि शास्त्री का 'मूडुकथल बंगारमु' आदि सामाजिक चेतना से जुडे उपन्यास हैं। नारी मुक्ति से जुडी ओल्गा की 'स्वेच्छा, आकाशंलो संगं', 'खाकी बतुकलु', चिलुकूरि देवपुत्रा का 'पंचम', जी0 कल्याणराव का 'अंटरानिवसंतं', एलेक्स हैली का 'एडु तरालु', कल्याण राव का 'मैलुरायि', बेमूरि एल्लय्या का 'कक्का', 'सिद्ध'आदि दलित उपन्यास का बेजोड़ उदाहरण हैं।

इस प्रकार इन वर्षों में (1872-2013) सहस्त्रों उपन्यास लिखे गये,जो तेलुगु साहित्य की विविध रंगीतियों को प्रस्तुत करते हैं।

7.5 तेलुगु नाटक, एकांकी का विकास

20वीं शती तक आंन्ध्र वाङ्मय में नाटक विधा का अभाव बना रहा। तेलुगु कवियों ने संस्कृत को प्रबंध-काव्य हेतु चुना। अपवादस्वरूप 13वीं शती में मंचना का केयूरबाहु चरित्र (श्रव्य काव्य) को आधार बना कर राजेशखर ने 'सालभंजिका' नाटक की रचना की। 15वीं शती में पिल्ललमर्रि पिनवीर मद्रुडु का 'श्रृगांर शाकुंतलम'' काव्य रूप में प्रस्तुत हुआ। संस्कृत में कृष्णमिश्र कृत 'प्रबन्ध चंद्रोदय' का नंदि मल्लन्ना, धंटा सिंगना ने काव्य नाट्य प्रस्तुत किया। तिम्म भूपालूडु का 'मुरारि अनर्घरावघव' वोड्ड चर्ल तिम्मना का 'प्रसन्न राघव', श्री भास्कर का 'उन्मन्त राघव', पशुपति नायुडु का 'मदन विलास बाणमु', गंगाधर कवि का 'महाभारतमु', विश्वनाथ कवि का 'सौगंधिकापहरणमु', वेंकट ध्वरि का 'प्रद्युम्नानंद', राविपाटि त्रिपुरांतकुडु का 'प्रेमाशिरामम्', धर्मसूरि का 'नरकासुर विजयमु,' रावु सर्वज्ञसिंग भूपालुडु का 'रत्न पांचालि;, श्रीकृष्ण देवरायलु का 'जांबवती परिणय' आदि संस्कृत नाटक तेलुगु कवियों द्वारा लिखे गये।

नाट्य रचना के साथ रंगमंचीय निर्देशन का तेलुगु कवियों ने विशेष ध्यान दिया। रामराजुभूशणुडु को 'वसुचरित्र' के चौथे अध्याय में पर्दे के उपयोग के बारे में बताया गया है। संस्कृत नाटक राजमहल तक सीमित थे। सर्वसाधारण के मनोरंजनार्थ यक्षगान, वीथी-'भागवत नाटक, कठपुतली'-खेल थे। तिक्कना का 'भारतमु' (संचर नाटक) उल्लेख है।

तेलुगु साहित्य के प्रारम्भ से लेकर सन् 1860 तक 'यक्षगान', 'गोल्लकलापम्', वीथ्रि भागवतम्,' 'भामा कलापम्' जैसे नाट्य रूप का विकास हुआ जबकि सन् 1860 से 1960 तक का काल आधुनिक तेलुगु नाटक विकास युग माना जाता है।

तेलुगु नाटकों का विकास -क्रम-

तेलुगु का पहला मौलिक नाटक कोराड़ा रामचंन्द्र शास्त्री का 'मंजरी मधुक वीयमु' (1860) को माना जाता है। इनके द्वारा रूपांतरित नाटक 'वेणी संहारमु' अप्रकाशित ही रह गया। कोक्कोंड वेंकटरत्नं पंतुलु' का 'नरकासुर विजय व्यायोगमु' (सन् 1871) संस्कृत नाटक का आन्ध्री करण है। 'अभिज्ञान शाकुंतलम' के 20 भी अधिक तेलुगु अनुवाद किए गये। पड्डादि सुब्बाराव का 'वेणी संहराम' (1886) 'चंडकासिकम' (1900 ई.), वाविलाल वासुदेव शास्त्री का 'उत्तरराम चरित' (1889 ई.) सुसर्ल अनंत रा का 'मुद्रा राक्षस' (सन् 1890), वेदंवेंकट राय शास्त्री का 'नागनंदम', (1891 ई.) तिरूपति वेंकट कवि का 'मृच्छकटिकम' (1890 ई.), 'मुद्राराक्षस' (1908), दासु श्रीरामुलु का 'महावीर चरित्र' (1902)' मालत माधवम', मल्लदि सूर्यनारायण शास्त्री का 'उत्तररामचरित्र' (1908), वेटूरि प्रभाकर शास्त्री का 'प्रतिमा', बुलुसु वेंकटेश्वर का 'अभिषेक', प्रतिभा' आदि तेलुगु नाटक संस्कृत द्वारा रूपांतरित किया गया।

वाविलाल वासुदेव शास्त्री का 'सीजर चरित्रमु' (1875) पहला अंग्रजी नाट्यानुवाद माना जाता है। 1880 में 'नंदक राज्यमु' मौलिक नाट्य रचना किया।

नाट्य-मंचनीयता-

कंद्कूरि वीरेशलिंगम पंतुलु ने 'विद्यार्थी' नाटक समाज' की स्थापना कर स्वरचित नाटकों का प्रदर्शन किया। धारवाड़ में 'धारवाड़-संख्या', गुंटूर में 'हिन्दू नाटक समाज,' बंदरू में

'हिन्दू नेशनल थियोटिकल सोसायटी' आदि संस्थाओं के अध्यक्ष तथा निर्देशक स्वयं नाटककार रहै।

वीरेशलिंगम पंतुलु ने 'कॉमेठी ऑफ एरर्स' को 'चमत्कार रत्नावली' (1881ई.) नाम से लेखन एवं प्रदर्शन करवाया। कोंडमद्ला सुब्रह्मण्यम शास्त्री द्वारा नाटकों का ऐतिहासिक, पैराणिक प्रणयन एवं मंचन करवाया। नादेल्ल पुरूषोत्तम कवि द्वारा 'रामदासु चरित्रा' 'सत्य हरिश्चन्द्रं' की रचना तथा मंचन कराया गया।

आधुनिक तेलगु नाटकों का विकास-

बल्लरी के धर्मवरम राम कृष्णमाचार्युलु ने तेलुगु में दुःखांत, नाटकों की शुरूआत की। सन् 1886 में 'सरल विनोदिनी सभा' की स्थापना की। इनकी 'चित्रनलीयम' (1887), 'विषाद सारंगधर' (1889) कृतियाँ खूब चर्चित हुई। इनके नाटक में प्रोलाग, ऐपिलाँग के साथ अंकों का विभाजन भी हुआ है। 'चंद्रहास' (नमक कर का विरोध), 'प्रमीलार्जुनीयम' (स्त्री स्वतन्त्रता का समर्थन) की रचना कर उसका प्रदर्शन कराया। धर्मवरम राम को 'आन्ध्र नाटक पितामह' कहा जाता है।

बल्लारी के वकील कोलाचलम श्रीनिवास राजु का 'सुमनोहर कथा', 'वाणी विलासमु' (1905 ई.), 'विजयनगर राज्य पननमु', 'सुल्लाना चाँद', 'चन्द्रगिरि अभ्युदयमु', मैसूर राज्यमु आदि महत्वपूर्ण' ऐतिहासिक कृतियों के कारण इन्हें, 'चारित्रिक पितामहुलु', (ऐतिहासिक पितामह) कहा जाता है। 'पादुका पट्टाभिषेकमु', 'प्रह्लाद चरित्र' तथा 'प्रपंच नाटक चरित्रा (विश्व नाटक का इतिहास) आदि उल्लेखनीय है। 'दी ड्रमेटिक हिस्टरी ऑफ दी वर्ल्ड' के ये ही लेखक है।

चिलकमूर्ति नरसिंहम का 'गयोपाख्यानम्' की एक लाख प्रतियाँ विकी थी। 'प्रसन्न यादवम्','पारिजातापहरणमु', 'प्रह्लाद चरित्र' आदि इनकी अन्यकृतियाँ है। उनकी आख्यानात्मक, व्यग्यात्मक शैली उनकी लेखनी को जीवंत बनाती है। 'आन्ध्र शेक्सपीयर' पानुगंटि लक्ष्मी नरसिंहम ने रामायण को चार नाटकों में ('कल्याण राघवम्', 'पादुका पट्टाभिषेकम्', 'वनवास राघवम्, विजय राघवम्) में बाँटते हुए लिखा। इनके अन्य मुख्य नाटकों में 'कंटाभरणम्' (हास्य रस प्रधान) का नाम लिया जाता है। कोकिल, सरस्वती, वृद्ध-विवाह; राति स्तंभ (पाषाण स्तंभ), प्रचंड चाणक्य, चूड़ामणि, बुद्ध बोध सुधाआदि पानुगंटि लक्ष्मीनरसिंहग्राव के उल्लेखनीय नाटक हैं।

महाभारत की कथा को 'पांडवोद्ययोग विजयम' (1911 ई.) नाम से अद्भुत शैली में पद्यात्मक नाट्य प्रस्तुति करने वाले तिरूपति वेंकट कवुलु जनप्रिय नाटकार हैं। बलिजेपल्लि लक्ष्मीकांतम् का 'सत्य हरिचंन्द्रयमु' रसपूर्ण पद्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया गया नाटक हैं। इनके द्वारा श्मशज्ञानघाटका वर्णन कोकिला जशुआ की कृति 'श्माशान वाटिका' (खंडकाव्य) से पार्याप्त साम्प रखता है। ऐतिहासिक नाटकारों में वेदांत वेंकटराय शास्त्री का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। इनका 'नागानंद', 'शाकुंतलम्' 'प्रियदर्शिका', 'मालविकाग्निमित्र' 'उत्तररामचरित, 'विक्रमोर्वंशीय', 'रत्नावली' आदि अनूदित नाटक है तथा 'प्रतापरूद्रीयम',

उसा परिणयम', बोब्बिलि युद्ध' आदि मौलिक नाटक है। जिनमें पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है। गुडिमेंटा वेंकट सुब्बाराव का 'खिलजी राज्य पतनमु', इच्छापुरमु यज्ञनारायण का 'रस पुत्र विसयमु' 'सिंहगडमु' आदि उल्लेखनीय है।

शोंठि भद्राद्रि रामशास्त्री (1850-1915) ने संस्कृत नाटकों का (वेणी संहार विक्रमोर्वशीयम, कुंदमाला, मल्लिका मारूत) अनुवाद सशक्त शैली में प्रस्तुत किया।
ताडूरि लक्ष्मी नरसिंह राय का 'श्रृंगार भूषण', 'उन्मत्त राघव' 'रूक्मिणी स्वयंवर', 'जयंती रामय्या पंतुलु का 'उत्तर रामचरित' ,'काशीभट्ट शास्त्री का 'मंगतायि', 'सौधववध', 'चंद्रहास चरित्र, 'अहल्यासंक्रंनीयद्यमु' 'द्रौपदीवस्त्रापहरण', 'सारंगधर', 'पारिजातापह्णमु,' श्रीदासु श्रीराकवि का अनूदि नाटक (मालती-माधव महावीर चरित', मालविकाग्निम्त्रम, रत्नावली आदि) इन्हें श्रव्य नाटककार के रूप में ख्यातिलाभ कराता है।

सामाजिक नाटक- 1897 में प्रकाशित 'कन्याशुल्कमु'- गुरजाड़ा अप्पाराव (1965-1915) कृत प्रथम सामाजिक नाटक है, जिसमें बाल-विवाह का जीवंत चित्रण है। तीन साल की बच्ची का साठ साल के वृद्ध से विवाह तत्पश्चात विधवा होना दिखाया गया है। इसमें वेश्याओं की, विधवाओं की विवशता, पुरूश वर्ग का उन पर अत्याचार, पुलिस का क्रूरतम रूप आदि सम्यायें जीवंतता के साथ रूपायित हुई है। अप्पाराव से प्रेरित होकर काल्लकूरि नारायणराव का 'चिंतामणि', 'वर विक्रममु' नाटक लिखा गया।

दादाजु पुंडरीकाक्षुडु का ' गांधी विजयमु, पांचाली पराभवमु, ' ग्रथि सुब्बारायुडु का 'आंध्रमाता', दोणराजु सीता रामाराव का 'आन्ध्र पताकम', दुब्वूडि रामिरेड्डी का 'कुमराणा'आदि विविध विषय से सम्बन्धि नाटक हैं। तेलुगु के ज्ञानपीठ पुरस्कार से पुरस्कृत श्री विश्वनाथ सत्यनारायण का 'नर्तनशाला',' त्रिशूलम' (दुःखांत), अनार्कली आदि उत्तम नाट्य कृति है। 1929 ई. पनारस गोविदराव ने 'आन्ध्र नाटक कला परिश द' की स्थापना करते हुए 'नाट्यकला' नामक त्रैमाषिक पत्रिका निकाला । 1938 में हरीशचन्द्र चटर्जी ने वेलूरि चन्द्रशेखर की 'कांचनमाला' का प्रदर्शन सशकत रूप में कराया। 'आन्ध्र नाटक कला परिश द' के द्वारा प्रोत्साहित नाटक लेखक एवं अभिनय कार्यकर्ताओं ने नाटक में खूब प्रयोग किए। नाटकों में बालचाल की भाषा के साथ ही आचलिकता ने भी प्रवेश पाया। नैतिक नाटकों में, 'भाग्य रेखा' (कोपेल्ला वेंकटराव), 'वेन्नेला' (चाँदनी) तथा मनोवैज्ञानिक नाटकों में 'आत्मवंचना' (बुच्चिबाबु), 'कप्पलु' 'भयम' 'एन0जी0ओ0 (आत्रेय) नाटक खूब पसंद किए गये। श्री त्रिपुरनेनि रामशास्त्री का 'शंभूक बध' 'जाति',आंकचर्ला गोपालराव का 'हिरण्यकशिपुडु', गुडिपाटि वेंकटा चलम की 'सावित्री', जी0वी कृष्णराव का भिक्षापात्र' आदि उल्लेखनीय धार्मिक एवं पौराणिक तेलुगु नाटक है।

जमींदारों और किसानों के बीच संघर्स को पद्मश्री बोयि भीमन्ना ने 'पालेरू', 'कूलिराजु', 'आदि नाटकों में चित्रित किया है। तेलुगु के जासूसी नाटकों में पी0 श्रीराम मर्ति की 'फणि' और 'कालरात्रि' प्रसिद्ध है तो सुब्बाराव की शेशनआरा', 'राणाप्रताप', 'शशांक', पिंगलि की 'जेबुन्निसा' 'विद्याराणी', 'ना रजु' आदि उल्लेखनीय साहित्यिक धरोहर है। इस

प्रकार मात्र 50 से 60 वर्षो मे ही 3000 से भी अधिक विविधताओं से भी तेलुगु नाट्य-रचना को देख्कार उसकी प्रगति का अनुमान लगाया जा सकता है। नाटकों के मापध्यम से समाज सुधार को लक्ष्य बनाकर वीरेशलिंगम पंतुलु ने 'चतत्कार रत्नावली' (कामेडी आफ एर्रर्स' का अनुवाद) 'विवेक दीपिका-, 'प्रह्लाद' 'दक्षिण गोग्रहण', 'हरिश्चन्द्र', 'तिर्थ ग्विद्वन्महासभा', 'महारण्य पुरधिपत्युमु' आदि नाटाकों को अपना हथियार बनाया। अतः तेलुगु नाटकों में विविधता को और उसके उज्जवल भविष्य की अपेक्षा की जा सकती है।

तेलुगु एकांकी-

तेलुगु साहित्य में नाटकों का सूत्रपात संस्कृत से हुआ तथा एकांकी का विकास अंगेजी के ''व्दम ।बज च्संल'' से हुआ। सन् 1912 में 'ड्रामास इन सिविक्स' ग्रन्थ में कवि सर्वारायुडु की कृति 'गा्रम कचेरी' को स्थान मिला। इसके बाद 'भारती' , शारदा' आदि पत्रिकाओं द्वारा कई एकांकी प्रकाशित हुए। पाश्चात्य नाटककार इब्सन के सुधारात्मक नाटकों के तर्ज पर तेलुगु में देशी कविता मंडली के द्वारा पी0वी0 राजमन्नार के 15 नाटकों (राजमन्नार नाटिकाएँ) का प्रकाशन हुआ। इसके बाद तेलुगु एकांकियों ने भी जोर पकड़ा तो कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

तेलुगु की प्रगतिशील एकांकियाँ गुडिपाटि वेंकटाचलम की 'भानुमती' 'नरसिंहावतारमु', 'सावित्री आदि उल्लेखनीय है। श्रीपाद सुब्रह्मण शास्त्री की 'रूपिकलु' (एंकांकी) दो संग्रहों में (कलम पोटु', 'टी पाटीं') प्रकाशित हुई। विश्वनाथ कविराजु का 'लेता विडाकुलु', 'डोंकलो श राबु', मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री ने 'मोक्कुश डि', चिंता दीक्षितलु का 'दीक्षितुलु की एकांकियां' (श्रीकृष्णडु अहल्या', 'जटायुवु', 'दशहरा दिब्बा', 'मानवुडु', 'वरूधिनी') आदि महत्वपूर्ण है।

हास्य एकांकियों में 'कचटतपलु' 'एप्पडू इंते' (भमिडिपाटि कामेश्वर राव) 'कांतम', (मुनिमाणिक्यम नरसिंहराव), 'एंकि-नायुडु बावा 'बुच्चम्मा गिरीशम' गुरजाड़ा अप्पाराव के नाट्यपात्रों पर आधारित एकांकी सुब्बाराव द्वारा लिखे गये।

मल्लादि वेंकटकृष्णशर्या ने 'सुरभि नाटक संस्था' हेतु कई एकांकियाँ लिखी,अतः उन्हें नाटक समाज ने 'आस्थान कवि' (दरबारी कवि) की उपाधि द्वारा सम्मानित किया। उस समय के एकांकी में लेखक 'बिना स्त्री पात्रों की एकांकी' लिखा करते थे। इसी वाक्य को व्यंग्य बनाकर वेंकट कृष्ण ने एकांकी लिखा था। इसी समय ऐतिहासिक एकांकिया भी लिखे गये । प्रमुख ऐतिहासिक एकांकी हैं- आंकचर्ल गोपालराव की 'मल्लमदेवी उसुरू' मारेमंडा रामाराव की 'नैवेद्यम', 'प्रतीकाराम', जी0वी0 कृष्णाराव की 'तोलुबोम्मलु', नार्ल वेंकटश्वर राव का 'कोत्तगुड्डा' आदि।

तेलुगु एंकाकीकारों ने अन्य भाषाओं से भी एकांकियों को रूपांतरित किया। प्रमुख अनुदित एकांकी हैं - 'चेप्पुडु माटलु' (कन्नड़ से - तिरूमल रामचंद्र), 'तीरनि बाकी' (मलयालम से - पुट्पर्ति नारायणाचार्युलु), 'नवनाटिकलु' (तमिल से श्रीवास्तव) आदि। इस प्रकार एकांकी, गीत नाटक, नाटक, लघुनाटक, संगीत रूपक आकद विविधमुखी नाट्य रचनासें प्रचुर मात्रा में की गयी।

गेय नाटक- तल्लावर्झल शिशंकर शास्त्री द्वारा सन् 1933 में 'पद्मावती चरण-चरण चक्रवर्ती'? नाम से गेय नाटक जयदेव के गीत गोविंद के आधार पर लिखा गया। इसके बाद तो इनकी प्रेरणा से कई गेय नाटककार (सी.नारायण रेड्डी, वाविलाला सोमयाजुलु, पापु रेड्डी, एव.वी. जोगाराव, बोयि भीमन्ना, मल्लवरमु विश्वेश्वर राव आदि) उभरे । डॉ. सी. नारायण रेड्डी का 'रामप्पा' संगीत रूपक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सराह गया, इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

रेडियो नाटक - तेलुगु साहित्य में रेडियो नाटक की समृद्ध परम्परा रहीं रेडियो नाटक के क्षेत्र में श्री मुट्टुकृष्णा की 'अनारकली' सर्वप्रथम है। कपिल काशीपति की 'पिंगलि सूरन्ना', 'कवितायज्ञमु', 'शिलक्षरमु;', राजगुरूवु', 'प्रतिष्ठानमु' आदि महत्पूर्ण रेडियो नाटक है। देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री की 'शर्मिष्ठा' संग्रह (गौतमी', 'वेणुकुंजम', 'एड़ादि पोडुगुना', 'यमुना बिहारी') 'धनुरदासु' संग्रह ('सायुज्यमु', 'गुड्डु', 'श्पि क्षेत्रय्या', 'धनुरदासु' आदि) पाठकों ने खूब पंसद किए। मुनिमाणिक्यं नरसिंहराव का 'करूपुराजुल्लो कांतमम्मा', 'इंटिलो ब्रह्मराक्षसी' (घर में ब्रह्मराक्षसी), 'राजबंदी','मूटल दोंगा', ' (गडिडयों का चोर), ' पिदुश कुडु' आदि उल्लेखनीय हास्य रेडियो नाटक है। प्रगतिवादी लेखक श्री श्री का रेडियो नाटक - 'चतुरस्त्रम', 'मरोप्रपंचमु', 'अतंरपात्रा' 'गुमास्ता कला', 'गणेश', 'ओंटरिबावि', 'भूताल कोलिमि', ग्रामफोन रिकार्डुल तिरूगुबाटु' आदि। इनके अतिरिक्त गोरा शास्त्री (आशा खरीदु अणा),गोपीचंद (तत्वमसि) आदि का नाम भी सफल रेडियो नाटककार के रूप में लिया जाता है। आकाशवाणी केन्द्र में 'अन्नय्या' न्यापति राघवराव', 'अक्कय्या न्यापति कामेश्वरी के नाम से प्रसिक्र है। इन्होंने बाल हास्य नाटाकों, बाल पौराणिक नाटकों की रचना की। 'नागुलु', 'मुडु पेल्लिलल्लु' आदि गेय नाटक इन्ही के हैं। अन्य प्रमुख बाल नाट्यकारों के ना उल्लेखनीय हैं- वी0वी0 नरसिंहराव जी (पूलावाललु', 'बाललललोकम', 'उत्तराल संतय्या', 'ऋतुराणी', 'प्रियदर्शिनी',), 'इल्लिंदल सरस्वती (बाल वीरूलु', 'सहवास दोश मु, 'पटाटोमप', 'बोम्मल पेल्लि', 'अपकारिकि उपकारमु',) के सभा, एडिदा रामेश्वर राव, नार्ल चिरंजीवी, मुद्दिपट्ला वेंकटराव, सोमंचि रामम्, पिल्ला सुब्बाराव शास्त्री, मल्लपल्लि डमामहैश्वर राव, उन्नव सेतु माधव राव, विश्व प्रसाद, प्रयाग नरसिंह शास्त्री, विंजमूरि शिव रामाराव आदि ने प्रचुरता के साथ बाल नाट्य रूपकों की सर्जना की। तेलुगु नाट्यपर' नाटकांतम हि साहित्यम ' की सूक्ति पूर्णतः चीरतार्थ होती है। एम0 रजनी के आलोचनात्मक ग्रन्थ 'तेलुगु मेंबाकल नाटिकलु' (सन 1982) में 165 प्रकाशित नाटकों की समीक्षा की गयी है। नाट्य साहित्य पर श्री राम अप्पाराव का 'आंध्र नाटक किकासमु' महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इस प्रकार लेखकों की लेखनी सतत् चलायमान है। अतः नाट्य साहित्य की प्रगति निश्चित है।

7.6 तेलुगु की पत्रिकाएँ एवं समीक्षा-

समाज की गतिविधियों का समाचार देना तथा उसकी व्याख्या करना पत्रकारिता का कार्य होता है। पत्रकारिता के कई सोपान है- दैनिक, 'पीरियाडिकल्स', 'साप्ताहिक'द्व 'पाक्षिक', 'मासिक', 'द्वैमासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक, वार्षिक आदि।

तेलुगु का प्रथम दैनिक 'कर्नाटक क्रानिकल (1932 ई.) को माना जाता है। इसके पूर्व इसाई धर्म प्रचारकों द्वारा 'सत्यदूत' (सन् 1835) तेलुगु में प्रकाशित हो चुका था। किंतु कुछ विद्वान सन् 1838 में प्रकाशित पत्रिका 'वृत्तांतिनि'को मानते हैं जो मंडिगल वेंकट राय शास्त्री द्वारा संपादित होता था। सन् 1842 में 'वर्तमान तरंगिणि' पत्रिका में काव्य, प्रबंध शतकों की सूची आदि पुव्वाड़ा वेंकटराव द्वारा संपादित होने लगा। सन् 1848 में 'दिनवर्तमान' 'हितवादी' में साहित्यिक लेखों का प्रकाशन हुआ। सन् 1862 में 'सृजन रंजनी', 'श्री चक्षिणि', 'तत्वबोधिनी', 'आंध्र भाषा संजीवनी' आदि पत्रिकाओं में खूग लेख , साहित्य आदि प्रकाशित हुए।

सन् 1872 में 'पुरूषार्थ प्रदायिनी' (उमा रंगनायकुलु संपादक) पत्र में मुहावरे, लोकोक्तियों, प्राचीन सूक्तियों आदि का प्रकाशन हुआ। तेलुगु भाषा के विकास हेतु, 'स्वर्धम प्रकाशिनी', 'सुधिरंजनी', 'सकल विद्याभिवर्धिनी' आदि का प्रकाशन हुआ। सन् 1874 में विवेक वर्धिनी' (कंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु), श्री चिंतामणि' 'सत्यवादी', 'सतहितबोधिनी' आदि पत्रिकाओं द्वारा तेलुगु साहित्य को चहुओर प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त 'जन विनोदनी', 'हिंदू सुंदरी' (1902), 'वंदेमातरम् (1970), तेलुगु' (गिडुगु राममूर्ति पंतुलु द्वारा संपादित), 'बज्रायुधम्' (श्रीपाद कृष्णमूर्ति) 'मनोरमा', देशमता' (राजमहैन्द्रवरम), आंध्र पत्रिका (1908 काशी नाथुनि नागेश्वरराव) द्वारा संपादित की गयी। 'आन्ध्र भारती' (1910), 'आंध्र साहित्य परिपुष्पत्रिकका' (1912), 'त्रिलिंग' (1912), 'मुक्त्याला सरस्वती' (1923), आंध्र सर्वस्मम्' 'सारस्वत सर्वस्म्' 1924, 'प्रबुद्धांर्ध', (1924, गिडुगु राममूर्ति) पत्रिकाओं द्वारा विविध साहित्यिक विधाओं का प्रकाशन किया गया। काव्य भाषा के प्रचारार्थ, वज्रायुधम (1925 श्रीपाद कृष्णमूर्ति) रेड्डी राणी' (1924) पत्रिका में रेड्डी राजाओं के शासनकाल की रचनाएँ प्रकाशित हुई।

तेलुगु गद्य के प्रचारार्थ सन् 1923 में 'श्री साधनों 'शारदा' (1922), 'कला' (1924), 'भारती' (1924), 'गोलकोण्डा' (1924 में सुरवरम प्रतापरेड्डी द्वारा), 'आन्ध्र भूति' (1937 में आंड्रशेश गिरि राव द्वारा)', उदयिनी' (1935, द्वैमासिक) 'प्रतिभा', 'वीणा' (1936), 'आंध्र' (1946) आदि पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। पहली कम्युनिस्ट पत्रिका 'प्रभा' (1935) गद्दे लिगय्या ने संपादित की । 'स्वतन्त्र भारत' (1939-42)', जनता' (1948-1950), 'आंध्र प्रभा' (1938) आदि में राष्ट्रप्रेम से पूर्ण रचनाओं, लेखें को प्रकाशित किया जाता था। 'अभ्युदय' (मासिक), 'सत्य साची' (1959) 'संदेशम', (1950,) 'संवेदना' (1965 त्रैमासिा) आदि पत्रिका संपादन अभ्युदय रचनाकारों द्वारा किया गया। 'प्रजाशक्ति 1942, 'विशालांध्रा' (1953, तिरूमल रामचंन्द्र एवं कोदंड रामय्या द्वारा संपादित), 'आंध्र ज्योति (1960 नार्ल वेंकटेश्वर राव) 'आंध्रभूति' (1960, गोरा शास्त्री तथा गज्जल मल्लारेड्डी द्वारा संपादित) आदि पत्रिकाओं ने पत्रिकाओं के इतिहास में क्रांति के परचम लहराये। इन पत्रिकाओं में उपन्यासों तथा अन्य विधाओं का अत्यधिक प्रकाशन हुआ।

राष्ट्रोन्नति का विषय लेकर 'ईनाडु' (1974, ए0बी0 के0 प्रसाद द्वारा संपादित) का प्रकाशन हआ, जो अंतराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठि हुई। 'उदयम' (1984, दासरी नारायणराव द्वारा संपादित पत्रिका) में लघु कथाएँ, कविताएँ आदि खूब प्रकाशित हुई। 'वार्ता; (1996) दैनिक में राजनीतिक, वैज्ञानिक, स्त्री, बच्चों आदि से संबंधित विषयों को प्रकाशित किया जाता है।

अन्य प्रत्रिकाओं में समकालीन विषयों को प्रमुखत के साथ प्रकाशित किया जाता है। 'भारति' (काशीनाथुनि नागेश्वर राव), 'चतुरा', षिपुला' 'इण्डिया टूडे', (मासिक से पाक्षिक साप्ताहिक) पत्रिकाओं ने समाज, धर्म, राजनीति, सांस्कृतिक, साहित्यिक विषयों का प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया। तेलुगु साहित्य को उन्नति के शिखर तक पहुँचाने में पत्रिकाओं के साथ-साथ समीक्षा आदि का भी विशेष योगदान है।

समीक्षा- तेलुगु आलोचना के साथ ही समीक्षा शास्त्र में साहित्य के समस्त अगों पर विस्ृत दृष्किोण के साथ विश्लेषण किया गया। प्रमुख सीक्षकों में हैं- कोराड राकृष्णय्या (सारस्वत व्यासमुलु') काशीभट्ल सुब्बय्या शास्त्री (साहित्य कला), मुतिमाणिक्यम नरसिंहा राव (साहित्य व्यासमु), शिष्टा रामकृष्णशास्त्री (विमर्श व्यासमुलु), राल्लपल्लि अनंत कृष्ण शर्मा (सारस्व तोपन्या समुलु), जोन्नल गडु सत्यनारायण मूर्ति (साहित्य विमर्शन), वेमूरि वेंकटरामनाथम (सौन्दर्य निबंध, भाषण , आलोचना आदि की संतुलित दृष्टि से व्याख्या की है।

भारतीय एवं यूरोपीय शास्त्रों के तुलनात्मक अध्ययन से प्रभावित होकर कई लेखकों ने समीक्षा की नयी दृष्टि अपनाई। इनमें प्रमुख हैं- पुराणम् सूरिशास्त्री। इनकी 'नाट्योपलमु', 'रूपक रसालम', 'विमर्शाक परिजातमु' आदि महत्वपूर्ण तुलनात्मक समीक्षा कृति है। बुर्रा शैश गिररिराव का 'विमर्शादर्शमु' 1971 ई., गोर्रेपाट वेंक सुब्बय्या का 'अक्षरराभिषेकमु' (1952 ई.) मुहम्मद कासिम खं का 'कथानिका रचना' शोंठि कृष्णमूर्ति का 'कथलु रायटमेला', आदि कहानी विधा से सम्बन्धित समीक्षा कृति है। तेलुगु के वर्ष भर में प्रकाशित 'साहित्य समालोचना' को श्रीवास्तव द्वारा प्रकाशित किया जाता है।

सन् 1919 में कोराड रामकृष्णय्या का 'आन्ध्र भारत कविता विमर्शनमु' में तेलुगु के कवित्रय (नन्नय-'तिक्कना, एर्रना) पर आधारित उत्तम समीक्ष्य कृति है। इनकी 'कालिदासुनि कला प्रतिमलु', दक्षिण देश सारस्वतमुलु' (1949 ई..) भी महत्वपूर्ण कृति है, जो तेलुगु समीक्षा शास्त्र की शोभा बढ़ाते हैं।

7.7 तेलुगु निबंध का विकास-

निबंध- तेलुगु निबंध का आरम्भ कुछ लेखकों ने 19 वीं शती से शुरू किया। आरम्भ में इन निबंध तथा लेखों का उद्धेश्य किसी अन्य लेखक की कृति की आलोचना करना रहा। इन आलोचनात्मक निबन्धों के साथ ही निबन्ध जलेखन की शुरूआत होती है। प्रायः सीमारहित बड़े-बड़े लेख जाते थे। ऐसी स्थिति में लेखक निजी विषयों तक पहुँच कर मर्यादाहीन भी हो जाता है।

निबंध का दूसरा पड़ाव समाज -सुधार जैसे विषयों को लेकर लिखे जाने वाले निबंध थे। इन निबन्धों में लम्बे-चौड़े वाक्य, उपमा , रूपक, दृष्टांत आदि की प्रचुरता रहती थी। समाज प्रधान वाक्य विद्वता की पहचान माने जाते थे। प्रायः विद्वानों के वाद-विवादोपरांत निबंध सर्जना होती थी। तेलुगु की अन्य गद्य विधाओं की अपेक्षा निबंध विषय की प्रगति मंथर गति से हो रही थी। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कुछ निबंधों का संक्षिप्त परिचय निम्नांकित हैं

'हितसूचिनी' को तेलुगु का प्रथम निबंध माना जाता है। स्वामिनेनि मुद्दुनरसिंह नायुडु के इस निबंध संकलन को उनके पुत्र ने सन् 1962 में प्रकाशित कराया। इसमें लेखक ने जन- भाषा में, विवरणात्मक शैली के साथ उपेदश प्रधान निबंध लिखे है। नरसिंह नायुडु के बाद सीरेश लिंगम पंतुलु ने समाज सुधार का उद्धेश्य लेकर इस विधा को आगे बढ़ाया। निबंधों का रूप स्थिर करने के साथ ही उसकी मर्यादा स्थापित करने का गुरूभार वीरेशलिंगम ने उठाया। इन्होंने स्त्रियों से सम्बन्धित लेखों को '-सती हित बोधिनी' नाम से प्रकाशित किया। तेलुगु के कुछ प्रसिद्ध निबंधकारों का उल्लेख निम्मनतः किया गया है- पिंगलि लक्ष्मीकान्तम् (गौतमी व्यासलु'- 1952 ई..) गुरूजाड़ा अप्पाराव ('व्यास चन्द्रिका'- 1953 ई.0), तिरूपति वेंकट कविद्वय (कथलु गाथलु ' 1949 ई.) आदि। निबंध विधा के क्षेत्र में तेलुगु साहित्य आधिक विकास नहीं कर पाया है। किंतु पत्र-पत्रिकाओं में छपने वाले नियमित लेख निबंध की कमी का आभास नपहीं होने देते। धीरे-धीरे इस विधा की ओर निबंधकारों की रूचि बढ़ती जा रही है, अतः अधिक निबंध लेखन की अपेक्षा की जा सकती है।

भाषा-विज्ञान, व्याकरण, कोश - तेलुगु गद्य के विकास में भाषा-विज्ञान, व्याकरण आदि के नियमन ने भी महत्वपूर्ण योग दिया। 'अमुद्रित ग्रंथ चिन्तामणि' में नाटकों की भाषा, लिपि, शब्दों के प्रयोग आदि पर विचार किया जाता था। शब्दद्वय विचार, रेफ द्वय आदि विषयों को लेकर वाविवाल वासुदेव शास्त्री ने कई लेख लिखे (संस्कृत, अंग्रेजी, तेलुगु भाषा के ज्ञाता वासुदेव शास्त्री तेलुगु के उद्भव तथा विकास पर प्रकाश डाला। टी0 एम0 शेश गिरि शास्त्री का 'अर्द्धानुस्वार तत्वमु' (1893 ई.), 'आन्ध्र शब्दतत्वमु' आदि में अनुस्वार तथा द्रविड़ कुल की भाषाओं का विज्ञान सम्मत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।)

तेलुगु कोश निर्माण के क्षेत्र में चार्ल्स फिलिप ब्राउन का योगदान अविस्मरणीय है। 1853 ई. इन्होंने तेलुगु व्याकरण लिखा। तेलुगु और इतालवी भाषा का तुलनात्मक व्याकरण उल्लेखनीय है। ब्राउन का 'इंग्लिश तेलुगु निघंठु' (1845 ई.), तेलुगु अंग्रेजी कोश 'महत्वपूर्ण है। 1955 ई. में विदेश वापस जाकर भी कोश निर्माण कार्य जारी रखा। ''ए डिक्शनी आफ दी मिक्स्ड डायलेक्ट्स एण्ड फारेन वडर्स यूज्य इन तेलुगु'' में फारसी, तेलुगु, अंग्रेजी, बोल चाल आदि शब्दें को स्थान दिया। इन्होंने न्यायालय से सम्बन्धित छोटे-छोटे कोश का भी निर्माण किया। परवस्तु चिन्नय सूरि का बाल-व्याकरण' (1855 ई.) तथा बहुनपल्लि सीतारामाचार्युलु का 'प्रौढ़ व्याकरण;, त्रिलिंग लक्षण शेश मु' (1885 ई.) शब्द रत्नाकर' (1885) उल्लेखनीय व्याकरण ग्रन्थ है।

वीरेशलिंगम पंततुलु ने शब्दों की सूची मूल अंग्रजी शब्द के साथ अपनी पुस्तकों के अंत में दिया है। धीरे-धीरे अनेक वैज्ञानिक विषयों पर ग्रंथ लिख जोने लगे। 1821 ई. में 'उपयुक्त ग्रंथ करण सथा' का प्रकाशन वैज्ञानिक विषयों की जानकारी के लिए हुआ। वीरेशंलिगम पंतुलु का 'पदार्थ विज्ञान शास्त्र' (सन् 1878), शरीरशास्त्र' (सन् 1888 ई.' देहारोग्य धर्म बोधिनी' (1889 ई.)'ज्योतिष शास्त्र संग्रह' (1895) 'जन्तु स्वभाव चरित्र' (1896 ई.) आदि लेखक के परिष्कृत वैज्ञानिक दृष्टिकोण का परिचायक है।

रेंटाल वेंकट सुब्बाराव ने 'पक्षी शास्त्र' ग्रन्थ के द्वारा जीवविज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया। पी.सूर्यनारायण का 'कृषि चन्द्रिका' (1894 ई.0) धनकोटि राजू का 'आरोग्य शास्त्र' (1889 ई.) आदि के अतिरिक्त शिलालेख, ताम्र-पत्र, मुद्रादि का शोध एवं संकलन और उनका प्रकाशन किया गया। जिसके आधार पर कई रचनायें हुई।

7.8 तेलुगु-साहित्य में चलचित्र गीत-लेखन

ग्यारहवीं शती में नन्नया के मार्गदेशी परम्परा के साथ तेलुगु को संस्कृत साहित्य के समान महत्व मिला। इसकेबाद तेलुगु साहित्य रचना ने विविध आयामों को प्राप्त किया। इनमें प्रमुख हैं- महाभारत-युग, पुराण-युग, सामगान -युग, गंधर्व-युग, आख्यान-युग, ध्रुवगान-युग, सभा साप्रदान-युग, हरिकथा युग, देश-भाषा, संकीर्तन-युग, यक्षगान-युग, धातु कल्पना, परिणाम युग आदि।

चलचित्र गीत का विकास - सन् 1931 में इंपीरियल कंपनी द्वारा एच0एम. रेड्डी के निर्देशन में पहली 'टॉकी चलचित्र 'भक्त प्रह्लाद' का निर्माण हुआ। डॉ. पैडिपाला सत्यनारायण रेड्डी के 'तेलुगु चलिचित्र गीत' को सर्वप्रथम चित्रगीत कृति मानी जाती है। तेलुगु चलचिख्गीत की विकास यात्रा भक्ति से शुरू होकर सामाजिक समस्याओं तक विस्तार पाता है। तेलुगु का प्रथम सामाजिक चलचित्र गीत है- गूडवल्लि रामब्रह्म का 'मालपल्ली' (सन् 1938)। समुद्राला राधवाचारी की 'गृहलक्ष्मी', कोसराजु राघवय्या चौधरी का 'रैतुबिड्डा', पिंगलि नागेन्द्रराव का 'भल्लेपेल्लि' आदि सफल चलचित्र है।

सन् 1931-37 के चलचित्र रचना काल को 'अरूणोदय-'युग' कहा जाता है। इस काल में 'रामदासु', 'सावित्री' सीता कल्याणम' संपूर्ण रामायणम' आदि चलचित्रों में कीर्तन साहित्य का उपयोग किया गया था। सन् 1938-50 का काल 'भावोदय' काल पूर्णतः सामाजिक कुरीतियों को दूर करने वाले चलचित्रों से भरा हुआ है। देश -भक्ति के गीतों की चलचित्रों में उपयोग किया जाने लगा था। देश-भक्ति के गीतों को चलचित्रों में उपयोग किय जाने लगा था। श्री श्री का 'महाप्रस्थानम' गीत, 'कालचक्रम' चित्र गीत के नाम से प्रस्तुत हुआ। श्री री अपने 'पाडवोयी भारतीयुड़ा में 'प्रेमय जनन मरण लीला को प्रथम चलचित्र गीत मानते हैं। छठे दशक में चलचित्र गीत को काव्य-गौरव मिला। देवलु-पल्लि कृष्णशास्त्री के 'मल्लेश्वरी;' चित्रगीत जन-जन के जिह्वा और हृदय में बस गयी थी। 'निर्दोषी' (श्री श्री), 'बीदल पाट्लु' (आरूद्रा),

'आकाशरजु' (विश्वनाथ सत्यनारायण) 'पाताल भैरवी' (पिंगलि) आदि गीत जनता के जिह्वा पर राग छेड़ते हैं।

सन् 1961-70 के गीत साहित्य 'रसोदय' के नाम से जाने जाते हैं। क्योंकि इस काल में चित्र गीत अत्यंत सरस और सुंदर रूप में लिखे गये। कोसराजु के लोक पदों ने जनता में खूब धूम मचाई। डॉ. सी0 नारायण रेड्डी ने दाशरची व गुलेबकावली के कथा' वाग्दान' पर चित्रगीत लिखा तथा श्री श्री का 'वेलुगु नीडगु' चलचित्र के लिए लिखे गीत खूब पसन्द किए गये। देबुलपल्लि द्वारा 'सुखदुःखातु' चलचित्र के लिए 'इदि वेन्नेल वेलयनी' गती भावुकता में रसिकों को सराबोर कर देता है। चित्रगीत का 'चंद्रोदय युग ' (सन् 1971-78) प्रेम मय गीतों के लिए जाना जात है। आरूद्रा का 'मुत्यमंता पसुपु मुखमंत छाया', 'दसराबुल्नोडु', 'प्रेमनगर' आदि चलचित्रों के लिए लिखा गया चित्रगती मानवीय आवेगों की सशक्त अभिव्यक्ति प्रतीत होती है। देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री द्वारा 'राजेश्वरी विलास काफी क्लब' हेतु 'ना दारि एड़ारि ना पेरू भिखारी। चित्रगीत लिखा गया। श्री श्री के 'अल्लूरि सीताराम राजु' चलचित्र गीत के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार मिला। ग्रामीण सौंदर्य को अपने चलचित्र में स्थान देने वाले मल्लेमाला का 'नायुडुबाबा गीत जनता ने खूब पसंद किया। जालाअि ने 'प्राण खीदु', 'पल्लेसीमा' गीत लिखे ,जो जनता में खूब लोकप्रिय हुए। राजश्री का 'बुल्लेम्मा बुल्लोहु', 'शिवरंजनी। चलचित्र के लिए लिखें गेय गीत तथा गोपाल कृष्ण द्वारा 'ओ सीता कथा' चलचित्र के लिये लिखे गीत, वेदूरि सुन्दर राममूर्ति के द्वारा ' सिरिसिरिमुव्वा' के गीत लिखे गये। इस काल में गीतों का दीवानापन इतना बढ़ गया कि साहित्यिकता ढूँढ़े से भी नहीं मिलती थी। ऐसे में बालसुब्रह्मण्यम के गीतापालपन से वैविध्य का प्रवेश हुआ जिससे यह काल चलचित्र युग का स्वर्णकाल बन गया।

डॉ. पेडिपाला ने सन् 1979-91 तक के चलचित्र काल को 'अस्तव्यस्त काल' कहा है। मादाला रंगाराव द्वारा क्रांतिकारी गीतों का दौर शुरू हुआ। (विप्लवशंखम,' नवोदयम, प्रजाशक्ति', एर्रमल्लेतु' नवोदयम, प्रजाशक्ति)। इन क्रांतिकारी भावों से भ्रष्टाचार तथा कुटिल राजनीति के विरूद्ध विद्रोह का स्वर फूका गया। सिखिन्नेला सीताराम शास्त्री, वेटूरि, साहिति, वेन्नेलकंटि, जोन्नविन्तुनला, भुवनचन्द्र आदि ने सुर प्रधान गीत रचना की। चलचित्र गीत में परिवर्तन का दौर सन 1992 से सामाजिक प्रयोजन की ओर मुड़ गयां इस दौर के प्रमुख चल'- चित्र गीतकार है- रविकिरण, भास्कर भट्ला रविकुमार, चंट्रबोस, आदि इनके गीतों में सामाजिक, सांस्कृतिक राजनीतिक तथा आर्थिक अंशों से परिपूर्ण विषयों की प्रधानता रही। समकालीन समाज में व्याप्त असमानताओं की गीतकारों ने अपने गीतों में जीवन्ता के साथ स्थान दिया।

7.9 तेलुगु का अवधान साहित्य-

साहित्य के क्षेत्र में 'गृह कवियों' की संख्या हजार है तो 'सभा-कवि' सौ-पचास से अधिक नहीं मिलते। अवधान विधा तेलुगु तथा संस्कृत के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं में

न के बराबर ही है। अवधान का अर्थ है- 'चित्त की विशेष एकाग्रता' अथवा 'चित्त को एक ही समय में अनेक अंशों पर केन्द्रित करना'। गृह कवि, घर में बैठकर सोच-समझकर ग्रंथ कोशादि की सहायता से जब साहित्य सर्जना करे तो वह सामान्य काव्य सर्जक होते हैं। किंतु किसी सभा में 'आशुरूप' में छंदोबद्ध काव्य बोलने वाले कवि जब प्रश्न कर्त्ताओं के नाम प्रश्न सहित बताये तथा कई दिनों बाद भी स्वयं के पद्य को अचानक पूछे जाने पर बताये तो वे 'अवधानी होते हैं।

आन्ध्र प्रदेश में 'अवधान'विधा 13 वीं , 14वीं शती से ही प्रचलित है। अद्यतन अवधानी तिरूपति'-वेंकट कवियों द्वारा इस विधा को चार चाँद लगाये गये हैं। अवधान में रंजन ही नहीं अपितु उद्बोधन की भी क्षमता है। 1285 ई. से तेलुगु अवधान के अस्तित्व का पता चला है । जक्कन तात पे दैय्या ने (सन् 1285 में) अपनी कृति 'विक्रमार्कचरित्र में स्वयं को 'अनेकावधानों में दक्ष कहा था। सन् 1350 ई. के प्रसिद्ध नाचन सोमना 'अष्टावधान' में सिद्धहस्त थे। 15 वीं शती के रामराजभूषण (भट्टमूर्ति') ने स्वयं को 'सकल भाषा विशेष निरूपमानावधान शारदामूर्ति' कहा था। गणपरपु वेंकट कवि (1620-1660) 20 प्रकार के 'अवधान कार्यों' में निपुण थे। अवधान विधा के चार पड़ाव है। आरंभ (सन् 1050 से 1850 तक), विकास (1850 से 1950 ई.) स्थिर युग (1950 से 1985तक) उत्थान युग (1985 से अब तक) आदि । अवधान मुख्यतः 21 प्रकार के साहित्यिक तथा चार प्रकार के साहित्येहर अवधान है। तथा पाँच धारणावधान, तेरह सांकेतिक संबंधी अवधान, चार वैज्ञानिक, पाँच कला संबंधी अवधान है, इन अवधानों को निम्नतः विश्लेषित किया जा सकता है-

क- साहित्यिक अवधान (21)

1. अष्टावधान
2. दशावधान
3. अष्टदशावधान
4. शतावधान?
5. सहस्त्रावधान
6. द्विसहस्त्रावधान
7. पंच सहस्त्रावधान
8. नवरस नवाधान
9. अलंकार अष्टावधान
10. साहित्य प्रक्रियावधान
11. वचन कविता प्रधान
12. घटिका शत ग्रंथ निर्माण
13. समय लेखिनी
14. शतलेखिनी पद्य संधान निर्माण
15. चतुर्विध कवित्व विद्यावधान
16. अष्टभाषा व्यस्ताक्षरावधान

17. हास्यावधान
18. नवघंटा लेखन
19. काव्यावधान
20. अक्षरावधान
21. धारणावधान आदि।

ख- साहित्येतर अवधान (04)-

1. धारण सम्बन्धी अवधान
2. सांकेतिक सम्बन्धी अवधान
3. शास्त्र सम्बन्धी अवधान
4. कला सम्बन्धी अवधान

ग- धारण संबन्धी अवधान (05)-

1. रामायणावधान
2. भगवद्गीतावधान
3. शतकसशावधान
4. सहस्त्रनामावधान
5. शब्दावधान

घ- सांकेतिक सम्बन्धी अवधान (13)-

1. नेत्रावधान
2. पुष्पावधान
3. शुष्कावधान
4. तृणावधान
5. गमनावधान
6. खड्गावधान
7. भूरकसावधान
8. भुजावधान
9. हस्तावधान
10. अंगुष्टावधान
11. घंटावधान
12. चक्रावधान
13. अक्षस्मुष्टिकावधान

ङ- वैज्ञानिक अवधान (04)-

1. गणितावधान
2. ज्योतिषावधान
3. वैज्ञाष्टावधान

4. अक्षरगणितावधान

च- कला सम्बन्धी अवधान (05)-

1. नाट्यावधान
2. संगीताष्टावधान
3. चित्रकलाष्टावधान
4. ध्वन्यनुकरणावधान
5. चतुरंगावधान आदि।

अवधान व्यक्ति विशेष की बौद्धिक प्रतिभा की होती है। प्राचीन अष्टावधानी निम्न आठ प्रक्रियाओं से गुजरते थे।

1. व्यस्ताक्षरी - पद्य के कुछ वर्णों के व्यस्त रूप में टुकड़े-टुकड़े करने के बाद उनको क्रम में रखकर अवपधानी को बताने के लिए कहा जाता है।
2. गणना- अवधानी की पीठ पर सुपारी रूक-रूक कर कई बार मारते हैं। और अंत में उनकी संख्या बताने को कहा जाता है।
3. आरोहण-अवरोहण- पद्य को अरोहण या अवरोहण में बताना पडता है।
4. लेखन-कुशलता – प्रश्नकर्त्ताओं की माँग के अनुसार पद्य को लिखना पड़ता था।
5. अग्र पद्य ग्रहणभिक्ति- किसी भी काव्य में को पद्य कहने पर तुरंत पूर्व पद्य को अवधानी बताता है।
6. अनवलोकित शारिकाभिलेखन रीति- कलम हिलने - डुलने की रीति देखकर पढ़ना या स्पर्श रेखाओं के अनुरूप अक्षर या पद को बताना पड़ता हैं ।
7. समस्या- किसी समस्या से सम्बन्धित प्रश्न पूछने उत्तर देना पड़ता है।
8. समुदग्रनेक्षित चतुरंग बलकेलि- आंखे बंद करके एक से अधिक व्यक्तियों शतरंज खेलना पड़ता है।

वर्तमान समय में अवधानी को इन आठ अंशों से बढ़ना पड़ता है।

1. कविता निर्माण
2. व्यस्ताक्षरी
3. निषेधाक्षरी
4. समस्यपूर्ति
5. चतुरंग विनोद
6. ताश
7. वार्तालाप
8. पुष्प गणन।

वर्तमान तेलुगु अवधान में 50 के लगभग अंश शामिल है। अवधानी को कई बार फिल्मों के शबद अथवा अंग्रेजी के शब्द देकर उनसे पद्य रचना करवाया जाता है। अवधानी को शास्त्रार्थ करने हेतु विविध विषयों पर पूर्ण अधिकार रचना पड़ता है। इस प्रकार अवधान में साहित्येक एवं

साहित्येकर अंश पूर्णतः विद्यामान रहते हैं। श्री सी.वी0 सुब्बन्ना प्रसिद्ध अष्टावधानी तथा शतावधानी थे। सहस्त्रावधानी को हजारों प्रश्नकर्त्ता के हजार प्रश्नों का हजार पद्य निर्माण पकरना पड़ता है। श्रीमती एम0 के प्रभावती एवं कुलशेखराचार्य प्रसिद्ध अष्टावधानी तथा शतावधानी थे। सहस्त्रावधानी को हजानों प्रश्नकर्त्ता के हजार प्रश्नों का हजार पद्य निर्माण करना पड़ता है। श्रीमती एम. के प्रभावती एवं कुलशेखराचार्य प्रसिद्ध अष्टावपधानी है। नाग फणि शर्मा, गरिकपाटि नरसिंहराव, मेडसानि मोहन आदि सहस्त्रावधानी के रूप में प्रसिद्ध हैं इस प्रकार तेलुगु साहित्य अपनी इस मौलिक विधा पर आत्ममुग्ध हों सकता है। क्योंकि अन्य भाषाओं में यह परंपरा न के बराबर है।

7.10 सारांश

एम0एच0एल0 204 की सातवीं इकाई तेलुगु गद्य साहित्य पर केन्द्रित है। इस इकाई का आपनें अध्ययन कर लिया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि –

- तेलुगु कहानी भारतीय साहित्य की समृद्ध कहानी परम्परा को अपने में समेटे हुये है। भाव पक्ष हो या विचार पक्ष सभी दृष्टियों से तेलुगु कहानी समृद्ध है।
- तेलुगु उपन्यास के विविध पक्ष है। आरम्भ युग, विकास युग, मनोवैज्ञानिक युग से होते हुये यह समकालीन युग तक की यात्रा कर चुका है। कुल मिलाकर तेलुगु उपन्यास की परम्परा अत्यन्त समृद्ध है।
- तेलुगु नाटक एवं एकांकी साहित्य भी पर्याप्त समृद्ध है। अपनी सामाजिक चेतना और रंगमंचीय विधान के कारण तेलुगु नाटक पर्याप्त समृद्ध है।
- तेलुगु साहित्य के विकास में पत्र पत्रिकाओं का विशिष्ट योगदान रहा है। इस दृष्टि से तेलुगु की पत्र पत्रिकायें अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

7.11 शब्दावली

- अग्रगण्य - सबसे आगे रहने वाला
- अनिर्वचनीय - जिसकी व्याख्या न की जा सके
- शोश ण – अत्याचार
- विद्रोह – रूढियों से मुक्ति का प्रयास
- क्षेत्रीयता – अपने क्षेत्र के प्रति विशेष राग
- वैश्वीकरण – चिन्तन की दृष्टि का वैश्विक सन्दर्भ

7.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

तेलुगु साहित्य का इतिहास – प्रो. रंजनम, के लक्ष्मी

सहस्र वर्षों का तेलुगु साहित्य - सम्पादक – आचार्य लक्ष्मीप्रसाद, यार्लगड्डा

7.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. तेलुगु कहानी की विकास परम्परा को रेखांकित कीजिये।
2. तेलुगु नाटक साहित्य की विशेष ताओं का परिचय दीजिये।
3. तेलुगु की प्रमुख पत्र पत्रिकाओं का विवरण दीजिये।